BIHAR YOGA

दमा, मधुमेह और योग

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

दमा, मधुमेह और योग

दमा, मधुमेह और योग

डॉ. स्वामी शंकरदेवानन्द सरस्वती

प्रत्यक्ष मार्गदर्शन

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती



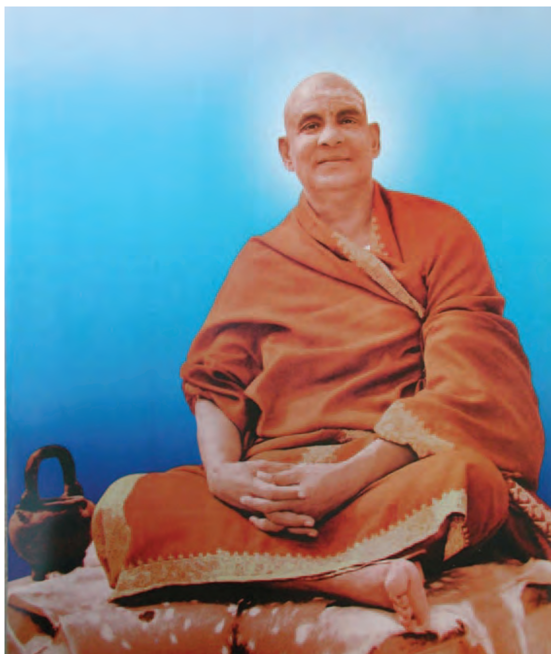
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

बिहार योग विद्यालय द्वारा — *प्रथम प्रकाशन 1980*
द्वितीय संस्करण 1992
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा — *संशोधित संस्करण 2001*
पुनर्मुद्रण 2005, 2014

ISBN: 978-81-85787-48-0

प्रकाशक एवं वितरक—योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट,
गंगा दर्शन, मुंगेर, बिहार, भारत
मुद्रक—भार्गव ऑफसेट्स,
त्रिलोचन, वाराणसी

वेबसाइट: www.biharyoga.net
www.rikhiapeeth.net



सविनय समर्पण

स्वामी शिवानन्द सरस्वती के चरणों में
जिन्होंने स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को योग के रहस्यों की शिक्षा दी



नमो नारायण

योगविद्या भारतवर्ष की सबसे प्राचीन संस्कृति और जीवन-पद्धति है तथा इसी विद्या के बल पर भारतवासी प्राचीनकाल में सुखी, समृद्ध और स्वस्थ जीवन बिताते थे। जब से भारत में योग विद्या का ह्रास हुआ, तभी से भारतवासी गरीब, दु:खी और अस्वस्थ हैं। पूजा-पाठ, धर्म-कर्म से शान्ति मिलती है और योगाभ्यास से धन-धान्य, समृद्धि और स्वास्थ्य। भारत में सुख, समृद्धि, शक्ति और स्वास्थ्य के लिए हर व्यक्ति को योगाभ्यास करना चाहिए।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
रिखियापीठ, 2005

विषय सूची

दमा एवं मधुमेह पर शोध

परिशिष्ट

दमा और योग

1

व्यक्तिगत अनुभव

आज तक आधुनिक चिकित्सा विज्ञान भी इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाया है कि दमा रोग का मूल कारण क्या है। हम यहाँ पर लेखक के बचपन के कुछ अनुभवों को प्रस्तुत कर रहे हैं, जो हमारे विचार से उनके रोग के मुख्य कारण बने। यह आशा की जाती है कि पाठक स्वयं अपने अनुभवों से अपने रोग के कारणों की खोज करें। इस दृष्टान्त को दमा के एक पूर्व-रोगी की दृष्टि से देखा जाए, जो अब एक चिकित्सक हैं और उपचार की अन्य विधियों के अध्ययन में रत हैं।

प्रारम्भ

शैशवावस्था में माता-पिता दोनों ही आर्थिक तंगी के कारण मुझे छोड़कर नौकरी के लिए चले जाया करते थे। परिणामस्वरूप मेरी देखभाल के लिए धाय रखना आवश्यक हो गया। हम दोनों के बीच पहले ही दिन भोजन, सोने के समय और अन्य अनेक चीजों के कारण असहमति शुरू हो गयी।

अनेक घटनाओं में से एक घटना विशेष रूप से मेरे मन में उभरती है। भोजन के सम्बन्ध में हम दोनों के बीच जो असहमति थी, उसका समाधान मुझे जबरदस्ती खिलाकर निकाला गया, परिणामस्वरूप मुझे वमन हो गया। इस घटना का कुप्रभाव मुझ पर पड़ा और खाद्य विशेष का सेवन मैं कई वर्षों तक न कर सका। योगाभ्यास के द्वारा जब मैंने अपने पुराने दु:खद अनुभवों का पुनर्मूल्यांकन करना शुरू किया तब यह घटना विशेष प्रबलता से स्मरण हो आई। जब मैंने नवीन दृष्टिकोण एवं समता के भाव से इस पर चिन्तन किया तो उस खाद्य विशेष के प्रति अरुचि समाप्त हो गयी और उस सम्पूर्ण घटना का नकारात्मक प्रभाव समाप्त हो गया।

इस उपाख्यान में अन्तर्निहित दो तथ्यों की ओर मैं आपका ध्यान आकृष्ट करता हूँ। प्रथम, यह घटना इस बात का ज्वलन्त उदाहरण है कि किस प्रकार मानसिक आघात अचेतन भावों को जन्म देते हैं और भविष्य में हमारे व्यवहार को प्रेरित करते हैं (प्रस्तुत दृष्टान्त में उस खाद्य विशेष के प्रति मेरी अरुचि)। इन भावों से उत्पन्न नकारात्मक विचार व्यक्ति के जीवन में मानसिक तनाव को बढ़ा देते हैं। मेरे विचारानुसार यही तनाव रोग का मूल कारण बनता है।

द्वितीय, बालक के विकास की अवधि में इस तरह की त्रासद घटनाओं का होना सामान्य बात है। इनके प्रभावों की गणना नहीं की जा सकती। रोग का निदान करने के पूर्व इन्हें निष्प्रभावी करना अति आवश्यक होता है। मेरा विचार है कि यह सदमा तथा इस प्रकार के अन्य सदमों द्वारा उत्पन्न तनाव मेरे भीतर दमा के कारण बने। भिन्न-भिन्न रोगियों में दमा के कारण भिन्न-भिन्न होंगे। मानसिक आघात लगते-लगते एक ऐसी अवस्था आती है जहाँ रोग शुरू हो जाता है। रोग का कारण चाहे जो हो परन्तु रोग के स्थायी निदान के लिए अनिवार्य है कि पहले उन कारणों से सम्बद्ध भावनात्मक पहलुओं को अलग किया जाये।

पूर्व माध्यमिक एवं प्राथमिक शिक्षा अवधि

इस अवधि में मैं खाँसी से पीड़ित रहता था तथा फेफड़ों और कण्ठ में तकलीफ रहती थी, यही मेरे दमा रोग का प्रारम्भ था। परिणामस्वरूप डॉक्टरों द्वारा प्राय: मेरी जाँच-पड़ताल होती रहती थी। इस दौरान मेरे टॉन्सिल्स और एडिनॉइड ग्रन्थियाँ निकाल दी गयीं, आजकल सामान्य रूप से ऐसा नहीं किया जाता।

मुझे किस चीज से एलर्जी है, यह पता लगाने के लिए विभिन्न प्रयोगों की शृंखला प्रारम्भ हो गई, क्योंकि यह माना जा रहा था कि एलर्जी ही मेरे रोग का मुख्य कारण है। अनुमानत: दो सौ विभिन्न एलर्जीकारकों से मेरी भुजाओं में हल्की खरोंचें डाली गयीं। जहाँ-जहाँ खरोंचे डाली गयी थीं वे भाग लाल होकर फूल गये। यह निष्कर्ष निकाला गया कि जो भाग सबसे अधिक फूला है, वही एलर्जीकारक मेरी बीमारी का कारण है। मेरे कमजोर शरीर में प्रतिरोधक शक्ति का संचार करने के लिए मुझे सप्ताह में दो बार क्रमश: मात्रा बढ़ाते हुए उस विशेष द्रव्य का इंजेक्शन दिया जाने लगा।

यह कष्टप्रद उपचार छ: माह तक निरन्तर चला। दो वर्षों के बाद इसकी पुनरावृत्ति की गई। इस इलाज का प्रभाव अधिक समय तक नहीं रहता था और

पुन: तकलीफ प्रारम्भ हो जाती थी। आधुनिक वैज्ञानिक खोजों का निष्कर्ष भी यही है कि इन इन्जेक्शनों का प्रभाव अधिक देर तक नहीं रहता। मन:-तन्त्रिका-प्रतिरोध विज्ञान भी इस यौगिक विचारधारा का समर्थन करता है कि एलर्जी से होने वाले रोगों में मन की भूमिका कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है।

विद्यार्थी जीवनकाल

दस वर्ष की उम्र में घटित एक कष्टप्रद घटना मुझे याद आ रही है। उस समय मैं प्राथमिक कक्षा का छात्र था। एक दिन मेरे शिक्षक और अभिभावकों के बीच मेरे विषय में ही चर्चा हो रही थी। अध्ययन में भी मेरी गति मन्द ही थी, परन्तु उनकी चर्चा का विषय था–मेरे विकास में कमी। मैंने इसे सुन लिया। इससे मेरे भीतर निराशा का संचार हुआ और स्वयं के प्रति एक नकारात्मक भाव उत्पन्न हो गया। इस निराशा के कारण मेरे स्वास्थ्य में होने वाला सुधार भी अवरुद्ध हो गया। अत: मेरा विश्वास है कि रोगी को प्रोत्साहित करते रहने के साथ-साथ एक सकारात्मक दृष्टिकोण एवं समझ का होना भी आवश्यक है।

मैं शिक्षा की इस अवधि में अनेक दवाइयों का सेवन करता रहा। इन ओषधियों से बीमारी कुछ समय के लिए दब जाती थी, परन्तु उसका निवारण नहीं हुआ। दमा का प्रकोप समय-समय पर हो ही जाता था। थोड़े श्रम से ही बीमारी प्रकट हो जाती थी। शारीरिक दुर्बलता बढ़ती गई, शारीरिक गठन बिगड़ गया और अपनी इस दुर्बल स्थिति के कारण मैं विषादग्रस्त रहने लगा।

रोग निवारण का प्रारम्भ

अट्ठारह वर्ष की उम्र में दमा के साथ मेरे संघर्ष में एक मोड़ आया। इस वर्ष मैंने चिकित्सा महाविद्यालय में प्रवेश किया और साथ ही यौगिक उपचार की भी खोज की। मुझे योग का मार्ग स्वाभाविक लगा। योग के प्रति निष्ठा रखने वाले मुझे सुखी दिखाई दिये। उनका व्यवहार मित्रतापूर्ण था तथा उनमें दूसरों को कुछ देने की प्रवृत्ति निहित थी। मैं जितने भी योग शिक्षकों से मिला, सबके पास मुझे देने के लिए एक नवीन वस्तु थी। किसी में जीवन के प्रति उदार दृष्टिकोण था, तो किसी की मैत्रीपूर्ण मुस्कान ने मुझे आनन्द प्रदान किया।

योग द्वारा उपचार का शुभारम्भ मैंने कुछ सरल आसनों से किया, वास्तव में मेरी बीमारी एक रात में अच्छी होने वाली तो थी नहीं। प्रारम्भ में कुछ अवधि

के लिए मेरा रोग बढ़ गया। इसका कारण मेरे भीतर जमे पुराने तनाव थे। उनके प्रति जागरूक होने के कारण वे स्मृति-पटल पर उभर रहे थे। योग सत्र में और उसके पश्चात् भी कुछ समय तक जब मेरा मन शान्त रहता था, पुरानी स्मृतियाँ और उनसे सम्बन्धित भावनाएँ चित्त में प्रकट हो जाया करती थीं।

उन्नति के मार्ग में द्वितीय बाधक तत्त्व था–मेरी स्वयं की आकांक्षाएँ। योगाभ्यास मैंने दमा के उपचार के उद्देश्य से आरम्भ नहीं किया था। पर जब लाभ के लक्षण दिखाई देने लगे तो मैंने अनुभव किया कि मैं आसनों का अभ्यास अपनी क्षमता से कहीं अधिक कर रहा हूँ और इससे तनाव कम होने की अपेक्षा बढ़ रहा है।

कुछ माह तक सफलता और विफलता के साथ प्रयत्न करने पर मुझे ज्ञात हुआ कि 'शिथिलीकरण' योग चिकित्सा प्रणाली का प्रथम चरण है। अब मैं आसन-प्राणायाम का अभ्यास सुविधापूर्ण तथा आरामप्रद स्थिति में करने लगा। सुधार या उन्नति के विषय में मैंने अधिक सोचना-विचारना छोड़ दिया।

वस्तुत: इस ज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् लाभ बिना प्रयास के ही होने लगा। आसनों ने मेरे शरीर की दशा तथा संरचना में सुधार लाया। प्राणायाम से मेरे फेफड़ों को शक्ति मिली। मेरा विश्वास है कि योग का सामान्य अभ्यास न कर यदि मैं दमा के लिए ही विशेष अभ्यास करता तो सुधार की गति तीव्रतर होती।

जीवनभर के अनुकूलनों, नकारात्मक विचारों तथा व्यवहारों पर कुछ ही दिनों, हफ्तों, या महीनों में विजय प्राप्त नहीं की जा सकती। मेरे स्वास्थ्य में भी उतार-चढ़ाव आते रहे, परन्तु निरन्तर कुछ वर्षों तक ही योगाभ्यास करने के उपरान्त आज मैं पूर्णत: स्वस्थ हूँ।

माता-पिता और बच्चे का सम्बन्ध एवं दमा

शैशवकाल में माता-पिता का विशेष स्थान रहता है। इस समय माता की उपस्थिति और उसके द्वारा बच्चों की देखभाल अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होती है। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है, परन्तु दमा से पीड़ित लोगों के लिए यह विशेष रूप से प्रासंगिक है। मैं अपने अनुभवों के आधार पर माता-पिता तथा शिशु के सम्बन्धों पर प्रकाश डालना चाहता हूँ। बाल्यावस्था में माता की अनुपस्थिति में मुझे जिस पीड़ा और दु:ख का सामना करना पड़ा, वह आज भी मुझे अच्छी तरह याद है। बच्चों के साथ माता-पिता का व्यवहार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। यदि वे अपनी आकाक्षांओं और महत्त्वाकांक्षाओं को अपने बच्चे

पर थोपें तो बच्चा असुरक्षा की भावना से ग्रस्त हो जायेगा तथा तन्त्रिका रोगी हो जायेगा।

इस सन्दर्भ में मैं एक छात्रा का उदाहरण देता हूँ। वह बहुत बुद्धिमान्, होशियार और सफल छात्रा थी। माता-पिता ने उसके जीवन को ऐसी दिशा में मोड़ने के लिए दबाव डाला, जो उसकी इच्छा के अनुरूप नहीं था। माता-पिता की इच्छा से उसे कुछ ऐसे विषय लेने पड़े जो उसकी इच्छा के विपरीत थे। इस पर भी वे उसकी सफलता के लिए बड़ी आशायें लगाये बैठे थे और यह बात उन्होंने उससे स्पष्ट रूप से कह भी दी थी। परिणामत: वह बचपन में ही दमा का शिकार हो गई। उसके माता-पिता उस पर निरंतर दबाव डालते रहे। मेरे विचार से उसको दमा होने का यह एक मुख्य कारण था।

उसके घर जाने पर मुझे यह भी ज्ञात हुआ कि उसके माता-पिता उसके दमा को पढ़ाई न करने का बहाना मात्र समझते थे। वे यह समझने में असमर्थ थे कि अनिच्छित पढ़ाई ही उसके दमा के मूल में है। उस लड़की ने घर त्यागकर अपने को माता-पिता के बन्धन से मुक्त कर लिया। उसके बाद उस पर दमा का प्रकोप कम हो गया। तब योगाभ्यास द्वारा उसका रोग ठीक हो गया।

माता-पिता के इस प्रकार के व्यवहार से बाल-मस्तिष्क में तनाव उत्पन्न होता है। एरिक बर्ने, एम. डी. ने अपनी पुस्तक 'गेम्स पिपुल प्ले' में इस सम्बन्ध में विस्तार से वर्णन किया है। जैसे, यदि कोई छोटा बच्चा घर में अपने माता-पिता को अधिक सहायता देने के लिए तत्पर होता है और प्रयास करता है तो माता-पिता उसके हर कार्य में गलती निकालने लगते हैं।

अन्तिम अध्याय में लेखक कहते हैं– "कुछ सौभाग्यशाली लोगों के पास एक चीज होती है, जो व्यवहार के सभी वर्गीकरणों से परे होती है और वह है सजगता; एक चीज होती है जो सभी पूर्व-धारणाओं से ऊपर होती है और एक चीज जो इन खेलों से भी अधिक लाभप्रद होती है वह है अन्तरंगता। किन्तु जो लोग इसके लिए तैयार नहीं हैं उनके लिए ये तीनों चीजें अधिक त्रासदायी और जोखिमभरी भी हो सकती हैं।"

ये 'खेल' मस्तिष्क में निरंतर संचित होते रहते हैं। दमा के रोगियों में ये स्वास्थ्य लाभ में अवरोध उत्पन्न करते हैं। और इनका निराकरण अनिवार्य हो जाता है। योग के माध्यम से और योगाभ्यास से विकसित सजगता के माध्यम से हम रोग के लक्षणों को ही नहीं, बल्कि रोग की जड़ को समाप्त करने में सक्षम होते हैं।

दमा का रोगी अपने माता-पिता से व्यवहार एवं आदर्शों से सम्बन्धित दृढ़ धारणाओं के साथ-साथ जिन अनुबन्धनों को ग्रहण करता है, उनसे ऊपर उठना उसके लिए आवश्यक है। यहाँ किसी पर दोषारोपण नहीं किया जा सकता। माता-पिता ने भी अपने वातावरण से ही ये सब सीखा और फिर समय आने पर अपने इस ज्ञान और मनोभावों को अपने बच्चों को दिया।

जैसे-जैसे मैं इस रोग के दुष्चक्र से बाहर निकलने लगा, मैंने रोग और उसके प्रभावों का सकारात्मक ढंग से उपयोग करना सीखा और इसके द्वारा स्वयं के बारे में और दुनिया के बारे में जितना अधिक जान सकता था, जाना और सीखा। मुझे यह विश्वास हो गया था कि सभी रोगों की जड़ मन में होती है और उपचार की प्रक्रिया भी यहीं से शुरू होनी चाहिए। हम केवल इस आशा से रोग के लक्षणें को नहीं दबा सकते कि इससे बीमारी अपने आप चली जायेगी। शरीर और मन को मजबूत बनाने के लिए सकारात्मक कार्य करना अनिवार्य है।

सारांश

आन्तरिक रोग असन्तुलन और अव्यवस्था की स्थिति है, जो बाह्य सम्बन्धों की दशा परिलक्षित करती है। दमा का एक रोगी, जिसका जीवन रोग के कारण विश्रृंखलित हो गया है, और जिसे बचपन की सामान्य गतिविधियों से बच कर रहना चाहिए, उसके आपसी सम्बन्ध शीघ्र ही 'असामान्य' हो सकते हैं और वह उपेक्षित हो जा सकता है। फलस्वरूप उसमें अपने ही प्रति नकारात्मक भाव उत्पन्न हो जायेगा, जो रोग को और अधिक बढ़ा देगा। रोग का यही दुष्चक्र है।

हमारा शरीर थल स्वरूप है, मन समुद्र तथा भावनाएँ समुद्री किनारा हैं। जब मन-रूपी समुद्र अशान्त होता है तो किनारे पर चोट करता है और उसे काटकर सागरतल में ले जाता है। शान्त समुद्र में किनारे सुरक्षित रहते हैं। शान्त चित्त में रोगोपचार की शक्ति रहती है। भावुक व्यक्ति जो चिन्तित एवं परेशान रहता है, उसका शरीर मन की अतिक्रियाशीलता के कारण क्षय होने लगता है। जब तक मन में शान्ति नहीं आयेगी तब तक शरीर पर रोगों का ही आधिपत्य रहेगा। योग मन में शान्ति लाकर रोगों का निदान करता है।

2

दमा के कुछ आधारभूत तथ्य

दमा रोग के लक्षण एवं अवस्था की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करना ही इस अध्याय का उद्‌देश्य है। दमा से पीड़ित व्यक्ति इससे परिचित होंगे ही, फिर भी विषय के तर्कपूर्ण एवं व्यवस्थित ज्ञान से लाभान्वित हो रोग का सामना उचित ढंग से कर सकते हैं। चिकित्सक, शिक्षण एवं अन्य पाठक अपने सम्पर्क में आने वाले दमा के रोगियों को अपने सामने दमा का दौरा पड़ने पर उनकी सहायता करने में अधिक सक्षम होंगे।

श्वसन नलिकाओं का संकुचन दमा रोग का मूल कारण है। इसके साथ ही कफ आवश्यकता से अधिक उत्पन्न होता है। परिणामस्वरूप वायु-मार्ग अवरुद्ध हो जाता है। दमा का आक्रमण दम फूलने के रूप में परिलक्षित होता है, विशेषकर श्वास छोड़ते समय कष्ट होता है और एक विशेष प्रकार की खरखराहट की ध्वनि होती है।

मूलभूत तथ्य

साधारणत: दमा रोग का प्रारम्भ बाल्यावस्था से ही होता है। कभी-कभी इसकी शुरुआत युवावस्था में भी होती है। युवा पुरुष एवं स्त्री में भी इसका प्रकोप समान रूप में होता है। प्रौढ़ावस्था में स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष अधिक प्रवण होता है। कुछ लोगों को दमा पैतृक अर्थात् वंशानुगत होता है। यदि पिता दमा रोग से पीड़ित है तो पुत्र को भी यह रोग हो जाता है। यह भी देखने को मिला है कि यह क्रम कई पीढ़ियों तक चलता है। ऐसी स्थिति में भी रोगोपचार असम्भव नहीं है।

स्नायु-दुर्बलता एवं दमा का निकटतम सम्बन्ध है। चिन्ता, धूम्रपान एवं प्रदूषण इस रोग के सहयोगी कारण हैं।

दमा के परिणामस्वरूप अनेक जटिलताएँ भी उत्पन्न हो जाती हैं, जैसे– फेफड़ों में सूजन, ब्रोन्काइटिस इत्यादि। रोग बढ़ जाने के कारण अनेक कठिनाइयों का सामना अवश्य करना पड़ता है, परन्तु यह प्राणघातक रोग नहीं है। दमा की तीव्रतर अवस्था गम्भीर रोग में परिणत होती है, लेकिन इसका भी उपचार सम्भव है।

सामान्यत: दमा का प्रकोप शीतकाल में होता है जब शरीर में कफ इकट्‌ठा होने लगता है और इसका दहन नहीं हो पाता। अर्थात् शरीर ठण्ढी जलवायु का सामना करने के लिए पर्याप्त आन्तरिक चयापचयी ऊर्जा उत्पन्न नहीं करता। इसके परिणामस्वरूप कफ जमा होने लगता है और शरीर से इसका निष्कासन नहीं हो पाता। इसके साथ ही वायु कोष्ठों एवं श्वसनियों में ऐंठन के कारण वायु निष्कासन में अवरोध उत्पन्न हो जाता है। परिणामस्वरूप दम फूलना, खरखराहट भरा श्वसन, हाँफना एवं खाँसी परिलक्षित होती है।

यह स्थिति उन सभी चीजों से और अधिक उग्र हो जाती है, जो श्लेष्मा उत्पन्न करते हैं, जैसे–ठण्ढ, शुष्क कार्बोहाइड्रेट (चावल, मिष्ठान्न, दुग्ध उत्पाद, इत्यादि) का सेवन, या ऐसे व्यायाम किये जायें जिनमें अतिरिक्त ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। परन्तु वास्तव में इस रोग की जड़ें मस्तिष्क में होती हैं। यदि हम मानसिक संवेदनाओं को दबाते हैं तो वे स्वप्न या व्यक्तित्व में अभिव्यक्त होती है अथवा रोग के रूप में प्रकट होती हैं।

प्रकोप

दमे का दौरा सामान्यतया अचानक आरम्भ होता है। परन्तु प्राय: चेतावनी के रूप में उदासी, आलस्य, निद्रा, अपच, अत्यधिक मात्रा में नाक से कफ आना या मूत्र की मात्रा में वृद्धि होती है, यह सब सम्भवत: तनावपूर्ण स्थितियों के परिणामस्वरूप होता है।

प्रकोप के दौरान अबाध श्वास नलिकाओं की अनैच्छिक मांसपेशियों में संकुचन होता है। फलत: आने-जाने वाली वायु की मात्रा कम हो जाती है। श्वसन को सामान्य करने के लिए रोगी अन्य सहायक मांसपेशियों का उपयोग प्रारम्भ कर देता है। वह गले की मांसपेशियों पर दबाव डालता है तथा वायु रेचन के लिए छाती की समस्त मांसपेशियों का उपयोग करता है। सामान्य श्वसन क्रिया में इनका प्रयोग नहीं होता। अत: इस असाधारण

श्वसन में रोगी जल्द ही थकान का अनुभव करने लगता है। उसकी परेशानी एवं दुर्बलता बढ़ जाती है। उसके प्रत्येक श्वसन में परेशानी एवं कष्ट के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगते हैं। कुछ घण्टों या कुछ दिनों की परेशानी के बाद श्वसन नलिकाएँ स्वाभाविक स्थिति में आ जाती हैं। कफ का निष्कासन सहज ही में हो जाता है और रोगी थककर निद्रा की गोद में पहुँच जाता है। यदि सर्दी-जुकाम हो या श्वसन सम्बन्धी अन्य दोष हो तो रोग का प्रकोप गम्भीर होता है एवं अपेक्षाकृत अधिक अवधि तक रहता है। तब निमोनिया की सम्भावना बढ़ती है।

दमा की सर्वाधिक सामान्य समस्या श्वासनली में सूजन होती है। श्लेष्मा झिल्लियाँ सूज जाती हैं तथा प्रकोप काल में श्वसन में तकलीफ होती है और दम घुटने लगता है। रोगी श्वासनलिका को स्वच्छ करने का प्रयास करता है, परन्तु स्वयं को कफ बाहर निकालने में असमर्थ पाता है। ऐसी स्थिति में रोगी बिस्तर से उठकर बैठ जाता है तथा सामने की ओर झुककर फेफड़ों को दबाते हुए श्वसन करता है। बारम्बार ऐसा करने से रोगी के शारीरिक संगठन में स्थायी दोष उत्पन्न हो जाते हैं। उसकी पीठ सामने की ओर झुक जाती है।

प्रकोपों की मध्यावधि

दमा के रोगी के सम्मुख चार ऐसी प्रमुख समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं जिनके परिणामस्वरूप शीघ्र ही द्वितीय प्रकोप की संभावनाएँ बनी रहती हैं। ये समस्याएँ निम्नलिखित हैं–

- *निर्बलता*– रोग के प्रकोप के समय रोगी पर बहुत तनाव पड़ता है। अधिक श्रम से शारीरिक तथा भावनात्मक दुर्बलता आ जाती है। यही द्वितीय प्रकोप को आमंत्रित करती है और यह दुष्चक्र चलता रहता है।
- *निष्क्रियता*– शारीरिक दुर्बलता के कारण रोगी प्रतिदिन के कार्य करने में असमर्थ हो जाता है। इस कारण उसमें निराशा के भाव आ जाते हैं तथा पुनः रोग के प्रकोप की संभावना बनी रहती है।
- *पुनः प्रकोप का भय*– रोगी में कमजोरी तथा कार्य करने की अक्षमता के साथ ही पूर्व प्रकोप के कष्टों की स्मृति बनी रहती है तथा वह भविष्यगत प्रकोप के प्रति भयभीत रहता है। यह भय की भावना शीघ्र ही रोग के पुनः प्रकोप का कारण बन जाती है।

- *शारीरिक मुद्रा में दोष* – सामान्य शारीरिक दुर्बलता तथा रोग के प्रकोप की अवधि में निरन्तर सामने की ओर झुककर श्वसन क्रिया करने से शारीरिक दोष उत्पन्न हो जाता है। ऐसी स्थिति में हमारा उद्देश्य यह देखना है कि इन समस्याओं को कम करने एवं दमा के प्रकोपों को रोकने में योग द्वारा किस प्रकार मदद मिल सकती है।

3

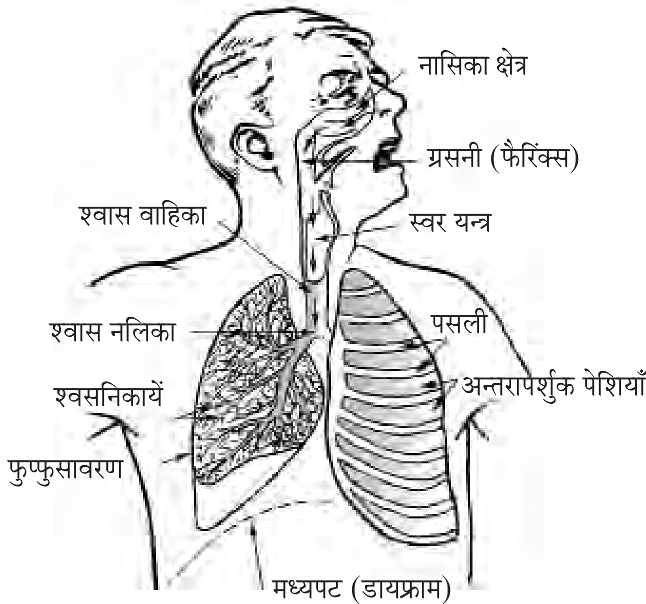
श्वसन संस्थान

श्वसन तन्त्र के कार्यों और बनावट का ज्ञान व्यक्ति को यह पूर्वानुमान करने की योग्यता प्रदान कर देगा कि दौरे के समय वस्तुत: होता क्या है। ज्ञात की अपेक्षा अज्ञात अधिक भयावह होता है। पीड़ित व्यक्ति की बढ़ती सजगता उसे ऊर्जा को बढ़ी हुई संकल्पशक्ति एवं एक उद्देश्य के साथ निर्दिष्ट करने में सहायक होगी। जिसके शरीर केन्द्रों के किसी भाग में गड़बड़ी है, यदि स्वास्थ्य के प्रति उसका पर्याप्त ध्यान जाता है तो कालक्रम में वह स्वस्थ हो जायेगा।

श्वसन अंग

श्वास लेते समय वायु नासिका या मुँह, स्वरयंत्र और श्वसन नलिका के माध्यम से भीतर आती है। छाती के मध्य भाग के आस-पास श्वसन-नलिका दो भागों में विभक्त हो जाती है, जिन्हें श्वसनिकाएँ कहते हैं। प्रत्येक श्वसनिका, जिसकी लम्बाई चार इंच होती है, एक-एक फेफड़े में जाती है। वहाँ श्वसनिका अनेक छोटी शाखाओं में विभक्त हो जाती है। ये लघु श्वसनिकाएँ फेफड़े के सूक्ष्म वायु-कोशों से वायु का भीतर से बाहर एवं बाहर से भीतर आदान-प्रदान करती हैं।

श्वसनियों की दिवालों में वर्त्तुलाकार पेशीतन्तु होते हैं, जिनके संकुचन से श्वसनियाँ संकीर्ण हो जाती हैं। ये तन्तु स्थानीय रूप से (उदाहरणार्थ, श्वसनी क्षेत्र में उत्तेजना, संक्रमण या एलर्जी आदि के कारण) या स्वचालित तंत्रिका तंत्र द्वारा या तनाव के कारण उत्तेजित हो जाते हैं। श्वसनियों का संकीर्ण होना दमा के आक्रमण का मुख्य कारण माना जाता है।



चित्र–श्वसन तन्त्र

श्लेष्मा अवरोध भी श्वास में रुकावट का दूसरा कारण है। फेफड़ों की दिवालों में दो प्रकार की ग्रन्थियाँ होती हैं– श्लेष्मा का स्राव करने वाली तथा सीरम का स्राव करने वाली। सीरमी ग्रन्थियाँ जलीय तरल स्रावित करती हैं, जिसका फेफड़ों द्वारा कदाचित ही उपयोग होता है। अब उसे श्लेष्मा ग्रन्थियों के विश्राम की अवस्था मानते हैं। स्वस्थ फेफड़े में श्लेष्मा का स्राव अनवरत चलता रहता है, जो बाह्य कणों– धूल या जीवाणु आदि को फेफड़ों में प्रवेश करने से रोकता है। श्वसनियों की दिवालों में केश के समान निकले उभारों की बराबर लय युक्त गति के कारण श्लेष्मा फेफड़ों से ऊपर तथा बाहर की ओर गतिशील रहता है। खाँसने की जो प्रतिवर्त्त क्रिया है, वह श्लेष्मा के निष्कासन में सहायक होती है।

जब रोग की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है तब सीरमी ग्रन्थियाँ या इन ग्रन्थियों की निष्क्रिय अवस्था पुनः सक्रिय हो जाती है और श्लेष्मा ग्रन्थियों की संख्या बढ़ जाती है। श्लेष्मा गाढ़ा होकर नलिकाओं में अवरोध उत्पन्न कर देता है। परिणामस्वरूप श्वसन में कष्ट होने लगता है।

पूरक एवं रेचक क्रियाओं से छाती में संकुचन एवं प्रसारण की क्रियाएँ संपादित होती हैं। श्वास लेते समय तीन प्रकार की मांसपेशियाँ कार्यरत होती हैं– मध्य-पट या डायफ्राम (यह मांसपेशियों की गुम्बद के आकार की एक परत होती है जो छाती को आमाशय से पृथक् करती है), अन्तरापर्शुक (पसलियों की मांसपेशियाँ), तथा सहायक मांसपेशियाँ। स्नायुओं के आकुंचन से हृदय-गह्वर की लम्बाई-चौड़ाई एवं गहराई में वृद्धि हो जाती है। फलस्वरूप वायु भीतर की ओर खींची जाती है। इसके विपरीत इन स्नायुओं के शिथिलीकरण, फेफड़ों की नम्यता तथा पुन: फैलने के कारण वायु का बाहर की ओर निष्कासन होता रहता है।

इस प्रकार श्वास प्रयत्नपूर्वक की जाने वाली प्रक्रिया है तथा प्रश्वास उसका स्वाभाविक निष्प्रयास परिणाम है। जब रेचक क्रिया में कुछ अवरोध उत्पन्न होता है तो प्रश्वास प्रक्रिया भी क्रियाशील हो जाएगी। ऐसी स्थिति में उदर की दीवारें सक्रिय रूप से संकुचित होती हुई डायफ्राम को ऊपर उठाती हैं तथा पसलियों को सामान्य से अधिक समीप ले आती हैं जो वायु को बाहर निकाल देती हैं। इस तरह शक्ति लगाकर रेचक करने से सम्बन्धित पेशियाँ अतिशीघ्र थक जाती हैं।

दमा के प्रकोप के समय रोगी को इसी भाँति रेचक क्रिया करनी पड़ती है। यही कारण है कि वह जल्दी थकावट का अनुभव करने लगता है। निर्बलता की स्थिति में वह श्लेष्मा के जमाव को दूर नहीं कर पाता। श्लेष्मा वहीं जमकर गाढ़ा हो जाता है। वह खाँसकर कफ को बाहर निकालने का प्रयास करता है, लेकिन वह जैसे-जैसे कमजोर होता जाता है, वैसे-वैसे सभी अवरोधों को दूर करने में समर्थ नहीं हो पाता। जैसे-जैसे दमा का प्रकोप बढ़ता है, श्लेष्मा गाढ़ा होकर और अधिक कड़ा हो जा सकता है, जिससे श्वास-मार्ग अवरुद्ध हो जाता है। दौरे की समाप्ति के बाद रोगी का शरीर इन अवरोधों को धीरे-धीरे दूर करने में समर्थ होता है।

चूँकि नि:श्वसन सम्बन्धी पेशियाँ कमजोर हो जाती हैं, रोगी फेफड़े से सम्पूर्ण वायु को निकाल नहीं पाता है। फलस्वरूप फेफड़ा फैल जाता है, जिससे अधिक परेशानी होती है तथा दम फूलना और बढ़ जाता है।

केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र

यह सम्पूर्ण शरीर पर नियन्त्रण रखता है। केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र मस्तिष्क एवं मेरुदण्ड में अवस्थित है। परिधीय तन्त्रिका तन्त्र ऐच्छिक पेशियों और संवेदन

ग्राहकों तक सन्देश लाता एवं ले जाता है। स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र अनैच्छिक शारीरिक गतिविधयों को व्यवस्थित करता है तथा उस पर नियन्त्रण रखता है। इन क्रियाओं के अन्तर्गत हृदय की धड़कन, सामान्य श्वसन क्रिया, आँतों की हलचल तथा श्वास नलिका के स्नायुओं की गतिविधियाँ मुख्य हैं।

स्वचालित तंत्रिका तंत्र के अन्तर्गत अनुकम्पी (सिम्पेथेटिक–इड़ा) तथा परानुकम्पी (पैरासिम्पेथेटिक– पिंगला) नाड़ी संस्थान सम्मिलित हैं। अनुकम्पी संस्थान प्राणिक क्रियाओं को उत्तेजित करता है, जबकि परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र क्रियाशीलता को कम करता है। एक स्वस्थ मनुष्य में इन दोनों तंत्रों के मध्य अच्छा सन्तुलन होता है।

दमा के रोगी की श्वसन क्रिया कमजोर होती है। इसके कारण स्वचालित तंत्रिका तंत्र में असंतुलन आ जाता है। ऐसी अवस्था में परानुकम्पी क्रियाएँ तीव्र हो जाती हैं तथा अनुकम्पी तंत्रिका तंत्र की क्रियाएँ अति मन्द हो जाती हैं। इससे तंत्रिका तंत्र में और अधिक कमजोरी आ जाती है।

पेशी

पेशी ही शारीरिक गतिविधियों की आधारभूत इकाई है। पेशियों का नियन्त्रण तंत्रिका तंत्र के द्वारा होता है तथा रक्त के द्वारा इसे पुष्ट किया जाता है। पेशियाँ दो प्रकार की होती हैं– पहले प्रकार की पेशियों को ऐच्छिक कहते हैं। दूसरे प्रकार की पेशियाँ अनैच्छिक कहलाती हैं। यौगिक अभ्यासों के द्वारा अनैच्छिक पेशियों पर भी नियंत्रण रखा जा सकता है।

उपर्युक्त दोनों प्रकार की पेशियाँ फेफड़ों में पायी जाती हैं। दमा के प्रकोप के समय श्वास नलिका के भीतर अनैच्छिक पेशियों में संकुचन होता है। फलत: कम वायु भीतर जाती है। इसी अवधि में हृदय की दीवारों की ऐच्छिक पेशी भी संकुचित होती है।

रक्त वाहिनियाँ

श्वास द्वारा ली गई वायु की ऑक्सीजन वायुकोष्ठों की पतली दीवारों से होती हुई रक्त में प्रवेश करती है। रक्त वाहिनियों द्वारा ऑक्सीजन सम्पूर्ण शरीर में पहुँच जाती है, जिससे शरीर पुष्ट होता है। नवजात शिशु का प्रथम कार्य जीवन प्रदान करने वाली वायु का श्वसन करना है और यह कार्य जीवन भर चलता रहता है।

श्वसन प्रक्रिया के ठीक ढंग से न होने पर ऑक्सीजन की उचित मात्रा रक्त में नहीं पहुँचती। परिणामस्वरूप अनुपयोगी द्रव्यों का एकत्रीकरण हो जाता है, जैसे– कार्बन-डाइ-ऑक्साइड। उदाहरणार्थ– एक शहर निवासी सामान्यत: गहरी श्वसन क्रिया नहीं करता, जिससे उसकी श्वसन क्रिया में फेफड़ों के केवल ऊपरी अंग भाग लेते हैं।

यौगिक श्वसन प्रणाली में फेफड़ों एवं श्वसन पेशिओं का व्यायाम हो जाता है तथा सामान्यत: बन्द रहने वाले वायुकोष्ठ खुल जाते हैं। इससे रक्त को अधिकतम ऑक्सीजन प्राप्त होती है। परिणामत: तनाव कम होता और अच्छे स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। रक्त ही जीवन के लिए आवश्यक जल है।

लिम्फ वाहिनियाँ

लिम्फ वाहिनियाँ उन अपशिष्ट द्रव्यों का एकत्रीकरण करती हैं जिन्हें रक्त वाहिनियाँ ग्रहण नहीं करतीं। लिम्फ वाहिनियाँ, नाड़ियाँ, धमनी एवं शिराएँ एक-दूसरे के समीप ही चार-पाँच नलिकाओं के रूप में रहती हैं तथा इन सबमें एक साथ ही परिवहन होता है।

लिम्फ के बहाव के लिए पेशी क्रियाओं की आवश्यकता होती है जैसे– श्रमसाध्य व्यायाम। शहरों में ऐसे कठिन शारीरिक व्यायाम का अवसर नहीं मिलता। इस प्रकार के क्रियाकलापों की कमी को योगासन पूरा करता है।

4

प्रभावों से संघर्ष

रोग के दौरे के उपरान्त प्रकट होने वाली समस्याओं की चर्चा की जा चुकी है। अब हम कुछ ऐसी विधियों का उल्लेख करेंगे जिनके द्वारा इन समस्याओं पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

शारीरिक

दमा के अनेक रोगियों की दुर्बल शारीरिक भंगिमा एक समस्या है। कुछ मामलों में शारीरिक दुर्बलता के कारण व्यक्ति सामने की ओर झुक जाता है तथा वह स्थायी रूप से कुबड़ा हो जाता है। इससे अन्य शारीरिक रचना में भी असामान्यता आती है। स्वास्थ्य लाभ के पूर्व इनमें सुधार करना आवश्यक है। योग द्वारा सहज ही शारीरिक गठन में सुधार हो जाता है। आसनों से प्रत्यक्षत: स्वास्थ्य में सुधार तो होता ही है, साथ ही शारीरिक दोषों का निराकरण भी हो जाता है।

मेरुदण्ड हजारों नाड़ियों के द्वारा विभिन्न संदेश मस्तिष्क को पहुँचाता है। स्वस्थ एवं लचीली नाड़ियाँ अच्छे संदेश वाहक का कार्य करती हैं। मेरुदण्ड के सीधे एवं लचीले होने पर ही यह कार्य दक्षतापूर्वक हो सकता है। यदि मेरुदण्ड झुका हुआ रहे तो संदेश सम्प्रेषण में अनियमितता आ जाती है।

सामान्यत: दमा के रोगियों को मेरुदण्ड के झुके होने की चिन्ता कम ही होती है। ऐसा होने का कारण है कि वे इसमें सुधार की आवश्यकता नहीं समझते। पर अधिक संभावना है कि किसी प्रकार श्वास लेना ही उनकी प्राथमिकता हो जाती है। वस्तुत: यह कुबड़ापन एक नया दुष्चक्र उत्पन्न करता है। छाती के पेशियाँ इस प्रकार दब जाती हैं कि श्वसन प्रक्रिया की दक्षता समाप्त हो जाती है। इसके अतिरिक्त मेरुदण्ड की तंत्रिकाएँ दब जाती और

संकुचित हो जाती हैं। मस्तिष्क में यही संवाद जाता है कि रोग प्रगति पर है – तंत्रिकाएँ दबी हैं, फेफड़ा बीमार है, शरीर दुर्बल है। सामान्य क्रियाकलाप की सूचना भी विकृत हो जाती है।

कुछ दिन यदि यही दुर्बल भंगिमा चलती रही तो स्थिति सुधार के योग्य नहीं रह जाती है। वृद्धावस्था के साथ मेरुदण्ड की हड्डियाँ कठोर हो जाएँगी और सुधार सम्भव नहीं होगा। सुधार की प्रक्रिया प्रारम्भ हो, इस हेतु कई बातों को समझना आवश्यक है –

1. इस प्रक्रिया को चालू रखकर वह स्वयं को हानि पहुँचा रहा है।
2. उसे सीखना चाहिए कि शरीर के किन भागों को अधिक ध्यान की आवश्यकता है। ये ही क्षेत्र हैं जहाँ सजगता रखनी है। ध्यान चाहने वाले इन्हीं अंगों पर सजगता रखना एक सकारात्मक कदम होगा। ये अंग हैं – फेफड़ा, पसली-पिंजर, मेरुरज्जु, मेरुदण्ड और तंत्रिका तंत्र। इस पर पुन: जोर देना उचित होगा कि इन अंगों पर सकारात्मक विचार सम्प्रेषण इन क्षेत्रों में स्वास्थ्यप्रद ऊर्जा सम्प्रेषित करेगा।
3. सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है – अपने को स्वस्थ करने हेतु सकारात्मक प्रेरणा अपने में लाना ही रोग के दुष्चक्र से निकलने का पहला कदम होगा और यह रोगी को स्वयं ही करना होगा।

शारीरिक दोष निवारण हेतु सुझाव

सर्वप्रथम अच्छी शारीरिक भंगिमा में कुर्सी ही बाधक होती है। बहुत ही कम कुर्सियाँ होती हैं जो बैठने वाले व्यक्ति की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करती हों। हम घुटनों को जमीन से टिकाकर वज्रासन या सुखासन में बैठने की सलाह देते हैं। आप जिस आसन में भली-भाँति सुखपूर्वक बैठ सकें, उसी में बैठने का अभ्यास कीजिये। कुछ दिनों के अभ्यास के बाद आप उस आसन में अधिक समय तक बैठने में समर्थ हो सकेंगे। इसमें आपको आराम भी मिलेगा। यदि पढ़ते समय सुखासन में थक जायें तो मकरासन की स्थिति में आ सकते हैं।

यदि आप कुर्सी पर बैठते हैं तो अधिक समय तक न बैठिये। कई वर्षों तक इस प्रकार कुर्सी पर बैठने से आदत पड़ जाती है। कुर्सी पर बैठे हुए यदि आपको पीठ में दर्द का अनुभव हो तो तुरन्त कुर्सी के पीछे टिककर पीठ को सीधा कर लीजिये। आप एक गहरी श्वास के साथ तनावमुक्त होंगे। मेरुदण्ड

की कशेरुकाओं को सुव्यवस्थित करने के लिए इस क्रिया को मन्द गति से या कुछ तीव्रता के साथ किया जा सकता है। इस क्रिया से मेरुदण्ड की कशेरुकायें पूर्व स्वाभाविक स्थिति में आ जायेंगी, नाड़ियाँ तनाव रहित होंगी तथा मेरुदण्ड अधिक लचीला हो जायेगा। कुछ देर तक इस क्रिया को करने से पीठ में गहन विश्रान्ति का अनुभव होगा, जो इस बात का संकेत है कि मेरुदण्ड अच्छे स्वास्थ्य की ओर अग्रसर है।

मेरुदण्ड के लिए कटिचक्रासन एक उपयोगी एवं लाभप्रद अभ्यास है। इसकी संक्षिप्त विधि इस प्रकार है – सीधे खड़े हो जाइये। दोनों हाथों को बाजू में कंधों की ऊँचाई तक उठाइये। पैर जमीन पर ही टिके रहें। अब कमर के ऊपर के अंगों को तिरछा करके भुजाओं को झुलाते हुए शरीर के चारों ओर घुमाइये। एक भुजा सामने की ओर से तथा दूसरी भुजा पीठ की तरफ से शरीर को घेरे रहेगी। यह क्रिया क्रमश: दोनों बाजुओं से कीजिये। इच्छा एवं आवश्यकतानुसार इसे एक-दो बार दुहराइये।

दमा में नासिका का महत्त्व

फेफड़ों की भाँति नासिका छिद्र भी श्वसन संस्थान के अंग हैं तथा दमा के प्रकोप काल में वे श्वसन के असन्तुलन के लिए उतने ही जिम्मेदार हैं। सामान्यत: इस रोग में नासिका छिद्र अवरुद्ध हो जाते हैं।

अधिकतर रोगी मुँह से श्वसन क्रिया करते हैं। नासिका मार्ग से जाने वाली वायु वहाँ की अतिरिक्त रक्त आपूर्ति के द्वारा गरम हो जाती है। साथ ही वह रोएँ द्वारा छनकर भीतर जाती है जिससे हानिकारक तत्त्व वायु के साथ भीतर नहीं पहुँच सकते।

नासिका छिद्रों के अवरोधों को दूर करने के लिए सामान्यत: हानिकारक दवाओं का प्रयोग किया जाता है। इसके द्वारा शरीर में विषैले तत्त्व पहुँच जाते हैं और शरीर को इनको निकालने के लिए अधिक श्रम करना पड़ता है। दवा के स्थान पर नेति क्रिया करना उत्तम है। मस्तिष्क एवं श्वास मार्ग की सफाई के लिए यह यौगिक क्रिया है। पीछे झुकने वाले आसनों से भी नासिका छिद्रों के अवरोध दूर होते हैं। इसके साथ ही यदि यौगिक श्वसन प्रक्रिया का नियमित अभ्यास किया जाये तो यह दोष स्थायी रूप से दूर हो जाता है।

उत्तम शारीरिक भंगिमा भी नासिका सम्बन्धी समस्याओं को सुलझाने में मदद देती है। इसका कारण यह है कि नासिका तथा श्वसन संस्थान एक

सीधी रेखा पर हैं। झुके हुए कन्धों के कारण नासिका से प्रवाहित होने वाली वायु के प्रवाह में बाधा उपस्थित होती है। झुके हुए संकुचित स्थान से वायु दबाव के साथ प्रवाहित होती है। अत: दमा के रोगी को सदैव इस बात के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिये कि सिर एवं पीठ लम्बवत रहें तथा श्वसन क्रिया नासिका से सम्पन्न हो।

ओषधि का प्रयोग

दवाओं के सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक चर्चा आगे की जायेगी। यहाँ कुछ सामान्य बातों की विवेचना करेंगे।दमा से पूर्णत: मुक्ति का अर्थ है दवाओं से सम्बन्ध विच्छेद। यह हमारा अनुभव है कि दवाएँ विशेष रोग के लिए नहीं, वरन् भय एवं परेशानियों की प्रतिरोधक होती हैं। दमा का रोगी बहुत पहले ही स्प्रे आदि दवा के लिए पहुँच जाता है। यह उत्तम होगा कि रोगी प्रकोप की अवधि में धैर्य से काम ले एवं अपनी स्थिति का स्वयं अवलोकन करे। प्रारम्भ में यह कार्य कठिन अवश्य प्रतीत होगा, परन्तु स्वास्थ्य-प्राप्ति के मार्ग में इच्छा-शक्ति एवं आशावादी प्रवृत्तियाँ ही प्रथम एवं अत्यधिक महत्त्वपूर्ण कदम हैं।

5

दमा के सम्भावित कारण

हमारा यह अनुभव है कि परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र के द्वारा फेफड़ों को अधिक उत्तेजित किया जाना ही दमा का तात्कालिक कारण है। इस प्रक्रिया के कारण श्वास नलिका में संकुचन उत्पन्न हो जाता है। ये नाड़ियाँ मस्तिष्क में हाइपोथैलेमस नामक क्षेत्र में स्थित होती हैं। यह क्षेत्र उच्च भावनात्मक केन्द्रों द्वारा नियंत्रित होता है। अत: भावनात्मक तनावों का प्रभाव इस पर पड़ता है और यह परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र द्वारा उत्तेजना को नीचे भेजता है। यही दमा का कारण बन जाता है। अत: इसके निवारण के लिए भावनात्मक प्रतिक्रियाओं को रोकने और इससे सम्बन्धित आवश्यक निर्देशों का पालन करने का प्रयास करना चाहिए।

आज सर्वाधिक सामान्य रोग मनोकायिक रोग हैं। अप्रिय भावनात्मक कारणों से शरीर में अनेक परिवर्तन होते हैं तथा पेशीय तनाव एवं स्नायविक दुर्बलता उत्पन्न हो जाती है। भावनात्मक तनाव कुछ अवधि तक हमारे साथ ही रहते हैं। ऐसे व्यक्तियों की संख्या बहुत कम होती है जो चिन्ता एवं क्रोध के बाद जल्द ही शान्त हो जाते हैं तथा उस काल के अनुभवों को त्याग देते हैं। योगी इसके अपवाद हैं।

प्रत्येक भावना का शरीर पर कुछ-न-कुछ प्रभाव पड़ता ही है। शान्त मस्तिष्क और मन वाला व्यक्ति ही स्वस्थ रह सकता है। दमा के रोगी को शरीर की अन्य विभिन्न आवश्यकताओं के साथ ही शान्त मन की आवश्यकता सबसे अधिक होती है। रोगी में तनाव को शिथिल करने की क्षमता होनी चाहिये। भावनात्मक कारणों से थकान या शक्तिहीनता हो सकती है। शारीरिक कारण जैसे – रक्त-अल्पता आदि तत्त्व अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं जिनके प्रति

व्यक्ति सजग नहीं होता है। अमेरिका के एक व्यक्ति ने एक विशेष टॉनिक का अनुसन्धान किया। इसके द्वारा शक्तिहीन व्यक्तियों का उपचार किया गया। इसका परिणाम अच्छा निकला। परन्तु बाद में दवा के बताये गये गुणों के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की गई। आज भी वह दवा बिकती है, पर उसके गुणों एवं प्रतिक्रियाओं का बखान उतना अधिक नहीं किया जाता है। तात्पर्य यह है कि दवा में उपचार की पूर्ण क्षमता नहीं होती है।

मात्र दवाओं से दमा का उपचार नहीं किया जा सकता। दवाओं से केवल रोग के लक्षणों पर विजय प्राप्त की जा सकती है या रोग को कुछ समय के लिए ही रोका जा सकता है। इससे श्वसन-पेशियाँ दवा की आदी हो जाती हैं तथा एक समय ऐसा आता है जब उन पर दवा की कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। रोग के मूल कारण के उपचार से ही रोग दूर हो सकता है। यदि योग के द्वारा आप दमा का निवारण करेंगे तो आपको दवा की आवश्यकता नहीं होगी।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान ने दमा के चार कारण बतलाये हैं। प्राथमिकता के आधार पर उनकी सूची इस प्रकार है –

1. तनाव, चिन्ता, परेशानी तथा मनोकायिक समस्याएँ।
2. किसी वस्तु विशेष के सेवन, गन्ध आदि की प्रतिक्रिया या उत्तेजना के फलस्वरूप।
3. जननिक या वंशानुगत विशेषताएँ
4. अज्ञात कारण

अब हम योग और विज्ञान, दोनों दृष्टिकोणों से इन कारणों की विवेचना करेंगे।

तनाव

आधुनिक सामाजिक मूल्य असंगति एवं दबाव उत्पन्न करते हैं, इससे अनेक लोग जीवन की अशान्ति से उत्पन्न दबाव से अस्थायी रूप से बचने के लिए पलायन की प्रवृत्ति अपनाते हैं। वे सिनेमा, धूम्रपान, मद्यपान, अति-आहार जैसे मनोरंजनों में डूबकर अपने से बचने का प्रयास करते हैं।

रोग अप्राकृतिक जीवनयापन के कारण उत्पन्न होते हैं। अत: जीवन को प्राकृतिक ढंग से जीना चाहिये। इस तथ्य की पुष्टि 'हुँजा' नामक जाति की प्राकृतिक जीवन विधि से की जा सकती है जिसके कारण उसकी औसत

आयु बढ़कर सौ वर्ष हो गई है। शहरों में कामकाज करते हुए भी अपेक्षाकृत प्राकृतिक जीवनयापन संभव है। मानसिक शान्ति, अच्छा आहार, काम और पर्याप्त व्यायाम, धूप, ताजी हवा जैसे तत्त्व इसमें सहायक होंगे।

प्राकृतिक विधि से जीवनयापन द्वारा दमा का रोगी अवचेतन मन के उन अधिकांश तनावों तथा चिन्ताओं से मुक्त हो सकता है, जिनके कारण उसका स्वास्थ्य बाधित हो जाता है। इस मार्ग पर चलने से प्रारंभ में उसे कठिनाइयों का सामना अवश्य करना पड़ेगा, परन्तु इसका फल होगा सुन्दर स्वास्थ्य की प्राप्ति। मन एवं मस्तिष्क के अनेक सूक्ष्म यंत्रों एवं उनके क्रियाकलापों के विषय में ज्ञान रखना अत्यन्त कठिन है।

यथार्थता या सावधानी की एक आदत विकसित करनी चाहिए। उदाहरण के लिए, ऐसा संभव है कि दमा के रोगी को अत्यन्त पीड़ादायक या कठिन परिस्थिति का सामना करना पड़े और वह प्रतिक्रिया स्वरूप यह सोचने लगे कि "अब दमा का दौरा पड़ेगा" तो सच में उसे दौरा पड़ जायेगा। परन्तु यदि वह योगभ्यास द्वारा धैर्य और समता की आदत सीख लेता है तब वह चिन्ता के इस घेरे में पड़े बिना स्थिति को और उस स्थिति में अपनी प्रतिक्रिया को देख पाने में सक्षम होगा।

हम तो अनुभव से जानते हैं कि दौरे के लिए यह आशंका एक बड़ा कारण है। अपनी एलर्जी को भूल जाइये। अपनी चाची या माँ के दमे की बात भी भूल जाइये (वे भी घबरायी हुई थीं)। आपका यह भय ही दौरा लाता है। योग के द्वारा आप इस भय से निकल सकते हैं।

एलर्जी एवं उत्तेजना

एलर्जी, सामान्य उत्तेजनाओं की अस्वाभाविक शारीरिक रासायनिक प्रतिक्रिया है, जो अधिकतर व्यक्तियों के लिए निरापद है। शरीर के तंतुओं से हिस्टामिन के स्राव से एलर्जी सम्बन्धी प्रतिक्रिया होती है जो एक या अधिक आन्तरिक अंगों को प्रभावित करता है। नाक में यह हे-फीवर और फेफड़े में यह दमा के रूप में प्रकट होता है।

इन दोनों रोगों के साथ-साथ अन्य एलर्जी, जैसे—दाद एवं एक्जिमा भावनात्मक हैं। कहा जाता है कि धूल, धुआँ, अचानक शीत, जैसी उत्तेजनाओं से ये बढ़ जाते हैं, परन्तु इन मामलों में भी भावनात्मक तत्त्व महत्त्वपूर्ण पाए गए हैं।

पैतृक या वंशानुगत

अभी तक दमा में वंशानुगत कारण के विस्तार का पता नहीं लगाया जा सका है। परन्तु इसमें किसी प्रकार की शंका नहीं है कि हमारे जीवन पर इसका वंशानुगत प्रभाव होता है। इसे दूर भी किया जा सकता है। इसके लिए रोग से मुक्ति की दृढ़-इच्छा एवं जागरूकता की आवश्यकता है। समस्याओं पर विजय प्राप्त करके अपने पूर्व संचित संस्कारों एवं शारीरिक दोषों में परिवर्तन लाया जा सकता है। विशेषकर इस प्रकार दमा के रोगी अपने स्वास्थ्य को पुन: प्राप्त कर सकते हैं।

दमा एवं विश्रान्ति

यहाँ हम एक डॉक्टर के सन्दर्भ में एक प्रासंगिक कथा दे रहे हैं। मेरे वे डॉक्टर मित्र शहर के एक अस्पताल में कार्यरत थे। वे एक रात आपात कार्य से अस्पताल में व्यस्त थे। उस समय उनके अधिकतर सहयोगी कार्य से विदा हो चुके थे। उसी समय अस्पताल में एक दमा का रोगी लाया गया। उसकी हालत गम्भीर थी। उसकी तात्कालिक परिचर्या के लिए उन डॉक्टर महोदय को बुलाया गया।

प्रारंभिक सामान्य जाँच करते हुए डॉक्टर ने अपना एक हाथ रोगी की छाती पर रखा। रोगी नीला-सा पड़ गया था। उसी समय थकावट एवं परेशानियों के कारण डॉक्टर को नींद की झपकी आ गई। कुछ क्षण बाद उनकी झपकी टूटी तो उन्होंने उठकर रोगी की श्वसन क्रिया का परीक्षण किया। श्वास अपेक्षाकृत सामान्य दशा में थी। लेकिन उसी समय डॉक्टर अपनी असमय की नींद के कारण घबरा गये और डॉक्टर की भावना के प्रभाव के कारण रोगी की श्वसन क्रिया पुन: असामान्य और कष्टप्रद हो गयी।

डॉक्टर ने इस स्थिति का अवलोकन किया। उन्होंने अपने को पुन: विश्रान्त किया तथा मन को शान्त किया। रोगी की छाती पर रखे हुए अपने हाथ के माध्यम से उन्होंने उसमें शान्तिपूर्ण विचारों का संचार करना प्रारम्भ किया। तुरन्त ही रोगी की अवस्था में परिवर्तन दिखाई दिया। उसके तनावों में शिथिलता के साथ श्वसन की गति भी सामान्य होने लगी। उसका गहरा नीला रंग परिवर्तित होकर गुलाबी होने लगा। उसमें इतनी जल्दी सुधार हुआ कि दवाओं की भी आवश्यकता नहीं रही।

डॉक्टर की यह कथा इस बात का जीता-जागता प्रमाण है कि ओषधि-उपचार की अपेक्षा योग का सिद्धान्त वास्तविकता के अधिक निकट है। विश्रान्ति दमा के उपचार की कुंजी है।

योग एवं ओषधि

दमा के लक्षण एवं कुप्रभावों को दबाने के लिए आधुनिक युग में अनेक ओषधियाँ उपलब्ध हैं, परन्तु इनमें रोगों की रोकथाम एवं निवारण की क्षमता कदापि नहीं है। यह केवल शान्तिमय जीवनयापन, शिथिलीकरण, शारीरिक अभ्यास तथा जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण से ही सम्भव है।

रोग के दौरे के समय कष्टों से छुटकारा पाने के लिये अवश्य ही दवा की जरूरत पड़ सकती है, लेकिन इसका प्रयोग विशेष परिस्थिति में अनिवार्य होने पर करना उचित है। श्वास फूलने की स्थिति में दवा का प्रभाव अच्छा होता है, परन्तु इसका शरीर पर अवांछनीय प्रभाव पड़ता है।

कुछ विशेष दवाओं का विशेष प्रभाव पड़ता है जिसका उल्लेख इस पुस्तक के क्षेत्र से बाहर है। दवाओं के कुछ सामान्य प्रभाव इस प्रकार हैं–

- *मनोवैज्ञानिक प्रभाव*– बहुत से लोग दौरे की आशंका से आवश्यकता से पूर्व ही गैसवाली दवा उठा लेते हैं। कुछ तो दौरे से बचने के लिए सोने के पूर्व दवा की गोली निगल जाते हैं।
- *शरीर में विषैले तत्त्वों का प्रवेश*– दवा के साथ अधिक रसायन शरीर में आ जाते हैं, जिन्हें वह सम्हाल नहीं सकता और उसका विरोध प्रकट करता है।
- *असन्तुलन*– इन दवाओं से शरीर के विभिन्न संस्थानों में असंतुलन बढ़ जाता है। इससे पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त करने में काफी समय लगता है।

अपने अनुभव के आधार पर हमारा यही विचार है कि कफ को हटाने एवं श्वासनलिका को स्वच्छ करने की क्रिया में दवाओं की अपेक्षा योग की विश्रान्तिकारक क्रियाएँ, जैसे– योगनिद्रा, तथा शुद्धिकरण की क्रियाएँ, जैसे– कुंजल क्रिया अधिक प्रभावशाली हैं। दवाओं का प्रभाव तत्काल दृष्टिगोचर होता है, परन्तु स्थायी नहीं होता। इसके विपरीत यौगिक क्रियाओं का ऐसा नाटकीय प्रभाव दिखाई नहीं देता, परन्तु धीरे-धीरे उनसे जो सुधार होता है वह स्थायी तथा लम्बी अवधि के लिये होता है। यौगिक विश्रान्ति के अभ्यासोपरान्त रोगी में इतना विश्वास एवं क्षमता आ जाती है कि वह अगले दौरे का सामना बिना किसी क्षति के कर सकता है।

6

सामान्य ओषधि उपचार

दमा से पीड़ित अधिकतर व्यक्ति एक या अनेक दवायें लेते रहते हैं। यह उपचार कैसे काम करता है, इसे समझ लेना आवश्यक है, जिससे दवा से योग की ओर अधिकाधिक सरलता से बढ़ा जा सके। दमा के जो रोगी अतिरिक्त सुरक्षा की भावना से दवा का कुछ उपयोग करना चाहते हैं उन्हें सलाह दी जाती है कि वे अपने विषय में अधिक-से-अधिक जान लें। सामान्य उपचार चार श्रेणियों में आता है – श्वसनी-विस्तारक; विसंकुलक; शोथ रोधी तत्त्व तथा स्थानीय रूप से सक्रिय पदार्थ।

श्वसनी-विस्तारक

1. स्प्रे – जैसे साबल्यूटेमोल, आइसोप्रेनालीन
2. एड्रिनलिन या उससे व्युत्पन्न पदार्थ – यद्यपि यह इतनी प्रभावकारी नहीं है, परन्तु इसके अनेक पार्श्व प्रभाव होते हैं।
3. कॉफीन से व्युत्पन्न – थियोफिलीन, एमिनोफिलीन

इन दवाओं का उपयोग कम-से-कम होना चाहिए, क्योंकि इनका पार्श्व प्रभाव होता है, जैसे – अति उत्तेजना और परेशानी। अत: इनका यदाकदा ही प्रयोग हो और वह भी जब अत्यन्त आवश्यक हो।

विसंकुलक

इसके अन्तर्गत एन्टीहिस्टेमिन्स एवं कॉर्टिकोस्टरॉयड आते हैं। ये एलर्जी को दबाते हैं तथा कभी-कभी दमा के उपचार के लिए उपयोग में लाये जाते हैं। ये विभिन्न प्रकार के होते हैं, परन्तु कोई भी गम्भीर दौरे के समय

विशेष प्रभावशाली नहीं होता। सभी कार्टिकोस्टरॉयड हार्मोन कार्टिजोन के परिवर्तित रूप होते हैं, जैसे–हाइड्रोकार्टिजोन, प्रेडनीसोन, बिटामेथासोन, डेक्सामिथासोन आदि। ये प्रभावशाली होते हैं, परन्तु इनके प्रयोग के साथ पार्श्व प्रभाव का खतरा जुड़ा रहता है। अत: जितनी जल्दी संभव हो इनका प्रयोग बन्द कर देना चाहिये।

स्थानीय रूप से सक्रिय पदार्थ

इसके अन्तर्गत तीन महत्त्वपूर्ण दवाएँ हैं–

1. *डाइ-सोडियम क्रोमोग्लायकेट* के निरन्तर प्रयोग से रोग का दौरा नहीं आता। प्रतिदिन चार बार या इससे अधिक बार इसका प्रयोग करना चाहिये। इसके चूर्ण को एक विशेष वस्तु के द्वारा ग्रहण किया जाता है। इसका प्रयोग प्रकोपों की मध्यावधि में होता है। योग को अपनाते हुए धीरे-धीरे दवा की मात्रा कम करते जाना चाहिये।
2. *बिक्लोमेथासोन* एक कॉर्टिकोस्टरॉयड है। यह श्वसन नलिकाओं पर स्थानीय प्रभाव डालता है। इसका प्रभाव विशेष क्षेत्र पर पड़ता है। अत: अन्य दवाओं की भाँति कुप्रभाव की सम्भावना अधिक नहीं होती, परन्तु कुछ-न-कुछ बुरा प्रभाव तो पड़ता ही है।
3. *साबल्युटेनोल* और *आइसोप्रेनालीन* भी इस समूह में आते हैं।

हम यहाँ यह बतलाना चाहेंगे कि यदि रोगी लम्बे समय तक दवाएँ लेने का आदी हो चुका हो तो दवाओं के प्रयोग को एकदम से बन्द नहीं करना चाहिये। जैसे-जैसे योग का प्रभाव होता है और आत्म-विश्वास बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे दवाओं के प्रयोग को कम करना चाहिये।

7

भोजन और उपवास

दमा के उपचार में भोजन का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसलिए उपचार के दौरान भोजन के विषय में सावधानी रखना बहुत जरूरी है। दमा के रोगी को कफ पैदा करने वाले भोजन का परित्याग करना बहुत आवश्यक है, क्योंकि कफ बढ़ जाने से श्वसन प्रणाली में अवरोध उत्पन्न हो जाता है। उचित भोजन के द्वारा हम इस प्रणाली के कार्यों को सुचारु रूप से चलाने में मदद कर सकते हैं।

जो स्वस्थ व्यक्ति पर्याप्त व्यायाम करता है उसे किसी भी प्रकार का भोजन पचाने में कोई तकलीफ नहीं होती। व्यायाम पाचन संस्थान से अपशिष्ट पदार्थों के निष्कासन में सहायक होते हैं तथा शरीर को संतुलित बनाये रखते हैं। किन्तु दमा के रोगी को ख्याल रखना चाहिये कि वह असन्तुलित तंत्रिका-तंत्र के साथ उपचार आरम्भ कर रहा है। अत: सर्वप्रथम उसे सन्तुलन प्राप्त करना चाहिए तथा इस सन्तुलन को बनाए रखने हेतु अपने तंत्र को सबल एवं सुरक्षित रखना चाहिए।

प्रारम्भ में अपनी जीवनशैली के आधार के रूप में एक प्रकार के पथ्य पर रहें। जब थोड़ी शक्ति का अनुभव होने लगे तब परिवर्तन किया जा सकता है। अपने भोजन तथा स्वयं पर उसके प्रभावों को जानने के लिए एक स्थायी आधार आवश्यक है। नियमित रहने पर भोजन सम्बन्धी प्रत्येक परिवर्तन का प्रभाव अधिक स्पष्ट हो जाता है। उदाहरणार्थ, यदि आप भोजन में चावल जोड़ लेते हैं, तो आप पायेंगे कि कफ उत्पादन एवं श्वसन आदि में परिवर्तन होता है। साथ ही आप बिना किसी अपराध-बोध के अपनी रुचि का या जो वर्जित हो वह आहार भी यदाकदा ले सकते हैं, क्योंकि यदाकदा किया गया

व्यतिक्रम कोई हानि नहीं करता यदि आपका मूल आहार स्वास्थ्यप्रद है। हम स्वस्थ रहेंगे या दमे से परेशान रहेंगे, यह तो हमारी आदतों पर निर्भर है।

दमा से पीड़ित व्यक्ति के लिए सर्वोत्तम आहार ताजा शाकाहारी भोजन है – उबली, भाप में पकी या कच्ची सब्जियाँ (तली हुई नहीं); फल; शहद; घर में बनी ब्रेड या चपाती; बार्ली तथा अन्य हल्के अनाज, किन्तु चावल नहीं; मूँग दाल, अरहर दाल आदि; फलियाँ, जैसे – ताजे मटर, सेम, गिरीदार फल आदि का सेवन शरीर में शक्ति बढ़ने के साथ किया जा सकता है। उपचार की अवधि में नमक का सेवन अधिक मात्रा में किया जा सकता है, शक्कर कम मात्रा में लें। दमा के उपचार के लिए यह एक कुंजी है।

भारी, वायुकारक आहार, जैसे – गोभी, कद्दू, मसूर; स्टार्चयुक्त खाद्य, जैसे – चावल और बेकरी की ब्रेड; मृत, संसाधित, कृत्रिम रूप से रंगे हुए तथा कृत्रिम स्वाद वाले खाद्य; सफेद शक्कर, केक एवं पेस्ट्री; दूध और दुग्ध उत्पाद, जैसे – पनीर, मक्खन, दही; तला हुआ या भारी भोजन न लें। विशेष रूप से ठण्ढ के मौसम में, जब शरीर में कफ अधिक मात्रा में बनता है, इन चीजों से परहेज करें।

ये सुझाव केवल मार्गदर्शन के रूप में दिये गये हैं। यह भी आवश्यक है कि आहार के सम्बन्ध में आप बहुत अधिक कट्टर नहीं बनें। यदाकदा व्यक्ति जो खाता है, उसका उतना महत्त्व नहीं, जितना प्रतिदिन खाये जाने वाले भोजन और उसकी मात्रा का। हर चीज की भाँति आहार के सम्बन्ध में भी संयत दृष्टिकोण रखना रोग से बचने के लिए सबसे अच्छा है।

अधिक भोजन

अधिक खाना एक सार्वभौम व्याधि है, जिससे दमा के रोगी को सावधानीपूर्वक बचना चाहिए। अन्य चीजों के अतिरिक्त अधिक भोजन आमाशय को फैला देता है, फलस्वरूप उदर की निम्नगति सीमित हो जाती है, जिसके कारण फेफड़े का पूर्ण विस्तार बाधित हो जाता है। फेफड़े के निचले भाग की वायु थैलियाँ फैले अमाशय के द्वारा संकुचित होकर दब जाती हैं। दमा के रोगी के फेफड़े का कुछ भाग तो वैसे ही कफ के कारण अवरुद्ध रहता है। फलस्वरूप अधिक खाना खा लेने से सामान्य श्वास प्रक्रिया भी कष्ट साध्य हो जाती है। वेगस नाड़ी, जो आमाशय और फेफड़े दोनों से जुड़ी है, उसकी भी प्रतिवर्त्त क्रिया होती है। शरीर के एक भाग का तनाव दूसरे भागों में भी तनाव प्रकट करता है।

अधिक भोजन सामान्यत: तनाव या निराशा के कारण किया जाता है। जब कुछ आवश्यकताएँ प्रत्यक्ष रूप से पूरी नहीं होतीं, तो मन अधिक खाना लेकर उसकी पूर्त्ति करने का प्रयास करता है। वस्तुत: उससे पूर्त्ति तो होती नहीं है, आमाशय पर अधिक दबाव देने से तनाव अधिक बढ़ जाता है। इस अधिक भोजन की आदत को समाप्त करने हेतु प्रबल इच्छाशक्ति की आवश्यकता होती है, किन्तु यह प्रयास बहुत उपयोगी है। दमा के रोगी के लिए, जो स्वस्थ होना और स्वस्थ रहना चाहता है, सादा सन्तुलित आहार आवश्यक है।

पाचन में सहायक

यदि निम्नलिखित बातों का पालन किया जाये तो पाचन में सहायता मिलेगी तथा शरीर में शक्ति संचित रहेगी। इन्हें आसानी से अपने दैनिक जीवन में अपनाया जा सकता है जिसका काफी लाभ होगा।

1. दो भोजनों के बीच के समय में पर्याप्त पानी पीयें, पर भोजन के बीच में नहीं। भोजन के समय आमाशयिक रस को पर्याप्त रूप से गाढ़ा रखना आवश्यक है, जिससे पाचन अधिक सरलता से हो। भोजन के आधा घण्टा बाद पानी पीया जा सकता है।
2. भोजन के लिए बैठने के पूर्व एवं भोजन के बाद हाथों, मुँह एवं चेहरे को अच्छी तरह धो लें।
3. भोजन के पश्चात् दस या पन्द्रह मिनट तक वज्रासन में बैठना चाहिये। यह आसन पाचन क्रिया में सहायक है तथा शरीर को विश्रान्ति प्रदान करता है।
4. भोजन के पश्चात् ताजी हवा में धीरे-धीरे टहलना पाचन संस्थान को ठीक रखने का एक अच्छा तरीका है।

कोष्ठबद्धता (कब्ज)

दमा का एक कारण कब्जियत या कोष्ठबद्धता भी हो सकती है, जिसमें मल बड़ी आँत में सूख कर कठोर हो जाता है। इसके कारणों में अधिक देर तक बैठे रहने वाली जीवनशैली, कम पानी पीना, गलत भोजन करना, कमर में बेल्ट या धोती कसकर पहनना हो सकते हैं, जो शारीरिक प्रक्रिया दमा में काम करती है वही कोष्ठबद्धता में भी काम करती है।

जब आँतें ठीक से काम करती हैं तब शरीर विषाक्त तत्त्वों को शीघ्रतापूर्वक बाहर कर सकता है और शारीरिक अवस्था उन्नत रहती है। दमा के रोगी के

दबावग्रस्त शरीर पर कोष्ठबद्धता अतिरिक्त दबाव बढ़ा देती है। निम्नांकित सुझावों द्वारा इससे बचा जा सकता है–

1. प्रातःकाल उठकर दो गिलास कुनकुने जल का सेवन कीजिये।
2. दिन के समय अधिक-से-अधिक पानी पीयें। कई व्यक्ति पर्याप्त मात्रा में पानी नहीं पीते, इससे शरीर में पानी की कमी हो जाती है। इससे पेशाब की मात्रा कम हो जाती है तथा उसका रंग गहरा हो जाता है। भोजनों के मध्य कम-से-कम एक कप पानी अवश्य पीना चाहिये। मौसम के अनुसार अधिक भी पी सकते हैं।
3. पर्याप्त मात्रा में ताजे फल खाइए। विशेषकर पपीता एवं आलूबुखारा। केला नहीं खाना चाहिये, क्योंकि इसमें मल को ठोस बनाने की प्रवृत्ति होती है।
4. कड़े ठोस पदार्थ एवं अधिक मात्रा में रोटी न ली जाये। साग-सब्जियाँ लाभप्रद होंगी।
5. आसनों के अभ्यास से पाचन संस्थान एवं सम्पूर्ण शरीर स्वस्थ अवस्था में रहेगा।

उपवास

दमा के रोगियों के लिये उपवास बहुत ही लाभकारी है। आजकल लोग भोजन अधिक कर लेते हैं, परन्तु विश्राम कम करते हैं। इससे तनाव उत्पन्न होते हैं। हमारी आहार सूची बहुत लम्बी होती है। दिन में दो बार संयत भोजन करना पर्याप्त है। इसके अतिरिक्त दमा के अधिकतर रोगी अनेक वर्षों तक ओषधियों का सेवन करते रहे हैं। ये विषाक्त तत्त्व उनके शरीर में जमा होते रहते हैं और अधिक असंतुलन उत्पन्न करते हैं।

इन समस्याओं से निपटने के लिए उपवास सबसे अच्छा उपाय है। उपवास द्वारा पाचन संस्थान की शुद्धि सम्भव है। यहाँ उपवास से हमारा तात्पर्य चालीस दिनों तक अन्न न ग्रहण करने से नहीं है, बल्कि शरीर को शुद्ध रखने के लिए किया गया संयत एवं सन्तुलित भोजन भी उपवास ही है। उपवास से पेट ज्यादा तना नहीं रहता। दमा के रोगी पायेंगे कि जब दमा का तेज दौरा पड़ता है उस समय उपवास विशेष रूप से प्रभावकारी होता है और कफ आसानी से फेफड़ों से बाहर निकल जाता है। जिससे वे बिना किसी प्रयास के उन्मुक्त रूप से श्वास ले सकते हैं। फेफड़ों से

कफ को बाहर निकालने के लिए उपवास के साथ आसनों का अभ्यास एक आदर्श उपाय है।

उपवास हमारे शरीर को हल्का बनाता तथा विजातीय एवं विषाक्त पदार्थों को हटाने में मदद करता है। श्वास का प्रवाह जब निर्विरोध होता रहेगा तो प्राण शक्ति को बल मिलेगा एवं मानसिक दबाव और तनाव कम होंगे। आपका अनुभव स्वयं ही उपवास के लाभ प्रदर्शित करेगा। ध्यान रहे कि जो लोग बहुत अधिक मात्रा में ओषधियों का प्रयोग करते हैं और शरीर से बहुत कमजोर हैं उन्हें उपवास करते समय बहुत ही सावधानी रखनी चाहिए। उपवास तभी एक अच्छी विधि है जब इसका प्रयोग ठीक ढंग से सावधानीपूर्वक किया जाए; यदि उपवास विधिवत् न किया गया तो हानिकारक भी सिद्ध हो सकता है। यदि शरीर में बहुत अधिक विषाक्त तत्त्व हों तो अचानक उपवास आरम्भ करने से ये विषाक्त तत्त्व बहुत अधिक मात्रा में बाहर निकलने लगेंगे और शरीर इन्हें सम्हाल नहीं पायेगा, जिससे बहुत अधिक असुविधा होगी और हो सकता है कोई बीमारी भी हो जाए। यदि दमे का रोगी बहुत लम्बी अवधि तक उपवास करता है, अथवा उपवास के समय जल्दी-जल्दी बहुत से आसन करता है तो ऐसा हो सकता है। यह प्रक्रिया धीमी और स्थिर होनी चाहिए। नियमित रूप से अल्पावधि के लिए किये गये उपवास का भी उतना ही प्रभाव होता है जितना लम्बे उपवास का; यहाँ तक कि जब-तब एक भोजन छोड़ देने से ही शरीर स्वस्थ और मजबूत हो जाता है। दिन में एक बार भोजन करना अच्छा है।

उपवास के समय आसनों के अभ्यास में विशेष सावधानी रखनी चाहिये। उपवास काल में आसन करना सरल हो जाता है, परन्तु आसनों को तेज गति से तथा अधिक अवधि तक नहीं करना चाहिये। वस्तुत: आसन धीरे-धीरे और थोड़े समय तक ही करने चाहिए। (विशेष रूप से सिर के बल किए जाने वाले आसन) जिससे विषाक्त तत्त्व अचानक ही न निकलने लगें।उपवास के लिये सर्वोत्तम समय ग्रीष्म ॠतु है, क्योंकि इस मौसम में शरीर को कम ताप की आवश्यकता होती है। सप्ताह में एक दिन का उपवास पर्याप्त है। बाद में इच्छानुसार समय बढ़ाया जा सकता है। उपवास के लिये ऐसे दिन का चुनाव करना चाहिये जब शारीरिक एवं मानसिक परिश्रम कम-से-कम करना पड़े तथा मन शान्त हो। ऐसी स्थिति में उपवास द्वारा अधिक शक्ति का संचार किया जा सकता है।

दमा के दौरे की आशंका होते ही उपवास करना उत्तम है। दमा का प्रकोप इस बात का संकेत देता है कि शरीर तनाव की स्थिति में है तथा विषाक्त तत्त्व

अधिक मात्रा में एकत्र हो गये हैं। उपवास से रोग के लक्षण दूर हो जायेंगे तथा तन्त्रिका तन्त्र का संचित तनाव दूर हो जायेगा। उपवास का प्रभाव दवा की भाँति तुरंत दिखाई नहीं देता, परन्तु परिणाम अधिक लाभप्रद होंगे। हम पुन: इस बात की ओर ध्यान आकृष्ट करते हैं कि उपवास दीर्घकालीन न हो। यदि रोगी को शक्तिहीनता का अनुभव हो तो कम मात्रा में सादा भोजन लेना उचित होगा।

नये लोगों का उपवास

जो इस अभ्यास में नये हैं उन्हें दिन के भोजन से अगले दिन के भोजन तक उपवास करना चाहिए। इसमें सोने का समय (रात्रि) बीच में पड़ जाने से भूख की पीड़ा मालूम नहीं पड़ेगी। शाम के भोजन के बदले में जल, हल्की चाय या फलों का रस लिया जा सकता है। इस उपवास से दूसरे दिन सुबह का भोजन लेने के लिये शरीर में नई शक्ति आ जायेगी। उपवास के समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए–

1. उपवास के पूर्व का भोजन हल्का हो ताकि पेट खाली रहना सहन कर सके। उस समय सलाद लेना उत्तम होगा।
2. उपवास की अवधि में अधिक मात्रा में पानी पीना चाहिये। इससे विषाक्त तत्त्व बाहर निकल जायेंगे। वृक्कों की सफाई होगी तथा उन्हें नवीन शक्ति प्राप्त होगी। यदि भूख मालूम पड़े तो फलों का रस लिया जा सकता है। शरीर को विषाक्त तत्त्वों से मुक्त करने में सन्तरे एवं नीबू का रस उपयोगी है।
3. उपवास के बाद का भोजन हलका हो। इस समय सलाद या फल लेना ही उचित होगा ताकि भूखा पेट धीरे-धीरे अपने को समायोजित कर सके।
4. दमा के रोगी को दो दिनों से अधिक का उपवास नहीं करना चाहिये। कुछ लोगों के लिये दीर्घकालीन उपवास की सलाह अवश्य दी जाती है, परन्तु इसे निर्देशक के मार्गदर्शन में ही करना चाहिये।

अधिक दिनों का उपवास गर्मी के दिनों में उस समय करना चाहिये जब अभ्यासी को पूर्णत: आराम के लिए पर्याप्त समय मिले। प्रथम तीन दिनों तक भूख अधिक सतायेगी, अत: इन दिनों में कभी-कभी फलों का रस एवं उबली हुई सब्जियाँ ही लेनी चाहिये। नीबू का रस, जैतून का तेल एवं शहद समान मात्रा में मिलाकर प्रतिदिन एक गिलास लेना चाहिये। यह एक अच्छे टॉनिक का कार्य करता है।

सम्पूर्ण भोजन

यदि आहार एवं उपवास के सम्बन्ध में दिये गये उपर्युक्त सुझावों को अपने दैनिक जीवन में सम्मिलित कर लिया जाय तो शरीर में ऊर्जा एवं प्राण-शक्ति को बढ़ाया जा सकता है। जिस प्रकार के भोजन का सुझाव दिया गया है वह पोषक तत्त्वों से भरपूर होने के साथ ही अधिकतर लोगों की दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त है, साथ ही पाचन में कम ऊर्जा का व्यय होता है और अधिक ऊर्जा फेफड़ों और तन्त्रिका-तन्त्र में उपचारात्मक शक्ति को बढ़ाने के लिए प्रेषित की जाती है। भोजन में किसी भी परिवर्तन का परिणाम एकाएक देखने को नहीं मिलेगा, किन्तु कुछ महीनों में व्यक्तिगत अनुभव से इसकी प्रमाणिकता स्वयं सिद्ध हो जायेगी। भोजन हमारे जीवन का मुख्य अंग है, अतः हमें बुद्धिमत्ता एवं वैज्ञानिक ढंग से इसके सही उपयोग को जानना चाहिये।

8

यौगिक उपचार

जो व्यक्ति रोग से तीव्र रूप से पीड़ित है, वह आराम पाने के लिए, रोग के लक्षणों को दबाने के लिए कुछ भी करेगा, चाहे ओषधि का सहारा ले या अन्य कोई उपाय करे। परन्तु योग और प्राकृतिक दृष्टि से यह एक भूल होगी। शरीर में एकत्र एवं संचित विषाक्त तत्त्वों, रसायनों, अपशिष्ट द्रव्यों, जिनसे प्रधान कोशिकाएँ, लसिका, तंत्रिका तथा अन्य शारीरिक प्रणालियाँ अवरुद्ध हो गई हैं, उनको साफ कर शरीर को स्वस्थ एवं सन्तुलित करने हेतु रोग प्रकृति का एक प्रयास है।

ये विकार शरीर क्रियात्मक कार्यों को अस्त-व्यस्त कर देते हैं। फलस्वरूप प्राण ऊर्जाओं के क्षेत्र विकृत हो जाते हैं और रोग प्रकट होता है। शारीरिक ऊर्जा की विकृति से मन प्रभावित होता है। फिर पीड़ा, तनाव और दु:ख उत्पन्न होते हैं। शरीर की विकृत प्रक्रियाओं में सुधार लाकर उन्हें स्वाभाविक रूप से कार्य करने योग्य बनाने हेतु रोग प्रकृति की एक क्रिया विधि है। अत: इस प्रक्रिया का विरोध न कर इसमें सहयोग देना चाहिए जिससे कम समय में कम-से-कम कष्ट और अधिक लाभ के साथ यह सम्पन्न हो जाय। योग से इस उच्च उद्देश्य की प्राप्ति होती है।

इस पुस्तक में हम उन्हीं उपायों की चर्चा कर रहे हैं जो हमारे अनुभव के अनुसार उपचार के लिए सर्वोत्तम हैं। इसमें व्यक्तिगत रुचि और आवश्यकताओं के अनुसार चुनाव एवं विविधता के लिए स्थान है। इसमें एक अच्छी सूची है जिसमें से अपनी रुचि एवं आवश्यकतानुसार चयन कर सकते हैं। इस अध्याय को यौगिक-पाक-कला-पुस्तिका मान सकते हैं, जिसमें से प्रत्येक व्यक्ति अपने लिए नुस्खा चुन सकता है। जिन विषयों पर प्रकाश डाला

गया है, वे हैं– शुद्धिकरण विधियाँ, आसन, प्राणायाम, विश्रान्ति, यौगिक मनोवृत्ति तथा आश्रम कार्यक्रम। उपचार के दो पक्ष इसमें हैं –

1. तीव्र दौरे के समय किये जाने वाले अभ्यास।
2. दौरे को क्रमश: कम करने वाले दीर्घकालिक अभ्यास।

इन क्रियाओं के सुसंगत, नियमित अभ्यास से ही पूर्ण उपचार सम्भव होता है। प्रतिदिन कुछ मिनटों तक विश्रान्त भाव से अभ्यास करना दीर्घकालिक अनियमित अभ्यास से कहीं बेहतर है। कछुए और खरगोश की नीति-कथा ध्यान में रखिये। आपको अनुभव होगा कि जैसे-जैसे अभ्यास नियमित होता जाएगा, इसके लिए कोई प्रयास नहीं करना पड़ेगा और विश्रान्ति बढ़ती जाएगी।

शुद्धिकरण की क्रियाएँ

दमा के रोग से मुक्ति के लिये हठयोग की क्रियाएँ योग चिकित्सा का बहुत ही महत्त्वपूर्ण अंग हैं। इन क्रियाओं में उपयोग में लाया जाने वाला नमक बलगम को पतला करके बाहर निकालने में मदद करता है जिससे श्वसन में सुविधा होती है।

प्रात:काल आसन एवं ध्यान के पूर्व निम्नलिखित क्रियाओं का अभ्यास बहुत ही उपयोगी होता है –

कुंजल क्रिया – इस क्रिया में नमकीन गुनगुना पानी पीते हैं तथा उसके बाद गले में उँगलियों को डालकर वमन क्रिया करते हैं। दमा के प्रकोप के समय भी कुंजल क्रिया अत्यन्त लाभप्रद है। इसका तन्त्रिका-तन्त्र पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। इसके द्वारा श्लेष्मा तथा जठर के अनुपयोगी पदार्थों का निष्कासन होता है। इसे प्रतिदिन करने से दमा के प्रकोप को रोका भी जा सकता है। प्रकोप के पूर्व एवं प्रकोप के समय कुंजल क्रिया का नियमित अभ्यास अत्यन्त लाभकारी है।

नेति क्रिया – इस क्रिया में नमकीन गुनगुने पानी द्वारा नासिका छिद्रों की सफाई की जाती है। इससे छिद्र खुल जाते हैं तथा सहज श्वास में तकलीफ नहीं होती। नेति करने से प्राणायाम का अभ्यास अधिक प्रभावशाली हो जाता है। नियमित अभ्यास से नासिका छिद्र स्वस्थ होने लगेंगे और लम्बी अवधि तक खुले रहेंगे। इस स्थिति में पहुँचने पर प्रतिदिन नेति करने की आवश्यकता नहीं रहेगी। नेति क्रिया के तीन प्रकार हैं–

- *जल नेति*– इसके लिये एक विशेष प्रकार के लोटे की आवश्यकता होती है जिसे 'नेति लोटा' कहते हैं। इसमें चाय की केतली की तरह टोंटी लगी रहती है।
- *सूत्र नेति*– इसे जल नेति से पहले किया जाता है। इसमें रबर की सूक्ष्म नली (कैथेटर) या विशेष ढंग से बनाये गये धागे का प्रयोग किया जाता है।
- *व्युत्क्रम नेति*– इस क्रिया में मुँह से पानी खींचकर नासिका से बाहर निकाला जाता है।

वस्त्र धौति– पतले मलमल के कपड़े की एक इंच चौड़ी और तीन मीटर लम्बी पट्टी को आधा निगलकर निकालने की क्रिया को 'वस्त्र धौति' कहते हैं। कपड़े को लगभग बीस मिनट तक मुँह में रखना चाहिये। इसे कुंजल और नेति क्रिया के बाद किया जा सकता है। यह क्रिया सरल है, परन्तु कुछ लोगों को कठिनाई हो सकती है। यदि कपड़े की पट्टी को स्व-मूत्र में भिगो दिया जाये तो तीव्र प्रकोप में अत्यधिक लाभ होता है। इस क्रिया को दो सप्ताह तक लगातार करते हैं। उसके बाद सप्ताह में एक बार कर लेना काफी है। परंतु इसे व्यक्ति विशेष की आवश्यकता के अनुसार निर्धारित किया जा सकता है।

शंखप्रक्षालन– यह सम्पूर्ण पाचन तन्त्र की सफाई की शक्तिशाली क्रिया है। इसे अधिक मात्रा में नमक मिले गुनगुने पानी और कुछ आसनों के साथ किया जाता है। लघु शंखप्रक्षालन इस क्रिया का छोटा रूप है, जिसमें कम मात्रा में पानी पीकर उन्हीं आसनों का किया जाता है। इसे दमा के प्रकोप के दौरान किया जा सकता है। इसके द्वारा बलगम एवं आँव को निकालकर म्यूकस ग्रंथियों को पुष्ट करने में सहायता मिलती है। नमक मिला पानी फेफड़ों और अन्य अंगों में जमे म्यूकस (श्लेष्मा) को सोखकर बाहर निकालने में मदद करता है। इससे स्नायुओं का तनाव कम होता है। इस क्रिया को करने में काफी समय लगता है तथा थकान का अनुभव होता है। इसके बाद विश्राम बहुत आवश्यक है। पूर्ण शंखप्रक्षालन करने के पश्चात् भोजन सम्बन्धी नियमों का पालन आवश्यक है, किन्तु लघु शंखप्रक्षालन के पश्चात् नहीं।

नोट– ये क्रियाएँ योग्य शिक्षक के मार्गदर्शन के बिना नहीं करनी चाहिये। प्रतिदिन नियमित अभ्यास करने वालों को निम्नलिखित सावधानियाँ रखनी चाहिये।

1. इन क्रियाओं को प्रात:काल खाली पेट करना चाहिये।
2. लघु शंखप्रक्षालन एवं कुंजल क्रिया के बाद कम-से-कम आधे घण्टे तक नाश्ता, भोजन या जल इत्यादि न लिया जाये।

आसन

आसन से शरीर को शक्ति और विश्राम दोनों प्राप्त होते हैं। आसन करते समय ऊतक स्पंज की तरह निचोड़े जाते हैं। इससे रक्त विशिष्ट अंगों की ओर प्रवाहित होता है और रक्त के साथ विषाक्त तत्त्व भी बह जाते हैं। लम्बे समय तक आसनों के अभ्यास से शरीर की बनावट में कोई गड़बड़ी नहीं रह जाती। अंगों की विकृति को आसनों से दूर किया जा सकता है। जैसे – छाती के धँस जाने से कूबड़ निकल आता है, वह आसनों से दूर हो सकता है।

आसन तो अनेक हैं, परन्तु व्यक्ति विशेष के सुविधानुसार आसनों का चुनाव किया जा सकता है। हमारे अनुभवसिद्ध आसन इस प्रकार हैं – सूर्य नमस्कार, मार्जारि आसन, शशांकासन, शशांक भुजंगासन, भुजंगासन, प्रणामासन, सर्वांगासन, पश्चिमोत्तानासन, योगमुद्रासन, धनुरासन, अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन एवं शवासन।

यद्यपि उपर्युक्त सभी आसन लाभकारी हैं, फिर भी प्रत्येक व्यक्ति के लिए कुछ आसन अन्य आसनों की अपेक्षा अधिक प्रभावकारी होते हैं। अत: प्रत्येक व्यक्ति को इन आसनों में से कुछ आसन चुन लेने चाहिये जो उसके लिए सर्वाधिक लाभकारी हों, और उन्हीं का अभ्यास करना चाहिए। जैसे एक दमा के रोगी को मात्र सर्वांगासन, पश्चिमोत्तासन, धनुरासन एवं अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन आदि आसनों से लाभ हुआ।

जिन लोगों ने अभी तक आसनों का अभ्यास नहीं किया है उनके लिये ये उच्च आसन कठिन हो सकते हैं। अत: ऐसे लोगों को आरम्भ में दो सप्ताह तक पवनमुक्तासन का अभ्यास करना चाहिये। इससे शरीर के जोड़ों में लोच आ जायेगी तथा अन्य आसन करने में सुविधा होगी।

प्राणायाम

तनावों से छुटकारा पाने के लिये प्राणायाम एक बहुत ही उपयोगी अभ्यास है। यह प्रक्रिया बहुत ही शक्तिशाली है, अत: शरीर को धीरे-धीरे इसके लिये तैयार करना पड़ता है। प्राणायाम से फेफड़ों का अच्छा व्यायाम होता है। इससे स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र सन्तुलित होता है एवं मध्यवर्ती नाड़ी-संस्थान को शक्ति प्राप्त होती है। प्राणायाम के अभ्यास से आत्मविश्वास बढ़ता तथा मस्तिष्क पर नियन्त्रण प्राप्त होता है। प्राणायाम का अभ्यास आसनों के बाद किया जाता है। यहाँ कुछ सरल अभ्यास दिये जा रहे हैं।

1. एक सरलतम अभ्यास यह है कि पहले धीरे-धीरे पूरक कीजिये। पूरक के समय कलाई के सामने के भाग में अंगूठे के तरफ की नाड़ी की गति की छह या अधिक बार गिनती कीजिये। इतनी ही गिनती तक रेचक कीजिये। इस क्रिया को हृदय की धड़कन की गणना करते हुए भी कर सकते हैं। हृदय की धड़कन को बारह तक गिनते हुए पूरक कीजिये। इतनी ही संख्या तक रेचक कीजिये। कुछ समय बाद हृदय की गति एवं श्वसन की गति मंद एवं धीमी हो जायेगी।
2. नाड़ीशोधन प्राणायाम नियमित अभ्यास के दृष्टिकोण से एवं तीव्र प्रकोप के समय अत्यन्त लाभकारी है। बायें नथुने से पाँच बार पूरक एवं दाहिने नथुने से पाँच बार रेचक कीजिये। अब दाहिने नथुने से पाँच बार पूरक एवं बायें नथुने से पाँच बार रेचक कीजिये। यह एक आवृत्ति है। इस प्रकार पच्चीस आवृत्तियाँ कीजिये। इसके द्वारा शक्ति एवं शिथिलीकरण की प्राप्ति होती है तथा श्वसन एवं स्नायु-संस्थान को शुद्ध करने में मदद मिलती है।
3. कुंभक के साथ भस्त्रिका प्राणायाम के अभ्यास से फेफड़ों को शक्ति मिलती है। प्रकोप को रोकने की यह बहुत शक्तिशाली विधि है। इनसे फेफड़ों के सब वायुकोष्ठ खुल जाते हैं। रक्त में ऑक्सीजन का समावेश होता तथा गहन शिथिलीकरण की अवस्था प्राप्त होती है।

आसनों एवं प्राणायामों का निम्नलिखित संयोजन दमा के रोगी के लिए बहुत उपयोगी पाया गया है –

1. सीधे खड़े हो जाइये। पैर परस्पर समीप रहें। हाथों को दोनों बाजू में रखिये। गहरी श्वास खींचते हुए दोनों हाथों को शरीर के सामने कंधों के समानान्तर फैलाइये। अब उन्हें धीरे-धीरे बाहर की ओर दोनों ओर फैलाते हुए कुछ पीछे ले जाइये। रेचक करते हुए हाथों को पूर्ववत स्थिति में ले आइये। अभ्यास की पाँच आवृत्तियाँ कीजिये।
2. पैरों को परस्पर समीप रखते हुए सीधे खड़े हो जाइये। हाथों को सामने फैलाइये। एक कलाई दूसरी कलाई के ऊपर रखिये। धीरे-धीरे गहरा पूरक करते हुए हाथों को सिर के ऊपर उठाइये। हाथों को ऊपर उठाते समय उन्हें धीरे-धीरे स्वतंत्र कीजिये। अत: कलाइयों को एक-दूसरे के ऊपर से हटा लीजिये। अब रेचक करते हुए हाथों को दोनों बाजुओं में ले जाइये। अभ्यास की चार आवृत्तियाँ कीजिये।

3. सीधे खड़े हो जाइये। दोनों पैरों के मध्य लगभग 15 इंच का फासला हो। हाथों को सिर के ऊपर उठाइये। हथेलियों को ढीला रखिये। पूरक कीजिये। मुँह से हाऽऽऽ आवाज के साथ रेचक करते हुए एवं शरीर को ढीला रखते हुए नितम्बों से नीचे झुकिये। दोनों हाथ ढीले होकर पैरों के मध्य झूलें। इसकी पाँच आवृत्तियाँ कीजिये।
4. सीधे खड़े हो जाइये। दोनों पैर समीप रहें। दोनों हाथ बाजू में रखिये। गहरा पूरक कीजिये। कुंभक कीजिये। उँगलियों से छाती एवं दोनों बाजुओं को धीरे से परन्तु अच्छे से थपथपाइये। इस अवधि में अधिकतम देर तक स्थिर रहिये। अब रेचक कीजिये। इसकी पाँच आवृत्तियाँ कीजिये।
5. पूर्व वर्णित विधि से खड़े हो जाइये। पूरक कीजिये। उसके बाद मुख से हा, आ, आ की ध्वनि करते हुए रेचक कीजिये। पाँच आवृत्तियाँ कीजिये।
6. पूर्ववत् खड़े रहकर गहरा पूरक कीजिये। दाँतों की पंक्तियों को एक दूसरे पर रखिये। अब मुख से शीऽऽऽ आवाज करते हुए रेचक कीजिये। अभ्यास की पाँच आवृत्तियाँ कीजिये।
7. शवासन में यौगिक श्वसन का अभ्यास किया जाता है। यह अभ्यास विश्राम करते समय शवासन में तथा जब भी सजगतापूर्वक श्वसन करने का अवसर मिले तब किसी अन्य भंगिमा में किया जा सकता है। शरीर को शिथिल कीजिये एवं बिना दबाव के दोनों नासिका छिद्रों से पूरक कीजिये। अब उदर प्रदेश को अधिकतम सीमा तक फैलाते हुए पहले फेफड़ों के निचले भाग को वायु से भरिये। फिर निम्न पसलियों एवं छाती को फैलाते हुए फेफड़ों के मध्य भाग को वायु से भरिये। अन्त में कन्धों और छाती के ऊपरी भाग को उठाते हुए फेफड़ों के ऊपरी भाग को वायु से भरिये। अन्तिम स्थिति में निचला उदर प्रदेश धीरे से भीतर खींचा जाता है। अब धीरे-धीरे नासिका से रेचक करते हुए पहले उदर से, फिर फेफड़ों के मध्य भाग से और अन्त में फेफड़ों के ऊपरी भाग से वायु बाहर निकालिये।

उपर्युक्त क्रियाओं के अभ्यास में पारंगत हो जाने के बाद निम्नलिखित उच्च अभ्यास किये जा सकते हैं–

1. नाड़ीशोधन और भस्त्रिका का उच्च अभ्यास बहुत उपयोगी होता है।
2. कपालभाति एक उच्च अभ्यास है जिससे फेफड़ों को शक्ति प्राप्त होती है। यह प्राणायाम बलपूर्वक किये गये रेचक द्वारा फेफड़ों को पूर्णतः

खाली करके शुद्ध वायु ग्रहण करने योग्य बनाता है। यह गुण दमा के रोगी के लिये बहुत उपयोगी है, क्योंकि उसे श्वास बाहर निकालने में बहुत तकलीफ होती है।

3. उज्जायी प्राणायाम के अभ्यास से शरीर को पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन प्राप्त होती है। यह दमा के रोग में असन्तुलित अनुकम्पी और परानुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र को सन्तुलित बनाता है।
4. भ्रामरी प्राणायाम से शिथिलीकरण की प्राप्ति होती है।

नोट–प्राणायाम बड़ी शक्तिशाली क्रिया है। अत: प्रारंभिक अभ्यासी प्राणायाम को बलपूर्वक न करें, जब तक उनका शरीर इन अभ्यासों के लिए तैयार न हो जाए।

विश्रांति

प्रकोप के समय तथा दमा से दीर्घकालीन मुक्ति पाने के लिये सर्वोत्तम विधि योगनिद्रा है। योगनिद्रा में अभ्यासी अपने शरीर को शिथिल करता है। शरीर में किसी प्रकार की हलचल नहीं की जाती। मस्तिष्क पर पूर्ण नियन्त्रण होता है। वह अपनी चेतना को विधिवत प्रत्येक अंग-प्रत्यंग पर ले जाता है। प्रारम्भ में निर्देशक की आवश्यकता पड़ती है, परन्तु बाद में विधि का ज्ञान होने पर कभी तनाव की अवस्था में स्वतंत्र रूप से इसका अभ्यास किया जा सकता है। प्रकोप की अवधि में हृदय एवं फेफड़ों को शिथिल करने के लिये योगनिद्रा श्रेष्ठ विधि है। नियमित अभ्यास का अच्छा ज्ञान हो जाने पर अभ्यासी शरीर के किसी भी अंग में प्राणशक्ति का संचार कर सकता है। रोग निवारण के लिये आवश्यक दृढ़ इच्छाशक्ति एवं संयम अनिवार्य है जो योगनिद्रा से प्राप्त होता है। इसके अभ्यास से धीरे-धीरे शरीर अपनी कमियों को दूर करता जायेगा, बीमारी दूर होगी एवं उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त होगा।

ॐ उच्चारण सरल एवं शक्तिशाली क्रिया है। दमा के रोगी के लिये शिथिलीकरण हेतु यह बहुत लाभप्रद है। गति की दृष्टि से ॐ का उच्चारण कई प्रकार से हो सकता है। धीमी गति से मंत्रोच्चारण के लिये लम्बी एवं गहरी श्वास लीजिये। अब मुखाकृति को गोल बनाते हुए एवं 'ओ ऽऽऽ' का उच्चारण करते हुए गले पर ध्यान देते हुए श्वास छोड़ते जाइये। यह क्रिया सरल एवं तनावरहित है। पूर्ण रूप से रेचक हो जाने पर 'म्' का उच्चारण कीजिये।

प्रारम्भिक अवस्था में मंत्र का उच्चारण जोर से कीजिये। उसके बाद मानसिक रूप से करना चाहिये। ध्यान के किसी आसन में बैठकर मन्त्र का उच्चारण करना उत्तम है। इच्छानुसार अधिक-से-अधिक मन्त्र का उच्चारण कीजिये एवं मंत्र में लीन हो जाने का प्रयत्न कीजिये। मन्त्रोच्चारण से उत्पन्न तरंगों का शरीर पर मालिश का सा प्रभाव पड़ेगा। अपने इच्छानुसार इस प्रभाव को अन्य अंगों की ओर भेजा जा सकता है।

यौगिक मनोभाव

उपचार के क्षेत्र में रोगी का मनोभाव सर्वप्रथम तथ्य है। यदि रोगी अन्तर्तम से स्वस्थ होने की इच्छा रखता हो तो वह अवश्य ही स्वस्थ होगा, परन्तु निराशा और भय बनाये रखने से किसी प्रकार का सुधार नहीं होगा, चाहे जीवन भर सैंकड़ों उपाय करते रहें।

अतः रोगी को जीवन में आशा एवं सुधार की इच्छा रखनी चाहिये। योगाभ्यास के लिये प्रतिदिन निश्चित समय और धैर्य की आवश्यकता है, क्योंकि सुधार एक ही रात्रि में नहीं होगा। सीमा से अधिक अभ्यास शरीर को क्षति पहुँचायेगा। अभ्यास के लिये सुबह का समय उत्तम है। प्रातःकाल के समय को बहुत कीमती समझना चाहिये। प्रातः जल्दी उठने के लिये रात्रि को जल्दी ही शयन करना होगा। परन्तु अंततः इससे लाभ ही होगा।

उपचार प्रारम्भ होने पर कुछ दिनों में रोगी की प्रवृत्ति की परीक्षा होगी। पुरानी बातें एवं घटनाएँ उसके स्मृति-पटल पर उभरेंगी। इससे भावनात्मक उलझनें उत्पन्न होंगी तथा तनाव होगा। परन्तु इन्हें उपचार में उन्नति का संकेत समझना चाहिये। रोगी को सदैव जागरूक रहना है। यह बात अधिक महत्त्वपूर्ण है।

सजगता क्या है? इसका साधारण अर्थ है – सावधानी या सचेतनता। रोगी द्रष्टा बन जाता है। परिस्थितियों से अनासक्त रहकर वह केवल अवलोकन करता है। उसे शारीरिक तथा मानसिक स्थिति और भावनाओं में आनेवाले परितर्वन को निरपेक्ष भाव से नोट करना चाहिए।

सजगता एक कला है। इसे विकसित किया जा सकता है। इसका अभ्यास शान्त बैठे हुए, गाड़ी में बैठे हुए, कतार में खड़े हुए, खाते-पीते, उठते-बैठते, काम करते या रास्ता चलते हुए किया जा सकता है। आपको जागरूकता के साथ उदर की गतिविधियों का अवलोकन करना है। उसके उतार-चढ़ाव पर

विचार मत कीजिये, मात्र उसके प्रति सजग बनिये। यदि किसी विचार के कारण इसमें अवरोध आता है तो मानस-पटल पर इस बात को अंकित कीजिये कि आप सोच रहे थे। यदि आपके धैर्य में कमी लगे तो मानसिक टिप्पणी में अनुभव शब्द आ जायेगा। इसी प्रकार यदि किसी शब्द के आकर्षण से आपका ध्यान उस ओर भटके तो मस्तिष्क में 'श्रवण' शब्द को नोट करें। इसी तरह करते जाइये। मन कुछ देर के लिए अवश्य भटकेगा, परन्तु प्रत्येक बार उसे उदर प्रदेश की गतिविधियों पर लाइये। यदि निराशा आती है तो निराशा को ही अंकित कीजिये। यदि निराशा की अवस्था बनी रहती है तो कुछ समय के लिए अभ्यास को रोकिये, फिर बाद में पुनः प्रयास कीजिए।

उपचार के प्रति आपके आशावादी विचार आपके सम्पूर्ण जीवन में परिवर्तन ला देंगे। आप हर प्रकार की परिस्थितियों से कुछ अनुभव प्राप्त करेंगे, शिक्षा ग्रहण करेंगे, उनसे घबरायेंगे नहीं। इस प्रकार दमा रोग पर विजय प्राप्ति आपके लिए बहुत बड़ी उपलब्धि होगी, अतः पूरे जोश के साथ प्रसन्न और आशावादी रहते हुए इस दिशा में बढ़िये।

आश्रमगत कार्यक्रम

दमा के निदान के लिए बिहार योग विद्यालय, मुंगेर द्वारा संचालित यौगिक कार्यक्रमों का उल्लेख करते हुए हम इस परिच्छेद की समाप्ति करते हैं। यद्यपि घर में गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए भी उपचार किया जा सकता है, तथापि अनुभव के आधार पर मेरा विचार है कि आश्रम का जीवन एवं अनुशासन उपचार के लिये अधिक उपयुक्त है। साथ ही इसमें योग शिक्षक का निर्देशन भी प्राप्त हो जाता है।

प्रथम चार दिन– इन दिनों शुद्धिकरण की क्रियाएँ नियमबद्ध भोजन तथा हल्के आसनों के साथ प्रारम्भ की जाती हैं। प्रतिदिन प्रातः वस्त्र धौति, कुंजल एवं नेति क्रिया का अभ्यास किया जाता है। इस दौरान केवल पवनमुक्तासन समूह के आसनों एवं सरल प्राणायाम का अभ्यास किया जाता है।

पाँचवाँ दिन– इस दिन शरीर को शुद्ध करने की शक्तिशाली क्रिया शंख-प्रक्षालन कराई जाती है। इस पूरे दिन मौन रहने एवं आराम करने से पूर्ण लाभ की अपेक्षा की जा सकती है।

पाँच दिन के बाद– अब मानसिक एवं लिखित जप, अंतर्मौन तथा योगनिद्रा का अभ्यास किया जाता है। प्रतिदिन सूर्य नमस्कार की मात्र तीन आवृत्तियों

का अभ्यास किया जाता है। कुछ शक्ति आने पर धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ाते हैं। कुछ अन्य सामान्य आसन भी सिखलाते हैं। शक्ति के अनुपात में आसनों की संख्या तथा प्राणायाम की मात्रा में वृद्धि की जाती है। बाद में 'प्राण विद्या' नामक प्रभावशाली क्रिया का अभ्यास किया जाता है।

उपर्युक्त सभी क्रियाविधियाँ व्यक्तिगत मार्गदर्शन में रोगियों के आवश्यकतानुसार सिखाई जाती हैं। कुछ लोग शीघ्र ही उच्च अभ्यासों को कर लेते हैं। कुछ लोगों को कई महीनों तक सरल अभ्यास करने की आवश्यकता पड़ती है। दमा के रोग में पुराने तनावों का विशेष स्थान रहता है। आश्रम का वातावरण अपने को समझने एवं अपनी समस्याओं को जानने में बहुत सहायक होता है तथा इसके द्वारा समस्याओं को समूल नष्ट करने में मदद मिलती है।

9

अभ्यास कार्यक्रम

तीव्र प्रकोप के क्षणों में

जब दमा का तीव्र प्रकोप होता है तो उस समय आप कैसा अनुभव करते हैं? उस समय मन में बहुत घबराहट, भ्रम एवं भय की मिली-जुली भावनाएँ आती हैं और कष्ट एवं असहायता का अनुभव होता है। प्रत्येक रोगी का अपना अलग-अलग अनुभव होता है जो कि व्यक्ति के व्यक्तित्व, स्वभाव, वंश-परम्परा, परिस्थिति और संचित संस्कारों के ऊपर निर्भर रहता है।

दमा का दौरा शान्त हो जाने पर आपको उसके प्रत्येक पहलू का बड़ी बारीकी, धैर्य तथा सावधानी के साथ निरीक्षण करना चाहिये। उस काल के अनुभवों को समझने का प्रयत्न करना चाहिये कि उस समय आपके विचार, स्मृतियाँ, भावनाएँ और मन:स्थिति कैसी होती है।

दमा के प्रकोप के दौरान अपना निरीक्षण कीजिये एवं अन्दर होने वाली हलचल के प्रति सजग रहिये।

जब आपको लगे कि दमा का तीव्र प्रकोप होने वाला है उस समय निम्नलिखित बातें ध्यान में रखिये–

1. अपने बिस्तर या कुर्सी पर बैठ जाइये। कोहनियों को घुटनों के ऊपर रखिये। दोनों हथेलियों को अपने गालों के ऊपर या घुटनों के बीच में रखिये। छाती एवं कन्धे ढीले होने चाहिये। इस स्थिति में अपने को स्थिर कर लीजिये और यह अनुभव करने की कोशिश कीजिये कि आपकी श्वास सहज होती जा रही है।

2. आप प्रणामासन भी कर सकते हैं। दमा का प्रकोप होने पर शशांकासन भी शरीर को शिथिल करने का अच्छा तरीका है।
3. उपर्युक्त आसनों की स्थिति में श्वसन क्रिया पर नियन्त्रण रख सकते हैं। पाँच की गिनती तक पूरक, पाँच की गिनती तक अन्तर्कुम्भक एवं पाँच की गिनती तक रेचक कीजिये और प्रत्येक स्थिति में अपनी श्वास का ख्याल करते जाइये। यदि संभव हो तो पाँच मिनट तक बहिर्कुम्भक लगाइये। दस मिनट तक इसका अभ्यास कीजिये।

इन आसनों को करने से आप प्रकोप से बच सकते हैं। लेकिन यदि आप यह अनुभव करें कि इन आसनों से लाभ नहीं हो रहा है तो नमक का प्रयोग करना चाहिये। इससे श्वास नली के अवरोध दूर होते हैं। यह मानसिक तनावों को दूर कर नाड़ी संस्थान को शिथिल करता है। नमक शरीर में प्रवेश कर अन्दर के बलगम को गलाकर बाहर निकालता है। इससे शरीर सामान्य अवस्था में आ जाता है। नमक का प्रयोग लघु शंखप्रक्षालन, कुंजल, नेति और वस्त्र धौति के अभ्यासों में किया जाता है।

दमा के तीव्र प्रकोप के समय निम्नलिखित तरीकों को अपनायें–

1. लघु शंखप्रक्षालन कीजिये जिसमें छः गिलास नमकीन गुनगुना पानी पीकर निर्धारित आसनों का अभ्यास किया जाता है।
2. लघु शंखप्रक्षालन के बाद कुंजल क्रिया करनी चाहिये। दमा के तीव्र प्रकोप में कुंजल क्रिया अत्यधिक लाभप्रद सिद्ध हुई है।
3. इसके बाद नेति क्रिया और कपालभाति कीजिए।
4. नाड़ीशोधन के प्रथम भाग का अभ्यास कीजिये। इसे पाँच-दस मिनट से लेकर घण्टों तक किया जा सकता है।
5. लघु शंखप्रक्षालन तथा कुंजल क्रिया के आधे घण्टे बाद तेज गरम कॉफी ली जा सकती है जो मांसपेशियों को तनाव रहित कर छाती को गर्मी प्रदान करती है। इससे छाती में बहुत आराम मिलता है।

हमने देखा है कि तीव्र प्रकोप के समय उपर्युक्त अभ्यास बड़े ही लाभकारी सिद्ध हुए हैं। एक अट्ठारह वर्ष की लड़की नौ वर्षों से दमा के रोग से पीड़ित थी। वह बहुत दिनों तक कार्टिजोन लेती रही, लेकिन इस तेज दवा के लेने से भी उसको कोई आराम न मिलता। सात दिनों तक बराबर उस पर दमा का प्रकोप बना रहता था। किन्तु उपर्युक्त योग क्रियाओं से उसे दो दिनों में ही आराम मिला।

प्रकोपों की मध्यावधि में क्या करें?

निम्नलिखित अभ्यास-कार्यक्रम दमा के इलाज में तथा शरीर और मन को शक्ति प्रदान करने में बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुआ है। इससे प्रकोप धीरे-धीरे कम कष्टदायक होता जाता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आवश्यकता के अनुसार अभ्यास के लिये एक निश्चित समय और निश्चित स्थान चुन लेना चाहिए। यह अभ्यास अधिकतर लोगों के लिये व्यावहारिक तो नहीं कहा जा सकता, परन्तु उपलब्ध समय में नियमित रूप से योगाभ्यास करना चाहिये।

अभ्यास कार्यक्रम – 1

1. लघु शंखप्रक्षालन – दो सप्ताह तक प्रतिदिन इसका अभ्यास करना चाहिए। तत्पश्चात् एक महीने तक सप्ताह में दो बार। उसके बाद सप्ताह में एक बार करना पर्याप्त होगा।
2. कुंजल और नेति क्रिया – तीन से छः महीने तक प्रतिदिन। इसके बाद लघु शंखप्रक्षालन करना चाहिये।
3. पवनमुक्तासन
4. शवासन – श्वास पर सजगता के साथ
5. भ्रामरी प्राणायाम – नौ आवृत्तियाँ
6. नाड़ी शोधन (प्रथम भाग) – पाँच आवृत्तियाँ
7. उज्जायी – नौ आवृत्तियाँ

अभ्यास कार्यक्रम – 2

1. लघु शंखप्रक्षालन, कुंजल और नेति क्रिया – अभ्यास कार्यक्रम की तरह।
2. वस्त्र धौति – सप्ताह में दो बार। पहले वस्त्र धौति तथा उसके बाद कुंजल और नेति।
3. सूर्य नमस्कार – पाँच आवृत्तियाँ
4. शवासन – श्वास पर सजगता के साथ (प्रत्येक आसन के बाद या जब भी थकावट का अनुभव हो)।
5. सर्वांगासन
6. पश्चिमोत्तानासन
7. भुजंगासन
8. धनुरासन

9. अर्द्धमत्स्येन्द्रासन
10. नाड़ी शोधन प्राणायाम (प्रथम भाग) – पाँच आवृत्तियाँ
11. भस्त्रिका – नौ आवृत्तियाँ
12. उज्जायी – उन्चास आवृत्तियाँ

अभ्यास कार्यक्रम – 3

1. लघु शंखप्रक्षालन, कुंजल, नेति और वस्त्र धौति – कार्यक्रम 1 और 2 की तरह।
2. शवासन – श्वास पर सजगता के साथ
3. सूर्य नमस्कार
4. शशांक भुजंगासन
5. मार्जारि आसन
6. नाड़ी शोधन – पचीस आवृत्तियाँ
7. भस्त्रिका – पाँच आवृत्तियाँ
8. भ्रामरी – नौ आवृत्तियाँ।
9. अजपा जप – (उज्जायी के साथ)

अपना कार्यक्रम स्वयं बनायें

अभ्यास करते समय मात्रा का उतना महत्त्व नहीं है जितना कि अभ्यास को सही रूप से करने का है। कुछ मिनटों का शान्ति एवं शिथिलता से किया गया अभ्यास आधे घण्टे के शीघ्रतापूर्वक किये गये अभ्यास से ज्यादा शक्तिशाली एवं लाभकारी है। इन अभ्यासों का उद्देश्य है विश्रान्त, शान्त एवं शक्तिशाली मनोभावों को लाना, इन मनोभावों को समय के साथ विकसित करना होता है।

अभ्यासों के प्रारम्भिक प्रशिक्षण के उपरान्त, अपनी आवश्यकता, उपलब्ध समय, सामाजिक दायित्वों, व्यक्तिगत प्राथमिकताओं तथा अन्य बातों को ध्यान में रखते हुए अपने लिए एक उपयुक्त अभ्यास कार्यक्रम बनायें।

10

अन्य उपचार

दमा के रोगी को पूर्णतः स्वास्थ्य प्रदान करने के दृष्टिकोण से हम कुछ अन्य उपचार पद्धतियों का उल्लेख कर रहे हैं। यद्यपि दमा रोग के पूर्णतः निराकरण के लिए यौगिक उपचार पर्याप्त है, किन्तु अन्य उपचार पद्धतियों की जानकारी रोगियों के लिए लाभप्रद होगी।

यहाँ हमने ऋषिकेश के स्वामी शिवानन्दजी की अँग्रेज़ी पुस्तक 'अस्थमा' से विषय-वस्तु का संक्षिप्त विवरण उद्धृत किया है। विषय हैं – कॉफी उपचार, वनस्पति, मालिश, सौना स्नान, आयुर्वेद, बॉयोकेमिकल उपचार, होमियोपैथी, स्पीलियो थेरॉपी। इसमें स्वमूत्र चिकित्सा प्रणाली का भी समावेश किया गया है।

कॉफी के उपचार

कुंजल एवं नेति क्रिया के आधे घण्टे पश्चात् गरम कॉफी लेना बहुत लाभदायक होता है। कॉफी की गर्मी पेट, गले और फेफड़ों को गर्मी पहुँचाती है। फिर भी अधिक मात्रा में कॉफी का प्रयोग नहीं करना चाहिये। जब आवश्यकता हो तभी प्रयोग कीजिये, आदतन नहीं। तीव्र प्रकोप के समय एक कप काली कॉफी लेना उपयोगी होगा। कॉफी में कैफीन नामक पदार्थ होने के कारण वह स्नायविक तनावों को दूर करने में मदद करती है तथा श्वसन को यथावत् करती है।

वनस्पति

दमा में लाभ प्रदान करने वाली दो प्रकार की वनस्पतियों की सेवन विधि का उल्लेख किया जा रहा है –

कोल्ट्स फुट– एक कप उबलते जल में चाय के चम्मच भर पत्तियाँ डालिये। पत्तियों को पानी में कुछ देर तक नीचे बैठने दीजिये। उसके बाद इच्छानुसार उसका सेवन कीजिये।

डेन्डिलिऑन की जड़– यह एक वनस्पति है। इसकी जड़ अच्छी तरह से काट लीजिये। इसे उबलते पानी में डालिये। दिन भर में इसके कुछ कप पीजिये।

वनस्पतियों के सम्बन्ध में पाठक अध्ययन कर सकते हैं। इसका क्षेत्र बहुत विस्तृत है। वनस्पतियों को मिश्रित कर लेने से विशेष प्रभाव पड़ता है।

मालिश

मालिश के द्वारा शरीर के प्रत्येक अंग को शिथिलता और नवजीवन की प्राप्ति होती है। इससे स्नायुओं तथा जोड़ों का दर्द दूर हो जाता है तथा शरीर के विषाक्त तत्त्वों के निष्कासन में मदद मिलती है।

सौना स्नान

इसका प्रभाव मालिश की तरह पड़ता है। तनाव दूर करने एवं शरीर के शिथिलीकरण के लिए यह आश्चर्यजनक विधि है। पश्चिमी देशों में यह विधि बहुत प्रचलित है तथा एक लम्बे अरसे से इसका प्रयोग हो रहा है।

सौना स्नान में वाष्प स्नान के द्वारा ताप को रक्त एवं चर्म में भेजा जाता है और त्वचा के छिद्र खुल जाते हैं। शरीर की गंदगी त्वचा की सतह पर आ जाती है। सौना के कुछ देर बाद (थकान लगने के पूर्व) ठण्ढे जल से स्नान करना चाहिये। इससे गंदगी धुल जायेगी। ठण्ढक प्राप्त होने से बाहर की रक्त नलिकाओं में आंकुचन होगा तथा रक्त भीतरी अंगों की ओर प्रवाहित होगा।

ठण्ढे जल से स्नान के तुरन्त बाद सौना लेना चाहिए ताकि और अशुद्धियाँ सतह पर आ जायें। उसके बाद पुन: ठण्ढे जल से स्नान करना चाहिए। इस क्रिया की पुनरावृत्ति तीन बार करनी चाहिये। इसमें दस मिनट का समय लगेगा। शीतल जल से स्नान दमा के रोगी के लिए विशेष लाभप्रद है, क्योंकि यह गहरी श्वसन क्रिया को उत्प्रेरित करता है।

सौना स्नान के स्थान पर इस विधि का भी उपयोग किया जा सकता है। अधिकतम गर्म जल से अधिक देर तक स्नान कीजिये। फिर तुरन्त ठण्ढे जल से स्नान कीजिये। इच्छानुसार इन क्रियाओं की पुनरावृत्ति कीजिये। इससे ताजगी एवं शक्ति का अनुभव होगा।

आयुर्वेदिक उपचार

आयुर्वेदिक दवा का इतिहास योग की भाँति ही अति प्राचीन एवं विस्तृत है। यहाँ मात्र दमा के संदर्भ में आयुर्वेदिक उपचार का विवरण दे रहे हैं।

स्वामी शिवानन्द जी द्वारा रचित 'दमा–उसका कारण एवं निवारण' नामक पुस्तक में लिखा है, "दमा एक ऐसा रोग है जिसका संबंध प्राण, अपान, उदान, समान तथा व्यान नामक शक्तिशाली वायु से है। प्राण एवं अपान से उसका विशिष्ट संबंध है। आयुर्वेद के अनुसार शरीर में प्रमुखत: तीन दोष हैं–वात, पित्त एवं कफ। वात कफ का घनत्व बढ़ाता है तथा अन्न, जल एवं वायु के मार्ग में अवरोध उत्पन्न करता है। यह हृदय की शक्ति या ओज का शोषण करता है। फेफड़ों पर भी इसका प्रभाव पड़ता है। श्वसन में बाधा आती है। इससे रोग उत्पन्न होता है।"

आयुर्वेद के अनुसार दमा रोग के कारण हैं–अति शीतल जल पीना, अत्यधिक मैथुन, अधिक यात्रा, बहुत अधिक समय तक भूखे रहना, मिर्च-मसाले एवं तेलयुक्त भोजन अथवा किसी बासी भोजन का सेवन, अधिक मात्रा में तम्बाकू का प्रयोग, मांस भक्षण, अधिक मिठाई, दूध आदि चर्बीयुक्त पदार्थों का सेवन, हृदय पर कोई आघात। दमा रोग के लक्षण ये हैं–हृदय में दर्द, कब्ज, उदर में दर्द, सुस्ती, नासिका में गंदगी का जमाव, रात में श्वसन में तकलीफ इत्यादि।

उपचार की संक्षिप्त सूची यहाँ प्रस्तुत है। अधिक विस्तृत जानकारी के लिए आयुर्वेद की किसी पुस्तक का अध्ययन करें–

1. सर्वप्रथम रोगी को ऐसे कमरे में रखिये जहाँ पर्याप्त मात्रा में शुद्ध हवा आती हो। रोगी को सदा प्रसन्न रखने की कोशिश कीजिये। रोगी के सिर, छाती एवं भुजाओं को तकिये के सहारे कुछ ऊँचा रखिये। दिन के समय गर्म भोजन एवं नर्म पेय देना चाहिये। गर्म जल का सेवन करना चाहिये, ठण्ढी वस्तु कदापि नहीं लेनी चाहिये। इससे बलगम ढीला होगा एवं रोगी को आराम मिलेगा। शाम को रोगी को बहुत ही सादा एवं हल्का भोजन देना चाहिये ताकि निद्रा में विघ्न न पड़े।
2. प्रकोप के समय एवं उसके उपरान्त रोगी को बार्ली वाटर, गेहूँ का दलिया, अंगूर, शहद, सेब इत्यादि शीघ्र पचने वाले पदार्थ देने चाहिये।
3. रोगी को गर्मी के दिनों में शीतल जल से तथा ठण्ढ के दिनों में गर्म जल से स्नान करना चाहिये। प्रात:काल शुद्ध वायु में घूमना उत्तम है।

4. रोगी के शरीर से किसी विधि द्वारा पसीना बाहर निकालने का प्रयास कीजिये (गर्म जल से स्नान, सोना-स्नान, धूप-स्नान, कंबल ओढ़ने से या गर्म पेय द्वारा)। इससे शरीर की वायु एवं कफ बाहर निकलेंगे।
5. शहद एवं अदरक के रस में थोड़ी हल्दी मिलाकर रोगी को देना चाहिए। इससे कफ का निष्कासन होता है।

होमियोपैथिक उपचार

यदि दमा का उपचार दक्ष होमियोपैथिक चिकित्सक से कराया जाये तो आश्चर्यजनक लाभ की प्राप्ति होती है। इस उपचार में बहुत तेज दवा का प्रयोग नहीं किया जाता। इस उपचार के प्रमुख तीन सिद्धान्त इस प्रकार हैं–

1. समान से समान का उपचार होता है।
2. न्यून खुराक का चमत्कार (अधिक सामर्थ्यपूर्ण खुराक)।
3. रोगी का उपचार करो, रोग का नहीं।

बॉयोकेमिकल लवण उपचार

डॉ. शुयेसलर द्वारा इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है कि शरीर में कुछ विशेष लवणों की कमी के कारण रोग की उत्पत्ति होती है। इन लवणों की आवश्यकता शरीर को रहती है। अत: आवश्यक लवण की पूर्ति हो जाने पर दमा का रोग भी दूर हो जाता है। उपचार के प्रमुख लवण निम्नलिखित हैं–

कालीफॉस– श्वास की तकलीफ में इससे विशेष लाभ मिलता है। इस विषम परिस्थिति में यह दवा कई बार बड़ी मात्रा में दी जाती है। यदि दमा का कारण दोषपूर्ण भोजन है तो यह दवा बहुत फायदा करती है।

कालीमूर– यदि दमा के रोगी के शरीर में बलगम बहुत जम गया हो, कब्ज हो या यकृत की क्रिया कमजोर हो गई हो तो यह दवा देनी चाहिए।

कालीसल्फ– यदि दमा की हालत में श्वसन नलिका में कष्ट हो तो इस लवण से उपचार किया जाता है।

इन लवणों के अतिरिक्त केल्केरिया फॉस, केल्केरिया फ्लोर, नेट्रमयूर, मैगनेशिया फॉस, नेट्रम सल्फ आदि लवणों का उपयोग भी उपचार में किया जाता है।

स्पीलियो थेरॉपी

दमा के उपचार में नमक का अत्यन्त महत्त्व है। इसका वर्णन हठयोग की शुद्धिकरण की क्रियाओं के अन्तर्गत किया गया है। सोवियत रूस के डॉक्टरों ने रिपोर्ट दी है कि दमा के उपचार में नमक का प्रयोग किया जा सकता है। रूस के यूक्रेन राज्य में सोल्टोविनो एलरग्लोजिक हॉस्पिटल में दमा के बहुत रोगियों का इलाज किया गया, जिन्हें बाद में स्वस्थ पाया गया। अस्पताल जमीन की सतह से तीन सौ फीट नीचे स्थित था। इस गहराई के वातावरण में सोडियम क्लोराइड रोगी की पल्मनरी नर्वस पर प्रभाव डालता है। इससे सभी बाह्य विषाक्त एवं दूषित पदार्थों को बाहर कर फेफड़ों को शक्ति प्रदान करने में मदद मिलती है। नमक बलगम को गलाने में मदद करता है। इस प्रकार इस पद्धति से रोगी स्वास्थ्य-लाभ करते हैं।

शिवाम्बु कल्प

यह उपचार की अत्यन्त प्राचीन विधि है जो आधुनिक युग में लाभप्रद सिद्ध हो सकती है। इस उपचार के अन्तर्गत व्यक्ति स्व-मूत्र का सेवन करता है।

डामर तंत्र में इस उपचार का वर्णन मिलता है। इसमें इसे शिवाम्बु कल्प विधि कहा गया है। इस उपचार के अन्तर्गत स्व-मूत्र पीकर शरीर को परिवर्तित करते हुए उसमें पुन: शक्ति का संचार किया जाता है। हठयोग प्रदीपिका में अमरोली के नाम से इसका वर्णन आया है। कुछ लोग विश्वास करते हैं कि बाइबिल में भी इसका प्रसंग आया है।

स्व-मूत्र चिकित्सा के पक्ष और विपक्ष में अनेक तर्क दिये जाते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि मूत्र में कीमती विटामिन, लवण, हार्मोन्स जैसे कार्टिजोन होते हैं जिन्हें दमा के निदान में उपयोग किया जाता है। यदि बाहर से कार्टिजोन की मात्रा दी जाती है तो इससे शरीर में कार्टिजोन का स्वाभाविक उत्पादन प्रभावित होता है। यह एड्रिनल ग्लैण्ड के ह्रास का कारण हो सकता है। कार्टिजोन पद्धति के अपने गुण-दोष हैं, जिससे इसका उपयोग संदिग्ध हो जाता है, परन्तु स्वमूत्र चिकित्सा से बहुमूल्य कार्टिजोन की प्राप्ति होती है।

कुछ लोग कहते हैं कि मूत्र में अनेक विषाक्त पदार्थ होते हैं तथा उसमें दुर्गन्ध आती है। परन्तु हम अपने अनुभव से कह सकते हैं कि मूत्र का स्वाद उतना बुरा नहीं है। यदि इससे संबंधित कुछ शंकाएँ हों या विशेष रोग हो तो पहले योग शिक्षक के मार्गदर्शन में करना चाहिये। शिवाम्बु कल्प में

निम्नांकित तीन बातों का अनुकरण करना चाहिए–

1. रोग के तीव्र प्रकोप के समय शिवाम्बु कल्प का उपयोग उपवास के साथ करना चाहिए। इससे विशेष लाभ प्राप्त होता है। एक या अधिक दिनों तक पूरे दिन का शिवाम्बु पीना चाहिये। शिवाम्बु का प्रथम भाग बहुत ही तेज होता है, अत: इसको छोड़कर शेष का पान करना चाहिये।

   नोट– चौबीस घण्टों से ज्यादा के उपवास में या आप यदि भूख महसूस करें तो हल्का भोजन लिया जा सकता है, परन्तु भोजन से एक घण्टा पहले और एक घण्टा बाद में पानी या मूत्र का सेवन नहीं करना चाहिये।
2. प्रतिदिन प्रात:काल का शिवाम्बु लेना चाहिए। शिवाम्बु पान के एक घण्टे बाद तक कुछ खाना-पीना नहीं चाहिए। अधिक मात्रा में जल पिया जा सकता है।
3. दमा के प्रकोप के समय सिर, गले, छाती, चेहरे, पीठ और हाथों पर शिवाम्बु की मालिश करनी चाहिए।

शिवाम्बु कल्प के इन तथ्यों को मैंने ग्रहण किया तथा आश्रम में ही रहकर इस उपचार को करने का निश्चय किया। स्व-मूत्र पान करने से पहले मुझे उसके मनोवैज्ञानिक प्रभावों पर विजय प्राप्त करनी पड़ी। आशा के विपरीत यह कार्य सहज ही सम्पन्न हो गया। मैंने शिवाम्बु के कुछ अंश की मालिश की, उसे सूँघा तथा उसकी कुछ बूँदों को जिह्वा पर रखकर स्वाद लिया। मुझे स्वाद खराब नहीं लगा। इस प्रकार धीरे-धीरे मैं उसके स्वाद का आदी हो गया। शिवाम्बु कल्प मेरे लिए सहज हो गया।

11

स्वास्थ्य का राजमार्ग

सामान्यत: दमा का कारण चिन्ता, तनाव एवं दु:ख होता है। हमारी विचार पद्धति या अपने माता-पिता अथवा दूसरों के व्यवहार के प्रतिक्रियास्वरूप इसकी उत्पत्ति होती है। इसके मूल में विशेषकर माता-पिता का व्यवहार रहता है। प्रकोप के प्रति भय की भावना से भी दमा का प्रकोप होता है।

यौगिक सिद्धान्तों की मान्यता एवं उसकी क्रियाओं के अभ्यास द्वारा दमा के प्रकोप एवं उसकी पुनरावृत्ति को रोका जा सकता है। रोग के उपचार के लिये निम्नलिखित बातें ध्यान में रखने योग्य हैं–

1. स्वभावत: हमारे ऊपर अन्य लोगों के व्यवहार का प्रभाव पड़ता है, परन्तु आप उसके प्रति सजग रहिये ताकि वह आपके जीवन को प्रभावित न कर सके।
2. भविष्य की घटनाओं के प्रति भय की भावना न रखिये। प्राय: ऐसी समस्याओं का सामना हमें करना ही नहीं पड़ता जिनके प्रति हम व्यर्थ ही भयभीत रहते हैं। यदि ऐसी परिस्थिति सामने आ जाती है तो हम किसी तरह उसका सामना कर ही लेते हैं। अत: पहले से ही भयभीत होने एवं परेशान होकर दमा को बढ़ावा देने की कोई आवश्यकता नहीं।
3. दमा के रोगी विशेषकर भविष्य में होने वाले प्रकोप से भयभीत रहते हैं। इस संदर्भ में यदि दिये गये यौगिक अभ्यास के कार्यक्रम का नियमित एवं निष्ठापूर्वक अभ्यास किया जाय तो रोगी के आत्मविश्वास में वृद्धि होगी तथा प्रकोप के प्रति भय की भावना भी कम होगी। इससे प्रकोप भी कम होंगे।
4. इस पुस्तक में वर्णित योगाभ्यास तथा जीवनयापन विधि का पालन करने के लिये पुरानी आदतों में परिवर्तन लाना होगा। इसके लिये प्रारम्भ में

कठिनाई होगी, परन्तु स्वास्थ्य-सुधार की इच्छा से इस पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

5. एक बार दैनिक जीवन में परिवर्तन आ जाने पर आप क्रमश: स्वास्थ्य-सुधार करते जायेंगे। इससे आपका जीवन ही बदल जायेगा। दमा का रोग समाप्त हो जायेगा। आप दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करेंगे, जिसके विषय में आपने स्वप्न में भी सोचा नहीं होगा।

मधुमेह और योग

12

मधुमेह

मधुमेह (डाइबिटीज मेलिटस) का रोग शताब्दियों पूर्व भी होता था, किन्तु आज यह विश्व के समृद्ध और विकसित कहे जाने वाले देशों में बहुतायत से होने वाला रोग हो गया है। इसका कारण यह है कि आधुनिक तकनीकी उपलब्धियों ने समृद्धि और मानसिक तनावों को बढ़ावा दिया है। लोगों के पास कड़ी मेहनत के काम नहीं रह गये। यंत्रों के बटन दबाने से ही सारे कार्य सम्पन्न हो जाते हैं। फलत: शारीरिक व्यायाम का अभाव और अति भोजन की आदत घर कर जाती है। वर्तमान मधुमेह संकट को (इन्हीं कारणों से उत्पन्न होने वाले अन्य रोग भी) बीसवीं सदी की देन कहा जा सकता है। पृथ्वी की हवा में तेजी से फैलता प्रदूषण व्यक्तिगत स्तर तक प्रवेश कर चुका है।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में मधुमेह का अब तक कोई निश्चित इलाज नहीं मिला है। चिकित्सा विज्ञान का इलाज आहार-नियंत्रण और रोज-रोज इन्सुलिन तथा अन्य दवाओं के प्रयोग तक ही सीमित रह गया है। इससे मधुमेह की जड़ को नहीं उखाड़ा जा सकता, बल्कि दवाओं के दुष्परिणाम ही सामने आने लगते हैं।

योग की प्राचीन विद्या के पास मुधमेह की चिकित्सा का अधिक कारगर उपाय है, जो कि हजारों वर्ष पुराना है। यौगिक क्रियाओं द्वारा शरीर की आन्तरिक उत्पादन प्रक्रिया को पुन: सक्रिय कर शरीर-संरचना को संतुलित किया जाता है। अनेक वर्षों तक यौगिक क्रियाओं द्वारा मधुमेह का इलाज करने के उपरान्त हम इन शक्तिशाली विधियों से विश्व के सभी मधुमेह पीड़ितों एवं चिकित्सकों को अवगत कराना तथा लाभान्वित कराना चाहते हैं। इसी प्रयोजन को लेकर सम्पूर्ण विवरण प्रकाशित कर रहे हैं।

शर्करा चयापचय

मधुमेह के रोगी को योग चिकित्सा के प्रभावों की जानकारी होनी चाहिए। मधुमेह शरीर में चयापचय की गड़बड़ी के कारण होता है। इससे शरीर का शर्करा-तल बहुत अधिक बढ़ जाता है और पेशाब के साथ शर्करा का निष्कासन होने लगता है। अंगों, मांसपेशियों और ऊतकों के निर्माण तथा पोषण के लिए मानव शरीर को शर्करा से प्राप्त ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। श्वेतसार (कार्बोहाइड्रेट) के रूप में शरीर द्वारा ग्रहण की गई यह शर्करा ग्लुकोज, फ्रक्टोज तथा ग्लैक्टोज के रूप में परिवर्तित होकर रक्त में मिलती है। शर्करा के ये परिवर्तित रूप या तो शरीर द्वारा शीघ्र व्यवहृत कर लिये जाते हैं अथवा आगे के व्यवहार के लिए यकृत और मांसपेशियों में ग्लाइकोजीन के रूप में जमा हो जाते हैं।

जब हम प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट एवं वसायुक्त भोजन ग्रहण करते हैं तब सामान्यत: निम्नलिखित प्रक्रियाएँ होती हैं–

1. ग्लुकोज अंतड़ियों की दीवारों से रिसकर रक्त-प्रवाह में मिल जाता है।
2. तब पैन्क्रियाज ग्रंथि से इन्सुलिन का स्राव होता है और ग्लुकोज तथा एमिनो एसिड को शरीर में घुल-मिल जाने में मदद मिलती है।
3. इन्सुलिन ग्लुकोज को मांसपेशियों, वसा, कोशिका और यकृत के अंदर धकेलता है।
4. भोजन से प्राप्त वसा तथा उसमें उपस्थित ट्राइग्लिसराइड भी इन्सुलिन के कारण शरीर की वसा कोशिका में धकेल दिया जाता है।

चूँकि हम लगातार भोजन नहीं करते, इसलिए शरीर के आंतरिक रसायनों का पारस्परिक अनुपात भोजन न लेने की स्थिति में भिन्न रहता है। उपवास काल में शरीर में इन्सुलिन की मात्रा सबसे कम रहती है। इस समय शरीर का वसा शरीर चलाने के लिए ईंधन की तरह कार्य करने लगता है। यही कारण है कि उपवास काल में कुछ मधुमेह के रोगियों में क्रिटोन का उत्पादन बढ़कर विष हो जाता है।

रक्त शर्करा अपना तल स्वयं निर्धारित करती है। जब इसका तल ऊँचा हो जाता है तो मधुवशि ग्रंथियाँ (पेन्क्रियाज की इन्डोक्राइन ग्रंथि के सेलों का ऐसा समूह जो एक विशिष्ट तरीके से हार्मोन्स का नि:सरण करता है) शर्करा तल को निम्न करने हेतु इन्सुलिन बनाना प्रारंभ कर देता है। इससे ठीक विपरीत प्रभाव उत्पन्न करना हो तो मधुवशि ग्रंथियाँ ग्लुकेगॉन नामक

दूसरे हार्मोन का स्राव करने लगती हैं। इस प्रकार रक्त शर्करा का संतुलन बना रहता है।

शरीर के द्वारा शर्करा पर नियंत्रण एक जटिल प्रक्रिया है। ग्लुकोज शरीर के समस्त ऊतकों को शक्ति प्रदान करता है। यह शरीर की सभी प्रणालियों के संचालन में मुख्य भूमिका निभाता है। यह स्वाभाविक है कि पैन्क्रियाज, पिट्यूटरी, एड्रिनल और थायरॉयड ग्रंथियों, मांसपेशियों, त्वचा, लिवर, रक्त-प्रवाह, गुर्दे और तन्त्रिका-तन्त्र के साथ इसके संबंध बहुत ही गहरे और सूक्ष्म हैं। इस प्रकार ग्लुकोज का उत्पादन और नियंत्रण एक जटिल प्रक्रिया है। आज भी मधुमेह के सम्बन्ध में आधुनिक विज्ञान के पास थोड़ी जानकारी है। फिलहाल इसकी चिकित्सा चिकित्सा-विज्ञान की पहुँच के परे है।

शरीर में रक्त शर्करा-तल को नियंत्रित करने वाले तंत्र का असंतुलन ही मधुमेह का कारण है। मधुमेह होने पर रक्त में अवशोषित ग्लुकोज के मांसपेशियों तथा ऊतकों में व्यवहृत होने अथवा ग्लाइकोजीन या वसा की तरह यकृत में जमा होने की क्रिया अवरुद्ध हो जाती है।

पूर्ण (बाल-प्रकोप) मधुमेह

इस अवस्था में बहुतेरे कारणों से पैन्क्रियाज इन्सुलिन का उत्पादन बंद कर देती है। इन्सुलिन का उत्पादन अपर्याप्त या अल्प मात्रा में हो सकता है अथवा पूर्णत: बंद भी हो सकता है। तब शरीर की कोशिकाओं को ग्लुकोज मिलना बंद हो जाता है। रक्त में कोशिकाओं का भोजन (ग्लुकोज) प्रचुर मात्रा में रहने के बावजूद भी वे भूखी रह जाती हैं। भूखी कोशिकाओं के कारण पैन्क्रियाज के बीटा सेल प्रभावित होने लगते हैं। स्थिति विकट हो जाती है और गृहयुद्ध का यह कुचक्र क्रमश: खतरनाक बनता जाता है। इस प्रकार का मधुमेह साधारणत: तरुणों में देखा जाता है। "पानी ही पानी सर्वत्र, पर पीने को एक बूँद नहीं।" यह स्थिति बहुत कुछ ऐसी ही है।

अन्योन्याश्रयी (प्रौढ़ प्रकोप) मधुमेह

ऐसी मान्यता है कि तन्त्रिका-तन्त्र, हार्मोन्स के स्राव एवं पाचन तंत्र की गड़बड़ियों के कारण असमय ही अनुपयुक्त इन्सुलिन स्रवित हो जाता है अथवा शरीर के ऊतकों की इन्सुलिन के प्रति संवेदनशीलता न्यून हो जाती है। इस प्रकार के मधुमेह में इन्सुलिन का स्राव विलम्ब से होता है, जिस कारण

इन्सुलिन स्रवित होने के पूर्व रक्त शर्करा-तल उच्च स्तर तक पहुँच जाता है। अन्तत: जब इन्सुलिन स्रवित होता है तो उतना अधिक नहीं होता कि बढ़े हुए रक्त शर्करा-तल को निम्न कर सके। अब पैन्क्रियाज में उत्तेजना होती है और वह तेजी से इन्सुलिन बनाने का प्रयत्न करता है, परन्तु बहुत विलम्ब हो जाने के कारण भूखी शरीर-कोशिकाओं की पुकार सुनकर लीवर से ग्लुकोज का स्राव आरंभ हो जाता है। इससे रक्त में शर्करा का स्तर बहुत अधिक बढ़ जाता है। इस अवस्था में पैन्क्रियाज द्वारा स्रावित इन्सुलिन संभवत: कोशिकाओं को ग्लुकोज पहुँचाने में असमर्थ हो जाता है, क्योंकि कोशिकाएँ स्वत: ग्लुकोज का उपयोग नहीं कर सकतीं अथवा इन्सुलिन का उत्पादन अपर्याप्त मात्रा में होता है। कभी-कभी तो मधुमेह इतना जीर्ण होता है कि इसका कोई लक्षण भी दिखलाई नहीं देता। आनुवांशिकता, ढलती उम्र, शरीर की स्थूलता, संक्रमण और मानसिक तनाव आदि प्रौढ़ मधुमेह के कारण होते हैं।

मधुमेह के लक्षण

रक्त में विद्यमान ग्लुकोज की बढ़ी हुई मात्रा मूत्र के साथ बाहर निकल जाती है। इसके परिणाम हैं –

1. अधिक मात्रा में पेशाब के साथ ग्लुकोज शरीर से बाहर फेंक दिया जाता है।
2. बहुत प्यास लगती है।
3. शरीर में निर्जलीकरण हो जाता है।
4. शरीर में स्थित द्रव्यों में ग्लुकोज का आधिक्य हो जाने के कारण बैक्टीरिया को प्रचुर मात्रा में भोजन मिलने लगता है और शरीर रोगों का घर बन जाता है। साधारण घाव भी जल्दी नहीं भर पाते।

शरीर के भूखे सेल (कोशिकाएँ) ग्लुकोज के अभाव में वसा ही भक्षण करने लग जाते हैं। इससे ऊतकों में नई समस्या उत्पन्न हो आती है। फलत: रोगी को अम्ल-रक्तता नामक भयंकर व्याधि हो जाती है। रक्त-अम्लता और शरीर में निर्जलीकरण हो जाने पर मधुमेहिक अचेतनता (डायबिटीज कोमा) भी आ सकती है। उस समय यदि उपयुक्त मात्रा में तुरन्त इन्सुलिन न दी गई हो तो मृत्यु भी हो सकती है।

मधुमेह जितना ही तीव्र होगा, उसके लक्षण भी उतने ही तीव्र होंगे। मध्यम वर्ग के उन सम्पन्न मनुष्यों को प्रौढ़ मधुमेह अधिक होता है जो अस्वाभाविक रूप से मोटे हैं। इसका कारण यह है कि उनका भोजन शर्करायुक्त कार्बोहाइड्रेट से

भरपूर रहता है तथा जितने अधिक ग्लुकोज का वे उपभोग करते हैं, उसे पचाने योग्य व्यायाम नहीं करते।

यह हमारा विश्वास है कि आज जितने लोग मधुमेह से पीड़ित हैं, वे इस रोग से मुक्त हो सकते हैं। मगर इसके लिये आवश्यक है कि वे शर्करा युक्त श्वेतसार भोजन सीमित मात्रा में लें और थोड़ा नियमित अभ्यास, जैसे– तन्त्रिका-तन्त्र, पाचन-संस्थान तथा मांसपेशियों के लिये आसन; श्वसन तंत्र और फेफड़ों के लिये प्राणायाम तथा मानसिक विश्राम प्राप्त करने और तनाव दूर करने के लिये योगनिद्रा एवं अजपा जप करें। इसके अतिरिक्त मधुमेह से पीड़ित होने की संभावनाओं को कम करने में दैनिक ध्यान का अभ्यास भी सहायक होता है, क्योंकि इससे तन्त्रिका-तन्त्र संतुलित रहता है। योग द्वारा अनेक प्रकार के मधुमेह के रोगियों का उपचार संभव है और जिन रोगियों में इन्सुलिन का उत्पादन पूरी तरह से बन्द हो गया है, किन्तु अभी भी पैन्क्रियाज के कुछ कार्यकर्त्ता ऊतक शेष बचे हैं, ऐसे पूर्ण मधुमेह के रोगियों को भी योग द्वारा मदद मिल सकती है।

सभी मधुमेह के रोगियों को सलाह दी जाती है कि वे योग का आलम्बन लें एवं पुन: शक्ति प्राप्त करें। स्वास्थ्य-लाभ उपयुक्त चिकित्सा और उचित प्रयास पर निर्भर रहता है। मधुमेह जितना ही पुराना होता है उतने ही अधिक प्रयास की आवश्यकता होती है। भयंकरतम मधुमेह में भी आशाजनक मनोवृत्ति और यथोचित् यौगिक क्रियाओं का अभ्यास निश्चय ही लाभ पहुँचाता है।

यहाँ बिहार योग विद्यालय, मुंगेर में हमने योग द्वारा मधुमेह के रोगियों का सफलतापूर्वक इलाज किया है। आरंभिक मधुमेह से पीड़ित व्यक्ति के रोग को प्रारम्भ में दूर करने के लिये योग के पास 99% अवसर हैं, परन्तु अधिकतर लोग तभी योग में आते हैं जब वे देखते हैं कि अब दवाओं से इसका निदान संभव नहीं है। यह एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है। यदि दवाओं के साथ योग का समन्वय किया जाये तो यह मधुमेह के निदान में एक शक्तिशाली क्रिया होगी।

13

इन्सुलिन मात्रा – निर्धारण

इन्सुलिन की मात्रा का निर्धारण चिकित्सा का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पहलू है। जब रोगी नई आहार तालिका और मधुमेह प्रशिक्षण कार्यक्रम के नये अभ्यासों से गुजरता है तो इन्सुलिन की मात्रा घटाने-बढ़ाने की आवश्यकता पड़ती है। डॉक्टरों, योग शिक्षकों और प्रशिक्षणार्थियों के लिये हम अति शर्करा रक्तता और अल्प शर्करा रक्तता के चिह्नों एवं लक्षणों का सम्पूर्ण विवरण दे रहे हैं।

अति शर्करा रक्तता

मधुमेह की चिकित्सा प्रारंभ होने के पूर्व सभी रोगियों में ये लक्षण देखे जाते हैं। ये लक्षण हैं – बहुत भूख-प्यास लगना, मूत्र की मात्रा में वृद्धि होना, रात्रि में बारम्बार शौचालय जाना, थकान लगना, वजन में कमी, कपड़ों पर सफेद धब्बे, योनि भाग में या शिश्न के चारों ओर खुजली, निकट दृष्टिदोष, पैरों की संवेदना समाप्त हो जाना या दर्द होना एवं नपुंसकता इत्यादि।

यह एक बड़े विवाद का विषय है कि इन्सुलिन की सुइयाँ निम्नांकित लक्षणों को कम करती हैं या नहीं। बहरहाल यह निर्णय रोगी, योग चिकित्सक, डॉक्टर को लेना है कि यदि लक्षण उभरने लगें और स्वास्थ्य गिरने लगे तो वे क्या उपाय करें। लक्षण ये हैं – अस्पष्ट नेत्र दृष्टि, पैरों में संवेदना का ह्रास या दर्द, त्वचा, फेफड़ों या मूत्र नलिका में संक्रमण एवं नपुंसकता इत्यादि। संक्रमण का उपचार दवाइयों से किया जा सकता है, परन्तु अन्य लक्षणों के प्रकट होने पर भी अभ्यास कार्यक्रम पूर्ववत् जारी रखा जाये। आज तक चिकित्सा विज्ञान के पास इन लक्षणों का कोई उपाय नहीं है।

यदि रोगी में केटो एसीडोसिस (कीटोन अम्लमयता) नामक व्याधि के लक्षण दिखाई देने लगें तो तुरन्त इन्सुलिन, डॉक्टर और एम्बुलेंस की जरूरत होती है। कोई भी मधुमेह का रोगी जो इन्सुलिन लेता रहा हो, इस अवस्था तक नहीं पहुँच सकता। इसके लक्षण इस प्रकार हैं– पेट के ऊपरी भाग में दर्द होना और वमन होना, तीव्र पेशाब लगना और बारम्बार पेशाब लगना, अपचन, परिवर्तित नेत्र दृष्टि, मांसपेशियों में जकड़न, शरीर में निर्जलीकरण, जीभ का बार-बार सूख जाना, कमजोर नेत्रगोलक, गहरी उसासपूर्ण श्वास-प्रश्वास, तेज परन्तु कमजोर नाड़ी-स्पन्दन, निम्न रक्तचाप, पेट की कठोरता और छूने से तीव्र दर्द की अनुभूति तथा सम्मूर्च्छा (कोमा)।

किसी भी तीक्ष्ण संक्रमण से केटो एसीडोसिस की व्याधि हो सकती है, अत: डॉक्टर से प्रत्येक संक्रमण की जाँच कराते रहना चाहिए। याद रखिये, किसी भी प्रकार का संक्रमण अथवा शारीरिक, मानसिक या भावनात्मक तनाव यह स्थिति उत्पन्न कर सकता है। इस व्याधि से ग्रस्त होने के सामान्य कारण हैं– असावधानी, गलतफहमी या अन्य व्याधि। तीक्ष्ण संक्रमण काल में चिकित्सा के साथ भलीभाँति सामंजस्य स्थापित न होने के कारण भी ऐसा होता है।

अल्प शर्करा रक्तता

इन्सुलिन के ज्यादा प्रयोग से हाइपोग्लाइसेमिया नामक खतरनाक व्याधि हो सकती है। जब आप योग अभ्यास करके शरीर का इन्सुलिन उत्पादन बढ़ा देते हैं या रक्त ग्लुकोज को नियन्त्रित कर देते हैं तब आपको ग्लुकोज स्तर पर कड़ी नजर रखनी चाहिये। इसके लिये आप निम्नलिखित परीक्षण कर सकते हैं–

1. गुर्दे के कार्यकलाप जानने हेतु परीक्षण– इस परीक्षण से हमारा अभिप्राय मूत्र में शर्करा, प्रोटीन, रक्त इत्यादि की जानकारी से है। अन्य परीक्षण, जैसे– सीरम क्रियेटीनीन का परीक्षण भी किया जाना चाहिए। यदि आपके डॉक्टर आवश्यक समझें तो आई. व्ही. पी. परीक्षण भी कराया जा सकता है।
2. नियमित रक्त ग्लुकोज परीक्षण– सप्ताह में कम-से-कम एक बार रक्त शर्करा स्तर का परीक्षण कराना चाहिए जब तक कि शर्करा स्तर सामान्य न हो जाये। इस परीक्षण का मूत्र-परीक्षण से प्राप्त आंकड़ों से मिलान करें। यदि ग्लुकोज की मात्रा दोनों में समान है तो इसका मतलब है कि गुर्दों का काम ठीक ढंग से चल रहा है। मधुमेह से गुर्दे प्रभावित हो सकते हैं और उनकी कार्यक्षमता कम हो सकती है। इससे मूत्र में अधिक शर्करा

आ जाती है। पेशाब में आई शर्करा के अनुसार ज्यादा इन्सुलिन लेने से हाइपोग्लाइसेमिया हो सकता है। कभी-कभी गुर्दे विपरीत कार्य करने लग जाते हैं, अत: समय-समय पर दोनों परीक्षणों का मिलान कराते रहना चाहिये।

3. मूत्र परीक्षण प्रतिदिन कम-से-कम एक बार आपके डॉक्टर की सलाह के अनुसार।
4. हाइपोग्लाइसेमिया के लक्षणों पर नजर रखिये। यह कार्य आपके सहयोगियों को करना होगा। हाइपोग्लाइसेमिया के लक्षण (बहुत ज्यादा इन्सुलिन और बहुत कम शर्करा) निम्नलिखित हैं–

अ) प्रारम्भिक अवस्था	कमजोरी
	भूख
	पसीना
	हृदय की धड़कन
	शरीर में कँपकँपी
ब) मध्यम अवस्था	चक्कर
	उलझन
	अस्थिरता
स) उच्च अवस्था	मदहोशी
	किंकर्त्तव्यविमूढ़ता
	अस्पष्ट उच्चारण
	चलने में लड़खड़ाहट
	असन्तुलन
	सोते रहने की इच्छा
	मूर्च्छा (कोमा)

थोड़ा-सा ग्लुकोज खा लेना ही हाइपोग्लाइसेमिया का इलाज है। अच्छा होगा कि आप अपनी जेब में हमेशा ग्लुकोज की बनी टिकिया रखें। इससे कठिन समय में जीवन को खतरा नहीं रहेगा। शर्करा तल का हमेशा थोड़ा अधिक होना न्यून हो जाने से अच्छा है।

हाइपोग्लाइसेमिया के सन्देह पर शुद्ध ग्लुकोज के अन्तर्ग्रहण के दस मिनट के अन्दर प्रतिक्रिया न दिखे तो रोगी को तुरन्त अस्पताल ले जाना चाहिए। अस्पताल दूर हो तो डॉक्टर बुला लें।

निष्कर्ष

हमारा अनुभव है कि यदि योगाभ्यासी मधुमेह के रोगी को हाइपर और हाइपोग्लाइसेमिया की जानकारी हो तो कठिन समय में भी वह स्वयं को सन्तुलित कर लेगा। मधुमेह के अधिकतर रोगियों को मधुमेह की दोनों अवस्थाओं का अनुभव अवश्य होता है। रोगी को समय-समय पर चिकित्सकों के माध्यम से अपनी समस्याओं को सुलझाते रहना चाहिये। स्वयं रोगी ही चिकित्सा का सबसे अच्छा और संवेदनशील प्रबोधक होता है। यदि योग और चिकित्सा विज्ञान का समन्वय किया जाये तो निश्चय ही व्यक्ति शीघ्रता से स्वास्थ्य लाभ कर सकता है।

14

मधुमेह और आहार

मधुमेह के रोगी को क्या खाना चाहिए और क्या नहीं, यह हमेशा एक विवाद का विषय रहा है तथा अमेरिका में शरीर पर विभिन्न शर्कराओं के प्रभावों पर हाल में हुए अनुसन्धानों ने इस विषय को और भी विवादपूर्ण बना दिया है। फिर भी व्यावहारिक दृष्टि से हमने पाया है कि यदि योगाभ्यास के साथ कुछ विशेष खाद्य-पदार्थ लिये जाएँ तो मधुमेह के रोगी को लाभ होता है।

अधिकतर आहार-विज्ञानी इस बात से सहमत होंगे कि अच्छे स्वास्थ्य के लिए विविध न्यूनतम संसाधित खाद्य, जिनमें बहुत अधिक पोषक तत्त्व एवं रेशे हों, सर्वोत्तम हैं। केन्टुकी विश्वविद्यालय के डॉ. जेम्स डब्लू एण्डरसन ने यह पाया है कि मात्र अधिक रेशेयुक्त आहार, जैसे – साबुत अनाज, फली तथा रेशेदार सब्जियों के सेवन से इन्सुलिन लेने की मात्रा 25% घटायी जा सकती है। आश्रम में इसी प्रकार का भोजन बनाया जाता है।

आहार में वसा की मात्रा कम होनी चाहिए, क्योंकि अधिक वसायुक्त आहार कार्बोहाइड्रेट चयापचय को क्षीण कर देता है और हृदय रोग होने की सम्भावना बढ़ जाती है। अमरीकी मधुमेह एसोसिएशन अब मेडिकल चिकित्सा के साथ ऐसे आहार का सुझाव देता है जिसमें 50 – 60% कैलोरी कार्बोहाइड्रेट से मिलती हो, यह कार्बोहाइड्रेट चयापचय को बढ़ा देता है। हमारा सुझाव रहेगा कि शेष आहार में 20 – 30% प्रोटीन तथा 10 – 20% वसा हो।

मधुमेह में एक सामान्य परहेज है – शक्कर, शहद, ग्लूकोज तथा मिठाइयों के सेवन से बचें तथा जटिल कार्बोहाइड्रेट, जैसे – गेहूँ, जई, कूकू, मकई, साबुत चावल (हाथ से कुटा) का सेवन करें। किन्तु हाल के अनुसन्धान यह दर्शाते हैं कि मधुमेह का रोगी यदाकदा शर्करा की न्यूनतम मात्रा का सेवन

कर सकता है। इस विषय पर अपने डॉक्टर की सलाह के अनुसार चलना अच्छा है। एक अच्छा डॉक्टर, जो नवीनतम अनुसन्धानों के बारे में जानकारी रखता है, आपको आपकी आवश्यकता के अनुसार सुझाव देगा। फिर भी सामान्य मार्गदर्शन के रूप में मधुमेह के रोगियों और सामान्य स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त आहार का विवरण निम्नलिखित है–

1. सब्जियाँ (समूह 'अ')–निम्नलिखित सब्जियों में कार्बोहाइड्रेट एवं कैलोरी की मात्रा नगण्य होती है। इन्हें सलाद के रूप में आप जितना चाहें खा सकते हैं, किन्तु जब इन्हें पकाया जाता है तब इनका सेवन सीमित मात्रा में होना चाहिए। लगभग एक चौथाई लीटर के बराबर पकी हुई सब्जियाँ (उबाली, भूनी या भाप में पकी हुई, तली हुई नहीं) खा सकते हैं। उदाहरणार्थ–पत्ता गोभी, फूल गोभी, खीरा, बैंगन, पालक, भिण्डी, टमाटर, परवल, सेलरी और करेला।
2. सब्जियाँ (समूह 'ब')–हर एक चौथाई लीटर में लगभग 14 ग्राम कार्बोहाइड्रेट तथा 4 ग्राम प्रोटीन (लगभग 80 कैलारी) होता है, जैसे–गाजर, प्याज, हरा मटर।
3. फल–यहाँ फलों की जो मात्राएँ दी गयी हैं, उनमें से प्रत्येक में 10 ग्राम कार्बोहाइड्रेट (लगभग 40 कैलोरी) होता है–1 संतरा, 1 अमरूद, 1/3 पपीता, ½ सेब, ½ केला, एक कप तरबूज।
4. अनाज–यहाँ अनाज की जो मात्राएँ दी गयी हैं, उनमें से प्रत्येक में 25 ग्राम कार्बोहाइड्रेट तथा 2 ग्राम प्रोटीन (लगभग 70 कैलोरी) होता है–2½ चाय का चम्मच भर गेहूँ, ज्वार, बाजरा तथा मकई, ½ कप पका हुआ चावल या खिचड़ी, 20 ग्राम बिना चीनी के बिस्कुट, 100 ग्राम उबले हुए आलू।
5. दाल–नियमानुसार, 1 कप (पकी हुई ¼ लीटर दाल, जैसे, मसूर, मूँग, अरहर) में लगभग 140 कैलोरी होती हैं।
6. वसा–निम्नांकित प्रत्येक चीज में 5 ग्राम वसा (लगभग 50 कैलोरी) होता है–एक चाय का चम्मच भर मक्खन, तेल या घी; 10 ग्राम किशमिश, बादाम या मूँगफली।
7. दूध–निम्नांकित प्रत्येक चीज में 12 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 8 ग्राम प्रोटीन, 10 ग्राम वसा (लगभग 170 कैलोरी) होता है–¼ लीटर दूध (एक कप), एक कप दही, प्रत्येक 240 ग्राम।

इस आधार पर मधुमेह के रोगी के लिए आहार का प्रारूप इस प्रकार होना चाहिए (यहाँ 1 का प्रयोग ¼ लीटर की मात्रा दर्शाने के लिए किया गया है, इस प्रकार 2 का अर्थ हुआ ½ लीटर)–

जलपान– 1 ब्रेड +1 दूध +1 फल +1 वसा या एक मुट्ठीभर अंकुरित मूँग।

मध्याहन का भोजन– 1 सब्जी (समूह अ) + 1 सब्जी (समूह ब) +3 अन्न+ 2 दाल + 3 वसा + ½ दही + 1 फल।

चाय– ½ दूध + 1 ब्रेड, या 1 फल + 10 ग्राम मेवा।

शाम का भोजन– 1 सब्जी (समूह अ) + 1 सब्जी (समूह ब) + 3 अन्न+ 1 दाल + 2 वसा + 1 फल।

रात्रि विश्राम के समय– 1/3 दूध या 2 फल।

मधुमेह के रोगी के लिए यह आहार तालिका प्रतिदिन लगभग 2000 से 2500 कैलोरी की आपूर्ति करती है, अपनी आवश्यकता और माँग के अनुसार इसमें परिवर्तन किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि आप बहुत अधिक परिश्रम का कार्य कर रहे हैं तो आपको अधिक कैलोरी की आवश्यकता हो सकती है।

जब योग साधना के साथ उपर्युक्त आहार लिया जाता है, और जब रक्त शर्करा योगाभ्यास, आहार एवं दवाओं के सेवन से आवश्यकतानुसार नियन्त्रण में आ जाती है तब आहार को पुन: बदला जा सकता है। किन्तु इस प्रकार का भोजन आश्रम में पकाये जाने वाले भोजन के समान है और अधिकतर व्यक्तियों के लिए हलके, संतुलित आहार के रूप में इसका सुझाव दिया जाता है। जिससे सामान्य स्वास्थ्य एवं हमारी आयु में वृद्धि होती है।

रोगी और डॉक्टरों को मधुमेह में खाये जा सकने वाले आहार पर ही अपनी सजगता को केन्द्रित नहीं रखना चाहिए, बल्कि यह भी जानना चाहिए कि योग का समावेश रोगी के जीवन को रूपान्तरित कर सकता है। यह अपनी आवश्यकताओं एवं क्षमता के प्रति हमारी सजगता को बढ़ाता है, पाचन एवं चयापचय को सुधारता है और नव-स्वास्थ्य, प्राण-शक्ति एवं उच्च चेतना रूपी उपहार भी भेंट करता है।

15

योग द्वारा मधुमेह की चिकित्सा

योग चिकित्सा पद्धति में समय लगता है और दृढ़ इच्छाशक्ति की आवश्यकता पड़ती है, किन्तु विशद् रूप में फैले इस रोग की यही जीवन्त चिकित्सा है।

ध्यान

मानव शरीर में जो क्रियाएँ या प्रतिक्रियाएँ होती हैं, उनका नियंत्रण तन्त्रिका-तन्त्र से होता है। मनुष्य और उसके शरीर द्वारा भूतकाल में की गई क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं का लेखा-जोखा तन्त्रिका-तन्त्र रखता है तथा उनका वर्तमान परिस्थिति से मिलान करता है। इसी क्रिया के फलस्वरूप वे निर्णय होते हैं जो मनुष्य के प्रत्येक ऐच्छिक या अनैच्छिक कार्य को अनुशासित करते हैं। इस नियंत्रण का क्षेत्र अवयवों एवं मांसपेशियों के अचेतन नियंत्रण से लेकर उन निर्णयों तक है जो चेतन बुद्धि द्वारा लिये जाते हैं। मनुष्य का सारा अस्तित्व ही तन्त्रिका-तन्त्र की शुद्ध कार्यप्रणाली पर आधारित है।

योग विज्ञान का मत है कि तन्त्रिका-तन्त्र को ध्यान योग के द्वारा अधिकाधिक दक्षता के साथ काम करने के योग्य बनाया जा सकता है। इस सिद्धान्त को भारत, यूरोप तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में विगत कुछ वर्षों के अन्दर किये गये शोधों के द्वारा प्रमाणित किया जा चुका है। इन शोधों द्वारा निश्चित रूप से यह प्रमाणित हुआ है कि ध्यान के दैनिक अभ्यास से व्यक्ति के स्थूल शरीर में सामंजस्यपूर्ण परिवर्तन होते हैं।

ध्यान का अभ्यास अन्त:स्रावी ग्रन्थियों को संतुलित करके मधुमेह में लाभ पहुँचाता है, क्योंकि अजपा जप जैसी क्रियाओं के अभ्यास से अनुकम्पी तन्त्रिका-तन्त्र शान्त और शिथिल होता है। योगनिद्रा के अभ्यास

से हाइपोथैलेमस (अधश्चेतक) प्रभावित होता है। इससे पिट्यूटरी ग्रंथि का स्राव नियमित होता है। मानसिक दक्षता में सामान्य रूप से वृद्धि हो जाती है।

हठयोग

मधुमेह की रोकथाम में हठयोग की शंखप्रक्षालन एवं कुंजल क्रियाएँ बड़ी महत्त्वपूर्ण हैं। शंखप्रक्षालन द्वारा मुँह से लेकर गुदा तक जाने वाले अन्न-पथ (एलीमेन्ट्री ट्रैक) की पूर्ण सफाई की जाती है। इस क्रिया में अधिक मात्रा में नमकीन एवं गुनगुना पानी एक-एक गिलास करके पिया जाता है तथा बीच-बीच में पाँच विशिष्ट योगासनों को किया जाता है। इन आसानों से पाचन गति को नियंत्रित करने वाली संकोचक पेशियाँ (स्फिंक्टर मसल्स) खुल जाती हैं तथा पानी अन्न-पथ में तेज गति से नीचे उतरने लगता है। कुछ गिलास पानी पीकर इस प्रकार की क्रिया करने के पश्चात् अभ्यासी स्वयं शौच जाना प्रारम्भ कर देता है। इस प्रकार पिया हुआ जल आमाशय तथा अँतड़ियों में जमे मल के साथ मिलकर गुदा मार्ग से निकल जाता है।

इस अभ्यास के पूरा होते-होते अभ्यासी का पाचन तंत्र बिलकुल साफ हो जाता है तथा गुदा मार्ग से उतना ही साफ पानी निकलने लगता है जितना साफ पानी पिया गया था। इस क्रिया की समाप्ति पर 45 मिनट से लेकर 1 घण्टे तक पूर्ण विश्राम लेना पड़ता है। यही अवधि ऐसी होती है जिसमें पाचन तंत्र (पैन्क्रियाज और लिवर के साथ) को विश्राम पाने का अवसर मिलता है, क्योंकि अँतड़ियों के बिल्कुल खाली रहने पर ही पाचन नाड़ियों के आवेग तथा ग्रंथियों के स्राव बन्द होते हैं। इसी थोड़े समय के भीतर अंदर के अवयव अपने को पुनर्जीवित करने योग्य हो जाते हैं। विश्राम के पश्चात् अभ्यासी को घी मिलाकर खिचड़ी दी जाती है जिससे पाचन प्रणाली पुनः बहुत आसानी से संतुलित रूप में अपना काम करना शुरू कर देती है। इस शंखप्रक्षालन का लघु रूप 40 दिनों तक जारी रखा जाता है। इस अवधि में अधिकाधिक जीर्ण मधुमेह से पीड़ित रोगियों का भी रक्त शर्करा तल घटकर स्वाभाविक स्थिति में आकर 80/120 मि. ग्राम 100 घन सेमी. हो जाता है और इसी स्थिति में तब तक बना रहता है जब तक कि अधिक मात्रा में ग्लुकोज का उपभोग करने के कारण शरीर तन्त्र दोबारा असंतुलित नहीं हो जाता।

आसन एवं प्राणायाम

मधुमेह की चिकित्सा में ध्यान तथा शंखप्रक्षालन के साथ कुछ योगासनों का नियमित अभ्यास भी आवश्यक है। इन आसनों के द्वारा तंत्रिका आवेगों (नर्वस इम्पल्स) तथा ग्रंथि क्षेत्रों में रक्त के समुचित वितरण का नियमन होने तथा ग्रंथियों एवं अवयवों का मृदु-मर्दन होने के कारण मधुमेह की बीमारी से संबंधित अवयवों की क्रियाएँ समायोजित होती हैं। प्राणायाम के द्वारा शरीर में व्याप्त ऊर्जा नियंत्रित होती है और उन क्षेत्रों में पर्याप्त मात्रा में पहुँचने लगती है जहाँ प्राणशक्ति की अधिक आवश्यकता है। इससे मस्तिष्क, पैन्क्रियाज और अन्य आंतरिक अंग सचेतनता से सुव्यवस्थित तरीकों से पुनर्जीवित किये जा सकते हैं।

याद रखिये

योग के द्वारा मधुमेह की रोकथाम एक जटिल एवं प्राविधिक प्रक्रिया है। अत: किसी अनुभवी शिक्षक के प्रत्यक्ष मार्गदर्शन के बिना इसे हरगिज नहीं किया जाना चाहिये।

16

दैनिक कार्यक्रम

यह कार्यक्रम योग-चिकित्सा का आधार है तथा अंत में रोग से मुक्ति दिलाता है। योग के माध्यम से मधुमेह की रोकथाम हेतु एक कार्यक्रम दिया जा रहा है जिसका अभ्यास प्रतिदिन किया जाना चाहिए। यह अपेक्षाकृत स्वस्थ व्यक्तियों के लिए तैयार किया गया है। अत: व्यक्ति विशेष के अनुसार इसमें थोड़ा परिवर्तन किया जा सकता है। इस कार्यक्रम को आप अपने अभ्यास की रूपरेखा समझ सकते हैं। अपनी रुचि एवं सुविधाओं की दृष्टि से इसमें कुछ हेरफेर भी किया जा सकता है।

उपचार का यह कार्यक्रम किसी अनुभवी योग शिक्षक के मार्गदर्शन में हो अथवा अच्छा होगा कि इस अभ्यास को किसी साधनयुक्त योग विद्यालय या आश्रम में ही सम्पन्न किया जाये। प्रशिक्षण की अवधि एक महीने की है। इस कार्यक्रम में चार सप्ताह के प्रशिक्षण तथा अभ्यास सम्मिलित हैं। एक महीने के इस प्रशिक्षण के बाद अभ्यासी इस योग्य हो जायेंगे कि वे अपने घर पर रहकर ही व्यक्तिगत रूप से इसका अभ्यास कर सकें। सम्बद्ध साधन संपन्न योग विद्यालयों और आश्रमों की सूची आप बिहार योग विद्यालय, मुंगेर से डाक द्वारा प्राप्त कर सकते हैं।

आवश्यक सूचना

सामान्यत: शर्करा के उतार-चढ़ाव के समय प्रतिदिन रोगी की मूत्र-परीक्षा की जाती है। इन्सुलिन की उतनी ही मात्रा दी जाती है जिससे पेशाब में शर्करा की मात्रा सामान्य रहे और गुर्दे ठीक काम कर सकें। इन्सुलिन मात्रा-निर्धारण के लिए यह एक उत्तम विधि है। दैनिक कार्यक्रम का स्पष्ट विवरण नीचे दिया जा रहा है।

प्रथम सप्ताह

आसन

पवनमुक्तासन
वज्रासन – दस मिनट, प्रत्येक भोजन के बाद।
शवासन – श्वास पर सजगता के साथ।

शुद्धिकरण क्रिया

नेति क्रिया

प्राणायाम

उज्जायी प्राणायाम

शिथिलीकरण और ध्यान

शिथिलीकरण – पहली एवं दूसरी अवस्था।
अजपा जप – पहली एवं दूसरी अवस्था।

द्वितीय सप्ताह

आसन

पवनमुक्तासन
वज्रासन – दस मिनट, प्रत्येक भोजन के बाद।
सूर्य नमस्कार – एक से तीन आवृत्तियाँ।
शंखप्रक्षालन के आसन
शवासन – श्वास पर सजगता के साथ।

शुद्धिकरण की क्रियाएँ

कुंजल क्रिया
नेति क्रिया

प्राणायाम

उज्जायी प्राणायाम – 108 आवृत्तियाँ
नाड़ी शोधन प्राणायाम – पहली अवस्था
भस्त्रिका प्राणायाम – प्रत्येक नासिका छिद्र से एक आवृत्ति तथा दोनों नासिका छिद्रों से (एक साथ) एक आवृत्ति।

शिथिलीकरण और ध्यान

शिथिलीकरण – चारों अवस्थाएँ
अजपा जप – चारों अवस्थाएँ

आहार

शर्करा सम्पन्न भोजन को धीरे-धीरे इस प्रकार सीमित किया जाना चाहिये कि सातवें दिन तक भोजन सिर्फ चावल, गेहूँ तथा उबाली हुई सब्जियों से बने सरल भोजन पर आ जाये।

दवा

इस सप्ताह में सामान्य रूप से प्रतिदिन ली जाने वाली इन्सुलिन की मात्रा 25% घट जाये।

तृतीय सप्ताह

यह सम्भव है कि इस सप्ताह कुछ लोगों में इन्सुलिन की मात्रा बहुत बढ़ जाये। ऐसा विशेषकर उन लोगों में होता है जिन पर अभ्यासों की नाटकीय प्रतिक्रिया होती है या जो पिछले सप्ताह बहुत चिन्तित रहे हों, क्योंकि चिन्ता के कारण बनने वाली एड्रिनलिन रक्त-शर्करा का तल बढ़ा देती है।

प्रथम दिन (सुबह)

शुद्धिकरण की क्रियाएँ
शंखप्रक्षालन – जब तक गुदा-द्वार से साफ पानी न निकलने लग जाये।
कुंजल क्रिया, नेति क्रिया

आहार
शंखप्रक्षालन के बाद 45 से 60 मिनट तक कुछ न खाया जाये। इसके बाद चावल, दाल तथा शुद्ध घी से बनी खिचड़ी खानी चाहिए।

प्रथम दिन (दोपहर)

ध्यानाभ्यास
अजपा जप – सम्पूर्ण
योगनिद्रा – सम्पूर्ण

आहार
शाम को सुबह के समान खिचड़ी (बिना घी की) खानी चाहिए। चाय, कॉफी, तम्बाकू, मसाले तथा उत्तेजक भोज्य पदार्थ पूरी तरह से वर्जित है।

दवा
चूँकि शंखप्रक्षालन रक्त शर्करातल निम्न कर देता है। अत: उस दिन इन्सुलिन रोक दी जाये।

दूसरा दिन

ध्यानाभ्यास
अजपा जप
योगनिद्रा

आहार
गेहूँ तथा दूसरे अन्नों (चावल को छोड़कर) से बने भोजन, जैसे रोटी या शर्करा विहीन सत्तू इत्यादि लिये जा सकते हैं। अति अम्लता से बचने के लिए साधारण रूप से उबाली हुई सब्जियाँ भी ली जा सकती हैं।

दूध तथा दूध से बने पदार्थ, मिठाइयाँ, मसाले, तम्बाकू, शराब तथा दूसरे उत्तेजक पदार्थ कम-से-कम इस सप्ताह तक नहीं लिये जाने चाहिए।

दवा
दैनिक मात्रा की आधी मात्रा में इन्सुलिन ली जाये। अपराह्न को मूत्र परीक्षण कराया जाये और यदि शर्करा की मात्रा बिल्कुल न हो तो तीसरे दिन इन्सुलिन की मात्रा कम की जाये।

तीसरे से सातवें दिन तक

शुद्धिकरण की क्रियाएँ
चालीस दिनों तक प्रात:काल लघु शंखप्रक्षालन तथा उसके बाद कुंजल एवं नेति क्रिया।

आसन
पवनमुक्तासन
वज्रासन – प्रत्येक भोजन के बाद दस मिनट
सूर्य नमस्कार – तीन आवृत्तियाँ
धीरे-धीरे निम्नांकित आसनों को सीखना चाहिए एवं उन्हें दैनिक अभ्यास में जोड़ते जाना चाहिए। इन आसनों का अभ्यास बहुत धीरे-धीरे करना चाहिए ताकि शरीर पर ज्यादा जोर न पड़े – शवासन, सुप्त वज्रासन, पश्चिमोत्तानासन, सर्वांगासन, भुजंगासन, हलासन, धनुरासन, गोमुखासन, योगमुद्रा, अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन, मत्स्यासन, ताड़ासन, शशांकासन।

प्राणायाम
उज्जायी प्राणायाम – 108 आवृत्तियाँ
नाड़ी शोधन प्राणायाम – तीनों स्थितियों में, अंतिम अनुपात 1:2:2 या 1:4:2, तीन आवृत्तियाँ।
भ्रामरी प्राणायाम – 9 आवृत्तियाँ
भस्त्रिका प्राणायाम – श्वास की संख्या धीरे-धीरे बढ़ाते हुए प्रत्येक नासिका से और फिर दोनों से एक साथ 50 बार तक ले जाइये। इसकी तीन आवृत्तियाँ कीजिये।
शीतली प्राणायाम – नौ आवृत्तियाँ

ध्यानाभ्यास
अजपा जप
योगनिद्रा

दवा
दूसरे दिन की तरह। प्रतिदिन इन्सुलिन की मात्रा इस प्रकार निर्धारित की जाये कि पेशाब में शर्करा की बहुत थोड़ी मात्रा रह जाये।

चतुर्थ सप्ताह

शुद्धिकरण की क्रियाएँ
लघु शंखप्रक्षालन
कुंजल क्रिया
नेति क्रिया

आसन
सूर्य नमस्कार – 6 से 12 आवृत्तियाँ
शवासन
वज्रासन – प्रत्येक भोजन के बाद दस मिनट
उच्च आसन – उपर्युक्त सूची के अनुसार

प्राणायाम
नाड़ीशोधन प्राणायाम – तीनों स्थितियाँ (पाँच आवृत्तियाँ प्रत्येक की)
भ्रामरी प्राणायाम – 9 आवृत्तियाँ
भस्त्रिका प्राणायाम – 50 श्वासों का। इसके पश्चात् जालंधर बंध, अंतर्कुम्भक के साथ दाहिनी, बायीं और दोनों नासिकाओं से करें। यह एक आवृत्ति है। तीन आवृत्तियाँ करें।
शीतली प्राणायाम – 9 आवृत्तियाँ
उज्जायी प्राणायाम – 9 आवृत्तियाँ
शीतकारी प्राणायाम – 108 आवृत्तियाँ (शवासन में)

ध्यानाभ्यास
अजपा जप
योगनिद्रा

आहार
इस सप्ताह में धीरे-धीरे भोजन सामान्य स्थिति में लाया जाये। अच्छा होगा कि शर्करा सम्पन्न कार्बोहाइड्रेट तथा वसायुक्त भोजन कम-से-कम खाया जाये। इससे रक्त-शर्करा को नियमित करने वाली शारीरिक प्रक्रिया कार्याधिक्य से बचती है तथा इसके कारण मधुमेह के प्रत्यावर्तन की संभावना नहीं रहती।

दवा
इन्सुलिन मूल दैनिक मात्रा की चौथाई मात्रा में ली जानी चाहिए। इस सप्ताह के अंत तक इसे पूर्णत: बंद कर दीजिये तथा रक्त-शर्करा की जाँच करा लीजिये। इन्सुलिन की मात्रा प्रतिदिन के मूत्र: परीक्षण के आधार पर निर्धारित की जानी चाहिए। जब परीक्षण इन्सुलिन बंद करने का संकेत दे तो उसे तुरन्त बंद कर दीजिये। इसके बाद रक्त-शर्करा की जाँच कराकर डॉक्टरों की सलाह से दवा लेनी चाहिए।

चतुर्थ सप्ताह के बाद

चार सप्ताह के अभ्यास के दौरान रोगी को अपनी शारीरिक क्षमता का स्पष्ट ज्ञान हो जायेगा। तब वह आसानी से अपने अनुकूल योग क्रियाओं को चुन सकता है। इन अभ्यासों को नियमित रूप से करते रहने से व्यक्ति जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विकास कर सकता है। अपनी व्यक्तिगत और सामाजिक परिस्थितियों के अनुकूल एक निश्चित यौगिक कार्यक्रम बना लेना चाहिए। निम्नलिखित कार्यक्रम को मधुमेह के रोगियों के लिए उपयोगी पाया गया है –

शुद्धिकरण की क्रियाएँ

लघु शंखप्रक्षालन – सप्ताह में एक बार
कुंजल और नेति क्रियाएँ – आवश्यकतानुसार

आसन

पश्चिमोत्तानासन
भुजंगासन
धनुरासन
सर्वांगासन
हलासन
अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन

प्राणायाम

भ्रामरी
नाड़ी शोधन
भस्त्रिका

ध्यानाभ्यास

अजपा जप
योगनिद्रा

17

निम्न रक्त शर्करा

निम्न रक्त शर्करा या प्रतिक्रियात्मक हाइपोग्लाइसेमिया एक बहुत सामान्य अवस्था है। ऐसा प्रतीत होता है कि अधिक लोग उच्च रक्त शर्करा की अपेक्षा निम्न रक्त शर्करा से पीड़ित होते हैं, यद्यपि इस अवस्था की अनिश्चित प्रकृति के कारण आजकल के आँकड़े विश्वसनीय नहीं हैं, क्योंकि प्राय: यह अनैदानिक ही रह जाती है। यह भी सम्भव है कि आज अधिकतर लोग इससे आंशिक रूप से पीड़ित होते हैं, और इस कारण थकान एवं दुर्बलता का अनुभव करते और किसी स्फूर्तिकारक, जैसे, एक कप कॉफी की आवश्यकता महसूस करते हैं।

लक्षण

हाइपोग्लाइसेमिया होने का सबसे सामान्य लक्षण है दीर्घकालिक थकान, निराशा एवं चिड़चिड़हाट का अनुभव, अकेले रहने की इच्छा। अन्य लक्षण हैं – खालीपन का अनुभव, सिरदर्द, एकाग्र नहीं हो पाना, भुलक्कड़पन तथा अनिश्चित दौर। अधिकतर लोग इनमें से किसी एक या अधिक लक्षणों से पीड़ित रहते हैं, जो कि आवर्ती होता है और इसका अनुभव मुख्यत: प्रात: उठते ही, मध्याह्न (लगभग 11 बजे) एवं अपराह्न (3 से 4 बजे के बीच) होता है। ये लक्षण कभी-कभी कुछ खाने से कुछ मिनटों में ही दूर हो जाते है। शाम को भोजनोपरान्त इन लक्षणों से मुक्त होना भी इसकी एक पहचान है।

हम सभी दिनभर ऊर्जा, शारीरिक-लय, मनोभावों, हार्मोनों, भावनाओं एवं विचारों के आवर्ती उतार-चढ़ाव का अनुभव करते हैं। कुछ लोग अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक स्थिर होते हैं। किन्तु हाइपोग्लाइसेमिया से पीड़ित

व्यक्ति उच्च एवं निम्न ऊर्जा अवस्थाओं के बीच कभी-कभी ऐसे प्रचण्ड एवं दु:खद उतार-चढ़ाव का अनुभव करता है, जिसका वर्णन करना कठिन है। यहाँ तक कि डॉक्टर भी जो कुछ घट रहा होता है, उसे पहले-पहल समझ नहीं पाते। हाइपोग्लाइसेमिया के लक्षण शरीर में ग्लूकोज का नियमन करने वाले प्रक्रमों में अस्थिरता के कारण उत्पन्न होते हैं, जिसके कारण खाने के कुछ घण्टों बाद हमारी रक्त शर्करा का तल निम्न हो जाता है, सामान्य लोगों में उपवास के समय शर्करा का जो तल रहता है, उससे भी नीचे चला जाता है। यह निम्न शर्करा तल हमारे चयापचय एवं ऊर्जा स्तर को प्रभावित करता है और उपर्युक्त लक्षण उत्पन्न होते हैं।

कारण

इस समस्या के मुख्य कारण हैं–दीर्घकालिक परेशानी, जो मस्तिष्क की नियंत्रक प्रणाली को अव्यवस्थित कर देती है और स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र, अंत:स्रावी तथा चयापचयी असंतुलन के रूप में परिलक्षित होती है; व्यायाम का अभाव और सम्भवत: सबसे महत्त्वपूर्ण है शर्करा एवं संसाधित कार्बोहाइड्रेट का अत्यधिक सेवन।

कुछ ऐसे खाद्य हैं, जिन्हें शरीर ठीक ढंग से पचा नहीं पाता, इनमें विशेषकर संसाधित खाद्य होते हैं। पश्चिमी देशों के अनेक आहार ऐसे हैं जिनकी विशेषता ही होती है अत्यधिक संसाधित खाद्य, जिनमें बड़ी मात्रा में सामान्य शर्करा हो सकती है, उदाहरण के लिए सुक्रोज, सफेद आटा, सफेद चावल, सफेद ब्रेड, बिस्कुट, केक, तत्काल पकाये जा सकने वाले खाद्य, जलपान के लिए तैयार किये गये बन्द अनाज, इत्यादि।

शर्करा की समस्या

आजकल शर्करा का सेवन कई गुना बढ़ गया है। जितनी ही शर्करा की उपलब्धता बढ़ी है और अनेक पकवानों में इसका उपयोग होने लगा है, इसका सेवन बढ़ता ही जा रहा है। आज से सौ वर्ष पूर्व हम कई महीनों में एक किलोग्राम शर्करा का सेवन करते थे। किन्तु आज औसतन मनुष्य लगभग एक किलोग्राम शर्करा हर सप्ताह खाता है, और शर्करा की अधिकांश मात्रा भोजन में छुपी रहती है। यदि हम इसके बारे में सोचें तो पायेंगे कि हम कॉफी, चाय, अनाज, मिठाइयों, केक, चॉकलेट, जैम, दूध, दही और शहद तथा अन्य

मीठे खाद्यों के रूप में भी बहुत अधिक मात्रा में शर्करा का सेवन करते हैं। यदि हम भोजन के बीच-बीच में नाश्ता भी लें तो शर्करा सेवन औसतन दुगना या उससे भी अधिक बढ़ जाता है।

हम पूछ सकते हैं, आखिर शक्कर खाने में गलत ही क्या है? शक्कर की अधिक मात्रा हमारे लिए हानिकर क्यों है, इस सन्दर्भ में दो बातें याद रखने योग्य हैं –

1. शहद तथा सीधे गन्ने से बनायी गयी असंसाधित शक्कर के अलावा शक्कर के जितने रूप होते हैं उनमें, और अधिकांश संसाधित खाद्यों में वस्तुत: पोषक तत्त्वों का अभाव होता है। किन्तु इनमें प्राय: कैलोरी की मात्रा बहुत अधिक होती है, जिससे शरीर का भार और वसा का जमाव बढ़ने लगता है और ये अच्छे स्वास्थ्य के लिए शरीर को कोई विटामिन या खनिज पदार्थ भी नहीं देते।
2. साधारण संसाधित शर्करा (साबुत गेहूँ, चावल आदि में पायी जाने वाली शर्करा के विपरीत) शरीर की शर्करा नियन्त्रण प्रक्रिया पर दबाव डालती और उसमें असंतुलन लाती है। हर बार जब भी हम साधारण शक्कर खाते हैं, यह शीघ्रता से शरीर द्वारा अवशोषित कर ली जाती है, जिससे रक्त शर्करा की मात्रा बहुत अधिक बढ़ जाती है, और इस स्थिति का सामना करने के लिए शीघ्रता से इन्सुलिन का तीव्र स्राव होने लगता है। यदि कई वर्षों तक इसी प्रक्रिया को दिन में कई बार दुहराया जाता है, तो पेंक्रियाज और तन्त्रिका नियमन की क्रियाविधियाँ असंतुलित हो सकती हैं, जिसके परिणामस्वरूप उच्च या निम्न रक्त शर्करा की शिकायत हो जाती है।

उच्च रक्त शर्करा, मधुमेह, तब होता है जब पेंक्रियाज तथा नाड़ियाँ थक चुकी होती हैं और या तो पर्याप्त इन्सुलिन का उत्पादन नहीं कर पातीं या विलम्ब से इन्सुलिन का स्राव करती हैं।

निम्न रक्तचाप तब होता है जब बहुत अधिक शक्कर युक्त भोजन खाते हैं। रक्त शर्करा का तल शीघ्रता से ऊपर चढ़ता है, जिसके कारण पेन्क्रियाज अति-प्रतिक्रियाशील हो जाती है और इन्सुलिन का अत्यधिक स्राव करने लगती है, जिससे शर्करा का तल बहुत नीचे चला जाता है। मस्तिष्क को भूखे रहना पड़ता है, जिससे हमारे भीतर थकान और दुर्बलता के लक्षण पैदा होने लगते हैं। प्रारम्भ में साधारण शर्करा का सेवन हमें उच्च ऊर्जा का क्षणिक अनुभव कराता है। किन्तु यह ऊर्जा स्तर शीघ्र ही नीचे चला जाता है और हम

कमजोरी और निराशा का अनुभव करने लगते हैं तथा एकाग्र नहीं हो पाते। यह स्थिति हमें उद्दीपनों के द्वारा, जैसे कॉफी और चाय तथा शक्कर से बनी अन्य चीजों को ग्रहण कर ऊर्जा स्तर को ऊँचा उठाने के लिए प्रेरित करती है। इस प्रकार यह दोषपूर्ण चक्र चलता रहता है।

चूँकि यह स्थिति अनिश्चित और अविशेष रहती है, इसलिए जब तक विशेष रक्त परीक्षण न किये जायें, इसका तत्काल निदान नहीं हो पाता और कोई व्यस्त डॉक्टर इस अवस्था को मनोवैज्ञानिक, तन्त्रिका सम्बन्धी या रोगभ्रम की अवस्था समझने की भूल कर सकता है।

क्या करें?

हाइपोग्लाइसेमिया को दूर करने की दिशा में पहला कदम है, संसाधित, परिशोधित एवं व्यर्थ के खाद्यों का सेवन बन्द कर देना और शक्कर कम मात्रा में लेना। जब तक आपका आहार अच्छा है और आप योगाभ्यास कर रहे हैं, तब तक शक्कर या शहद दिन में एक-दो बार कम मात्रा में ले सकते हैं, अन्यथा डॉक्टर आपको शक्कर बिल्कुल नहीं खाने की सलाह देंगे।

आपके आहार में साबुत अनाज, दालें, बहुतायत में ताजी सब्जियाँ– कच्ची और पकी हुई दोनों, साबुत मेवे, अंकुरित मूँग और चना। चावल तथा अन्य स्टार्चयुक्त खाद्यों के स्थान पर गेहूँ खाने का सुझाव दिया जाता है। तेल, घी, तला हुआ भोजन तथा मिर्च-मसाले का सेवन न्यूनतम मात्रा में करें, क्योंकि वे पाचन और चयापचय को मन्द कर देते हैं। दुग्ध उत्पादों एवं फलों का सेवन भी संतुलित एवं संयत मात्रा में करना चाहिए।

कभी-कभी विटामिन और खनिज की पूर्ति करने वाले पदार्थों के सेवन की आवश्यकता होती है, जिनमें विटामिन बी, विटामिन सी (500 मि.ग्रा. प्रतिदिन) तथा शेष खनिज, जैसे कैल्शियम, जिंक, मैग्नीशियम, क्रोमियम, मैंगनीज तथा सेलेनियम हों।

अभ्यास

वैसे तो योग के अनेक अभ्यास हैं, परन्तु यहाँ हमने केवल उन्हीं अभ्यासों को सम्मिलित किया है जो दमा और मधुमेह के रोगियों के लिये अत्यंत आवश्यक हैं। हमने इन आसनों का चुनाव रोग से संबंधित शारीरिक और मानसिक समस्याओं को कम करने, शारीरिक स्वास्थ्य को प्राप्त करने और आध्यात्मिक मार्ग पर आगे बढ़ने के दृष्टिकोण से किया है। इन अभ्यासों का वर्णन आपको योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर द्वारा प्रकाशित 'आसन प्राणायाम मुद्रा बंध', 'ध्यान तंत्र के आलोक में' तथा अन्य प्रकाशनों में मिलेगा। यद्यपि पुस्तकों में वर्णित सभी विधियाँ घर में अभ्यास करने योग्य हैं, परन्तु योग्य योग-शिक्षक का मार्गदर्शन लेना उचित होगा। आप चाहें तो बिहार योग विद्यालय, मुंगेर के प्रशिक्षित योग-शिक्षकों का मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं। संपर्क का पता है–

बिहार योग विद्यालय
गंगादर्शन
मुंगेर (बिहार) 811201
भारत

18

शुद्धिकरण की क्रियाएँ

हठयोग, (षट्कर्म) में शुद्धिकरण की छः क्रियाएँ हैं जिनसे शरीर और मन के विषाक्त तत्त्वों का निष्कासन होता है। ये अभ्यास उत्तम स्वास्थ्य और दीर्घ आयु के दृष्टिकोण से बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। आज हमारी औसत आयु मात्र सत्तर वर्ष ही रह गई है और इसका कारण है कि हम लगातार अपने शरीर में विषाक्त तत्त्व और गंदगी जमा कर रहे हैं तथा हमारी आदतें और दैनिक क्रियाकलाप शरीर को उनके निष्कासन का मौका ही नहीं देते। इससे हमारी संचित शक्ति एवं स्वास्थ्य में ह्रास होता जाता है। शुद्धिकरण के अभ्यासों द्वारा इस ह्रास को रोका जा सकता है।

शुद्धिकरण की छः क्रियाएँ हैं – नेति, धौति, नौलि, बस्ति, त्राटक और कपालभाति। हमने यहाँ केवल उन्हीं अभ्यासों को सम्मिलित किया है जो दमा और मधुमेह के रोगियों के लिए उपयोगी हैं। इनसे आपके शरीर और मन की शुद्धि होगी और आप उत्तम स्वास्थ्य की ओर अग्रसर होंगे। एक बार जब आप शरीर की शुद्धि प्रारम्भ करते हैं तो उत्तम स्वास्थ्य-प्राप्ति की यह क्रिया स्वतः ही शुरू हो जाती है।

कुंजल क्रिया

विधि – लगभग छह गिलास थोड़ा कुनकुना पानी लीजिये। इसमें थोड़ा नमक मिलाइये।

आधे लिटर पानी में एक चाय चम्मच भर नमक मिलाना ठीक है। नमक को पानी में अच्छी तरह मिलाइये।

अब खड़े होकर एक के बाद एक छह गिलास पानी जल्दी-जल्दी पीने का

प्रयास कीजिये। अधिक-से-अधिक पानी पीकर सामने की ओर झुकिये। दाहिने हाथ की पहली एवं दूसरी उँगली को गले में अधिक-से-अधिक भीतर डालिये। प्रतिक्रियास्वरूप वमन होगा और सम्पूर्ण जल बाहर आ जायेगा। जिह्वा के पृष्ठ भाग को उँगली से रगड़िये एवं उस पर दबाव डालिये। प्रतिक्रियास्वरूप वमन होगा और सम्पूर्ण जल बाहर आ जायेगा। जिह्वा पर तब तक दबाव डालें जब तक कि पेट खाली न हो जाये।

समय – प्रात:काल खाली पेट में इसका अभ्यास करना चाहिये। शंखप्रक्षालन के अभ्यास के बाद भी कुंजल क्रिया करनी चाहिये।

सावधानी – अभ्यास के बीस मिनट बाद तक अन्न ग्रहण न करें।

जल नेति

आवश्यक सामग्री – इसके लिये एक विशेष प्रकार का लोटा, जिसे नेति लोटा कहा जाता है, काम में लाया जाता है (देखिये चित्र)। इसे बिहार योग विद्यालय की किसी भी शाखा से स्वयं आकर या डाक द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। लोटे में कुनकुना पानी भरिये। पानी का तापक्रम रक्त के तापक्रम के उपयुक्त एवं नासिका छिद्र से प्रवाहित होने के लायक हो। अब प्रति आधे लिटर पानी में एक चाय चम्मच भर नमक मिलाइये। नमक पानी में पूरी तरह घुल जाना चाहिए। नमक घुल जाने पर पानी को साफ कपड़े से छान लेना चाहिये। यह सावधानी रखनी बहुत आवश्यक है।



विधि – लोटे की टोंटी को बायें नथुने के भीतर डालिये। सिर को धीरे-धीरे दाहिनी ओर झुकाइये, साथ ही लोटे को इस विधि से ऊपर उठाइये कि जल का प्रवाह बायें नथुने में हो।

मुँह को पूरी तरह खुला रखिये ताकि नासिका के बदले मुँह से श्वसन क्रिया की जा सके।

जल का प्रवाह बायें नथुने से भीतर जाकर दाहिने से बाहर आ जायेगा। यह क्रिया स्वाभाविक रूप से होगी। यह ध्यान रखें कि लोटे की स्थिति एवं सिर का झुकाव ठीक से हो। लगभग बीस सैकण्ड तक जल का स्वतंत्र प्रवाह होने दीजिये तथा उसके बाद लोटा हटा लीजिये।

उसके बाद भस्त्रिका प्राणायाम की भाँति तीव्र श्वसन द्वारा नासिका को स्वच्छ कीजिये। श्वास छोड़ने की गति अति तीव्र न हो, अन्यथा क्षति हो सकती है।

अब दाहिने नथुने में लोटे की टोंटी लगाइये। सिर को बायीं ओर झुकाइये।

जल का प्रवाह दाहिने नथुने से कीजिये जो बायें नथुने से बाहर आये।

ऊपर वर्णित नेति की विधि दुहराइये। पुनः क्रमशः बायें एवं दाहिने नथुनों से नेति क्रिया कीजिये।

नासिका को सुखाना– अब नासिका को निम्नलिखित विधि द्वारा पूर्णतः स्वच्छ एवं शुष्क कीजिये।

दोनों पैरों को समीप रखते हुए खड़े हो जाइये।

दोनों हाथ पीछे की ओर बाँधकर रखिये।

अब कमर से सामने की ओर झुकिये। सिर ऊपर उठा रहे।

करीब तीस सैकण्ड तक इस स्थिति में रहिये। इस क्रिया से नासिका का पानी बाहर आ जायेगा।

झुकी हुई स्थिति में ही नासिका से पाँच बार धौंकनी की तरह श्वसन क्रिया कीजिये।

पुनः सीधे खड़े हो जाइये। एक नथुने को दबाकर बंद कर लीजिये। दूसरे से तीस बार तीव्र गति से श्वसन क्रिया कीजिये। श्वसन पर दबाव डालिये ताकि नथुने से नमी बाहर आ जाये।

दूसरे नथुने से भी उपर्युक्त क्रिया कीजिये।

यही क्रिया दोनों नथुनों से एक साथ कीजिये।

इस सरल क्रिया के उपरान्त नासिका में कोई जल-कण नहीं रह जायेगा। यदि कुछ जल शेष रह जाये तो सम्पूर्ण जल के निष्कासन तक इस क्रिया को कीजिये।

सामान्य निर्देश– जिन व्यक्तियों की नासिका में रचनात्मक अवरोध है, वे इसका अभ्यास करने में समर्थ नहीं हो सकेंगे। प्रारम्भ में कठिनाई का

कारण यह होता है कि श्लेष्म झिल्ली पानी के साथ सम्पर्क करने में अभ्यस्त नहीं होती। अभ्यास के प्रारंभिक दिनों में आँखों में लालिमा भी आ सकती है, परन्तु कुछ दिनों बाद यह तकलीफ दूर हो जाती है।

समय – प्रतिदिन सुबह। जुकाम की हालत में दिन में दो बार भी कर सकते हैं।

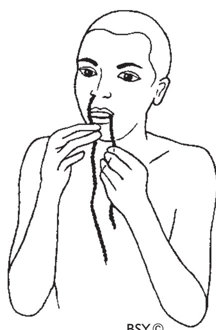
सावधानी – जल का प्रवाह सिर्फ नासिका से होना चाहिये। यदि गले या मुँह में जल का प्रवेश हो जाये तो समझिये कि सिर की स्थिति ठीक नहीं है। ऐसी हालत में सिर की स्थिति में इस तरह सुधार कीजिये कि पानी का बहाव नासिका से ही हो। यदि समस्या का निवारण न हो तो किसी योग-शिक्षक से सलाह लीजिये।

जल नेति के उपरान्त नासिका को पूर्णत: सुखा लीजिये अन्यथा उसमें उत्तेजना उत्पन्न हो जायेगी एवं जुकाम के कष्टप्रद लक्षण दिखने लगेंगे। जल नेति का उद्देश्य नासिका प्रदेश को स्वास्थ्य प्रदान करना है। अत: अधिक बलपूर्वक रेचक क्रिया द्वारा उससे चोट न पहुँचाइये।

सीमाएँ – नासिका में रक्तस्राव की दीर्घकालीन बीमारी की अवस्था में योग्य निर्देशक की सलाह के बिना नेति का अभ्यास मत कीजिये।

सूत्र नेति

आवश्यक सामग्री – सूत्र का अर्थ है, सूत्र या धागा। आजकल सूत्र के स्थान पर रबर की सूक्ष्म नलिका (कैथेटर) का प्रयोग किया जाने लगा है। किसी भी दवाई की दूकान से इसे प्राप्त किया जा सकता है।



विधि – रबर की नलिका को एक नासिका में डालकर मुख से बाहर निकालिये। अब नलिका के दोनों छोरों को पकड़कर आगे-पीछे कीजिये। यह क्रिया

30 से 50 बार कीजिये।
इस दौरान खुले हुए मुँह से श्वास लीजिये।
अब नलिका को बाहर निकालिये एवं दूसरी नासिका में डालकर क्रिया को दुहराइये।
इसका अभ्यास जलनेति के बाद करना चाहिये और पूर्ण लाभ प्राप्ति के लिये सूत्रनेति के बाद जलनेति को पुन: करना चाहिये।

सावधानी – नलिका को नासिका में धीरे-धीरे आगे-पीछे करना चाहिए। कुशल निर्देशन में अभ्यास कीजिए।

शंखप्रक्षालन

तैयारी – शंखप्रक्षालन के दिन चाय, कॉफी या भोजन न लें।
एक साफ बाल्टी या किसी भी साफ बर्तन में कुनकुना पानी भरिये। पानी का स्वाद नमकीन होने तक नमक मिलाइए। नमक की मात्रा न अधिक हो और न बहुत कम।
अभ्यास करने के लिए आरामदायक हल्के वस्त्र धारण कीजिए। तनाव रहित एवं सुखद वातावरण में अभ्यास कीजिए।
किसी प्रकार की घबराहट या मानसिक तनाव न रहे। अत: पाँच-दस व्यक्तियों के समूह में अभ्यास कीजिए ताकि सरलतापूर्वक एवं हल्के मन से क्रिया सम्पन्न की जा सके।

विधि – क्षमतानुसार शीघ्रता से दो गिलास नमकीन पानी पीजिए।
तत्पश्चात् निम्नलिखित पाँच आसनों का अभ्यास कीजिए – ताड़ासन, तिर्यक् ताड़ासन, कटि चक्रासन, तिर्यक् भुजंगासन एवं उदराकर्षण आसन।
उपर्युक्त आसनों का अभ्यास इस पुस्तक में वर्णित विधि के अनुसार ही करना चाहिए।
अन्न नलिका में जठर एवं गुदा द्वार के मध्य अनेक द्वार हैं जो अन्न के नियंत्रित प्रदेश को पाचन क्रिया के समय खोलते एवं बन्द करते हैं।
शंखप्रक्षालन क्रिया के समय उपरोक्त आसनों के अभ्यास से इनकी पेशियाँ शिथिल हो जाती हैं और नमकीन जल को भीतर प्रवेश का मार्ग मिल जाता है। शीघ्रता एवं सरलता से इस जल का प्रवाह गुदा द्वार की ओर होता है जहाँ से उसका निष्कासन हो जाता है।

पाँच आसनों के अभ्यास के पश्चात् पुनः दो गिलास पानी पीजिए।

पुनः आसनों की आठ-आठ आवृत्तियाँ कीजिए।

अब शौच के लिए जाइए। दस्त सरलता से हो तो ठीक है, अन्यथा किसी भी दशा में जोर न लगाइए। चिन्ता की कोई बात नहीं, अभी पर्याप्त समय शेष है।

एक मिनट या कुछ अधिक समय के बाद शौचालय से लौटकर पुनः दो गिलास पानी पीजिए।

अब उन्हीं पाँच आसनों की आठ-आठ आवृत्तियाँ कीजिए।

पुनः शौच के लिए जाइये। जोर मत लगाइये।

अब शौच से आने के बाद एक गिलास पानी पीकर आसनों की उतनी ही आवृत्तियाँ कीजिए। शौच के लिए जाइये। मल का निष्कासन अवश्य होगा।

शंखप्रक्षालन करने वाले अन्य व्यक्तियों से अपनी तुलना मत कीजिए। कुछ व्यक्तियों की मल-निष्कासन क्रिया जल्दी हो सकती है। हो सकता है कि कुछ व्यक्तियों को अपेक्षाकृत कुछ अधिक देर लगे या अधिक जल पीना पड़े तो किसी प्रकार की चिन्ता मत कीजिए।

सर्वप्रथम ठोस मल का निष्कासन होगा। उसके बाद उसमें द्रव की कुछ मात्रा मिश्रित रहेगी। पानी पीकर आसन करना एवं शौच जाना लगातार करते जाइये।

अंत में मल समाप्ति पर केवल साफ जल ही बाहर निकलेगा। इस अवस्था तक पहुँचने के लिए औसत 16 से 20 गिलास पानी पर्याप्त होता है। परन्तु किसी को कम या अधिक पानी की आवश्यकता पड़ सकती है।

अतिरिक्त अभ्यास– शंखप्रक्षालन में अन्न नलिका की जठर से गुदा द्वार तक की सफाई होती है। सभी पाचन प्रदेशों की पूर्ण सफाई के लिए शंखप्रक्षालन के बाद निम्नलिखित क्रियाएँ करनी चाहिए–

कुंजल क्रिया– शेष नमकीन जल के निष्कासन एवं जठर से मुँह तक की सफाई के लिये यह विधि है।

जल नेति– यह नासिका प्रदेश की सफाई की क्रिया है।

विश्राम– शंखप्रक्षालन के बाद 45 मिनट तक मौन धारण किये हुए लेटकर या बैठकर विश्राम करना अनिवार्य है, परन्तु ख्याल रखें कि निद्रा न आने पाये। इस अवधि में पाचन संस्थान को पूर्ण विश्राम की प्राप्ति होती है।

विशेष भोजन– शंखप्रक्षालन के 45 मिनट बाद चावल, मूँग की दाल तथा घी से तैयार की गई खिचड़ी ग्रहण कीजिये। यह विशेष भोजन पाचन प्रदेश को सरलता से क्रियाशील बनाता है एवं स्निग्धता प्रदान करता है।

यह स्मरण रखिये कि शंखप्रक्षालन क्रिया से केवल त्याज्य पदार्थों का निष्कासन नहीं हुआ है वरन् अन्न नलिका की प्राकृतिक, आवश्यक एवं रक्षा करने वाली तहों को भी हटा दिया गया है। इससे पाचन प्रदेश आवरण-रहित हो जाता है। अत: नवीन तहों के निर्माण तक घी अस्थायी रूप से रक्षक-कवच निर्मित करता है। अधिक समय तक आँतों की तत्त्व रहित अवस्था स्वाभाविक नहीं है। फलत: जहाँ घी उनकी दीवालों को आवरण प्रदान करता है, वहाँ चावल सरलतापूर्वक हजम होने वाले तत्त्व प्रदान करता है। दाल प्रोटीन की पर्याप्त मात्रा प्रदान करती है एवं शीघ्र हजम होने वाली है। चावल के कार्बोहाइड्रेट एवं घी से प्राप्त वसा के साथ संयुक्त होकर पूर्ण आहार की पूर्ति होती है।

संयत भोजन– कम-से-कम एक हफ्ते तक संयमित भोजन ग्रहण करना अनिवार्य है। यदि संभव हो तो कुछ और अधिक अवधि तक यही आहार लीजिये। रासायनिक विधि से तैयार भोजन सामग्री, मांसाहार एवं अम्लीय भोजन तथा दूध, मट्‌ठा, अंगूर, संतरा, इत्यादि एक हफ्ते तक वर्जित हैं। चाय, काफी, शराब, सिगरेट, पान, सुपारी इत्यादि का सेवन भी एक हफ्ते तक नहीं करना चाहिये।

सरल, सुपाच्य, शुद्ध एवं प्राकृतिक आहार ग्रहण करने की सलाह दी जाती है। यह सदैव याद रखिये कि सम्पूर्ण पाचन प्रणाली की सफाई की गई है इसलिए देर से पचने वाले पदार्थ ग्रहण करने से बुखार, अपचन, अजीर्ण आदि के रूप में प्रतिक्रिया हो सकती है।

क्रम– हर छह महीनों के उपरान्त या विशेष परिस्थितियों में यह क्रिया करनी चाहिये।

लघु शंखप्रक्षालन

विधि– लघु शंखप्रक्षालन का अभ्यास प्रात:काल बिना कुछ खाये-पीये करना चाहिये।

शंखप्रक्षालन शीर्षक में वर्णित विधि से नमकीन जल तैयार कीजिये।

दो गिलास नमकीन पानी पीकर शंखप्रक्षालन के उन्हीं पाँच आसनों की आठ-आठ आवृत्तियाँ कीजिये।

पुन: दो गिलास पानी पीकर आसनों का अभ्यास कीजिये।

अब फिर दो गिलास पानी पीकर आसनों की पुनरावृत्ति कीजिये।

इस प्रकार कुल छह गिलास पानी पीकर शौच के लिये जाइये।

सामान्यत: सम्पूर्ण मल का निष्कासन होगा एवं मूत्र की मात्रा में वृद्धि होगी।

समय एवं क्रम – प्रतिदिन प्रात:काल बिना कुछ खाये-पीये उपचार के रूप में इसका अभ्यास एक निश्चित अवधि तक योग्य मार्गदर्शन में किया जा सकता है। अन्यथा सप्ताह में एक-दो दिन इसका अभ्यास पर्याप्त होगा।

सावधानी – इस क्रिया की समाप्ति के बाद कम-से-कम आधे घण्टे तक कुछ नहीं खाना चाहिये।

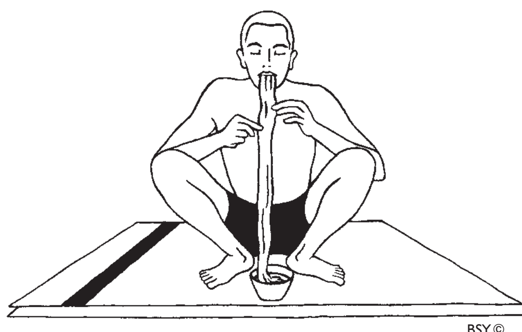
इस अभ्यास के लिये भोजन सम्बन्धी किसी प्रकार की पाबन्दियाँ नहीं हैं।

टिप्पणी – निर्देशक की सुविधा न होने पर या अन्य किसी कारण से शंखप्रक्षालन के अभ्यास में असमर्थ व्यक्तियों के लिये लघु शंखप्रक्षालन उत्तम है।

वस्त्रधौति

इस क्रिया में विशेष रूप से तैयार किये दो इंच चौड़े और कुछ फुट लम्बे सूती कपड़े द्वारा श्वास नलिका एवं जठर की सफाई की जाती है।

इसका अभ्यास खाली पेट में करना चाहिये। इसका निर्देशन योग्य निर्देशक से ही प्राप्त करना चाहिये।



विधि – कपड़े के एक सिरे को मुँह में डालकर अन्न की भाँति लार मिश्रित करते हुए धीरे-धीरे एवं सावधानीपूर्वक निगलते जाइये। प्रत्येक मिनट बाद

थोड़ा-थोड़ा पानी पीना चाहिये ताकि कपड़ा नीचे जाने में आसानी रहे।
कपड़े को कुछ समय तक पेट में रहने दें परन्तु बीस मिनट से ज्यादा नहीं।
इस समय कपड़े के दूसरे सिरे को हाथ से पकड़े रहना चाहिये।
उच्च अभ्यासी इस अवस्था में नौलि या अग्निसार क्रिया कर सकते हैं।
इसके बाद आराम से धीरे-धीरे कपड़े को बाहर निकाल दीजिये।

अभ्यास का समय– सामान्य स्वास्थ्य की अवस्था में हफ्ते में एक बार खाली पेट में इसका अभ्यास करना चाहिये।

दमा या सर्दी-जुकाम की हालत में वस्त्र धौति का अभ्यास प्रतिदिन किया जा सकता है।

19

सूर्य नमस्कार

यह अभ्यास सम्पूर्ण शरीर को पुनर्जीवित करता है, निद्रा एवं आलस्य को दूर भगाता है और योगाभ्यास कार्यक्रम को आरम्भ करने की भूमिका तैयार करता है। शरीर के सभी जोड़ों एवं मांसपेशियों को ढीला करने तथा श्वसन एवं परिसंचरण-तन्त्रों को सक्रिय करने एवं आंतरिक अंगों की मालिश करने का यह प्रभावशाली अभ्यास है। यह इड़ा और पिंगला नाड़ियों में प्राण के प्रवाह को भी संतुलित करता है तथा ध्यान की तैयारी में मदद करता है।

सूर्य नमस्कार पाँच सरल आकृतियों का समूह है जिन्हें क्रम से करने पर अधिकतम लाभ उठाया जा सकता है।

शारीरिक भंगिमाएँ– सूर्य नमस्कार बारह भंगिमाओं का समूह है जिनमें से प्रत्येक का राशिचक्र के बारह चिह्नों से सम्बन्ध है।

श्वसन– प्रत्येक स्थिति श्वास लेने, रोकने अथवा छोड़ने के साथ की जाती है। इस प्रकार प्रत्येक स्थिति श्वास के साथ समन्वित है। श्वास को झटके से या अप्राकृतिक ढंग से नहीं लेना चाहिये।

मंत्र– सूर्य नमस्कार की बारह स्थितियों में से प्रत्येक के साथ एक मंत्र जुड़ा है। मंत्र अक्षर-समूहों, शब्द-समूहों या वाक्यों से निर्मित संरचना है। सूर्य नमस्कार के अभ्यास से अधिकतम लाभ उठाने के लिये मंत्र का मानसिक अथवा मौखिक रूप से उच्चारण करना चाहिये। मंत्र के दुहराने का शरीर और मन पर शक्तिशाली एवं बेधक प्रभाव पड़ता है।

सजगता– अन्य यौगिक क्रियाओं के समान ही सूर्य नमस्कार में भी सजगता का बड़ा महत्त्व है। बिना सजगता के आप इसके बहुत से लाभों से वंचित रह जायेंगे।

शिथिलीकरण – वास्तव में शिथिलीकरण सूर्य नमस्कार का अंग नहीं है, पर अभ्यास के बाद शरीर को सामान्य हालत में लाने के लिये शिथिलीकरण आवश्यक है। श्वास की सजगता के साथ शवासन उत्तम है।

सीखने का क्रम

सबसे पहले बारहों स्थितियों को सीखकर लगभग एक हफ्ते तक उन्हें सही रूप में करना चाहिये। जब शारीरिक स्थितियाँ ठीक होने लगें तो उनके साथ श्वास को समन्वित करना चाहिए। इस समय शारीरिक स्थितियों एवं श्वास दोनों पर सजगता होनी चाहिए। अंत में प्रत्येक स्थिति के साथ मंत्रों को समन्वित करना चाहिए।

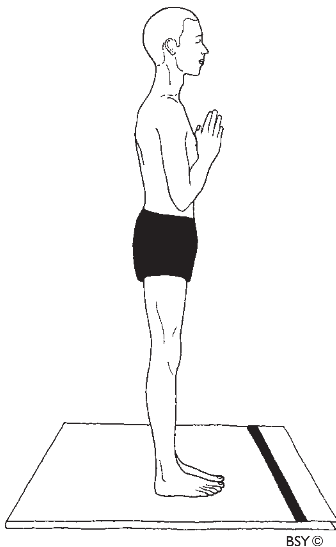
एक पूर्ण आवृत्ति

एक पूर्ण आवृत्ति में चौबीस स्थितियाँ होती हैं। हमने बारह स्थितियों का वर्णन किया है। इन्हीं बारह स्थितियों को पुनः दुहराना है, परन्तु इस बार चौथी एवं नवीं स्थिति में पैरों की स्थिति विपरीत होगी।

क्रम एवं आवृत्ति

पहले सूर्य नमस्कार को श्वास के साथ सही रूप से करना चाहिये। नियमित अभ्यास से कुछ समय बाद आप इसे शीघ्रता से कर सकते हैं। परन्तु ख्याल रखें कि श्वास जल्दी-जल्दी न लें एवं मंत्र सही रूप से उच्चारित किये जायें।

आवृत्तियों की संख्या व्यक्तिगत स्वास्थ्य एवं समय पर निर्भर करती है। सूर्य नमस्कार का अभ्यास थकावट की स्थिति में नहीं करना चाहिए। नये अभ्यासियों को प्रारम्भ में दो आवृत्तियों से शुरू करना चाहिए एवं प्रति दूसरे दिन एक-एक आवृत्ति बढ़ाते जाना चाहिए। अच्छे स्वास्थ्य वाला व्यक्ति बारह आवृत्तियाँ प्रतिदिन कर सकता है। परन्तु इससे अधिक करना वास्तव में व्यक्तिगत क्षमता पर निर्भर है।

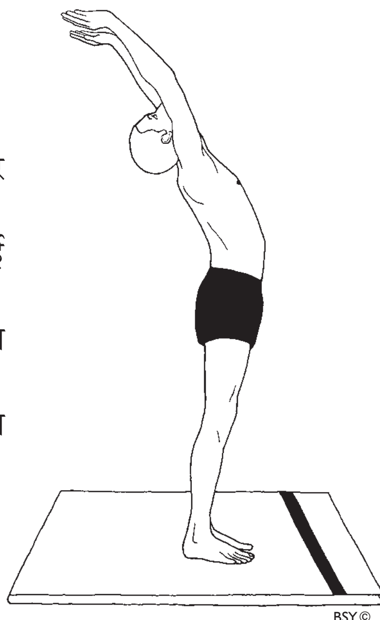


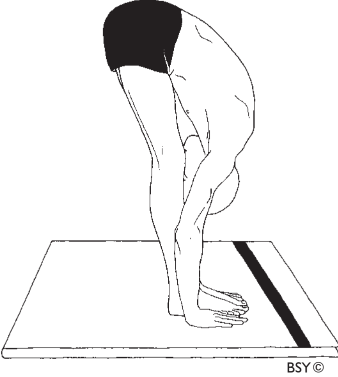
स्थिति 1: प्रणामासन

प्रार्थना की मुद्रा में पंजों को मिलाकर सीधे खड़े हो जाइये।
पूरे शरीर को शिथिल छोड़ दीजिये।
श्वास – सामान्य
एकाग्रता – अनाहत चक्र पर
मंत्र – ॐ मित्राय नमः।

स्थिति 2: हस्त उत्तानासन

दोनों हाथों को सिर के ऊपर उठाइये।
दोनों भुजाओं में कंधों की चौड़ाई के बराबर फासला रखिये।
सिर और ऊपरी धड़ को थोड़ा पीछे की ओर झुकाइये।
श्वास – भुजाओं को उठाते समय श्वास लीजिये।
एकाग्रता – विशुद्धि चक्र पर।
मंत्र – ॐ रवये नमः।





स्थिति 3: पाद हस्तासन

सामने की ओर झुकते जाइये जब तक कि उँगलियाँ या हाथ जमीन को पंजों के सामने या बगल में स्पर्श न करें।

मस्तक को घुटनों से स्पर्श कराने की कोशिश कीजिये पर जोर मत लगाइये।

पैरों को सीधा रखिये।

श्वास – सामने की ओर झुकते हुये श्वास छोड़िये।

अधिकतम श्वास बाहर निकालने के लिये अंतिम स्थिति में आमाशय को सिकोड़िये।

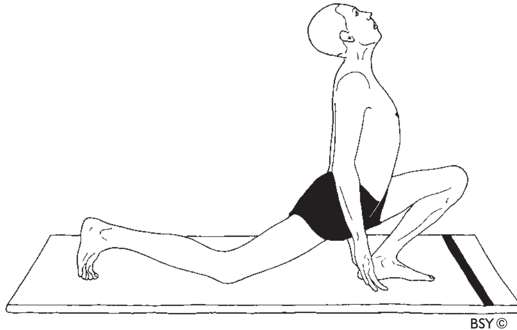
एकाग्रता – स्वाधिष्ठान चक्र पर।

मंत्र – ॐ सूर्याय नमः

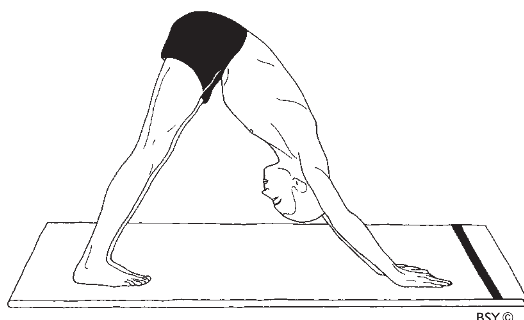
स्थिति 4: अश्व संचालनासन

जितना संभव हो सके बायें पैर को पीछे फैलाइये।

इसी के साथ दाहिने पैर को मोड़िये लेकिन पंजा अपने स्थान पर रहे। भुजाएँ अपने स्थान पर सीधी रहें।



इस बार शरीर का भार दोनों हाथों, बायें पैर के पंजो, बायें घुटने व दाहिने पैर की उँगलियों पर रहेगा।
अंतिम स्थिति में सिर को उठाइये, कमर को धनुषाकार बनाइये और दृष्टि ऊपर की ओर रखिये।
श्वास – बायें पैर को पीछे ले जाते समय श्वास लीजिये।
एकाग्रता – आज्ञाचक्र पर।
मंत्र – ॐ भानवे नम:

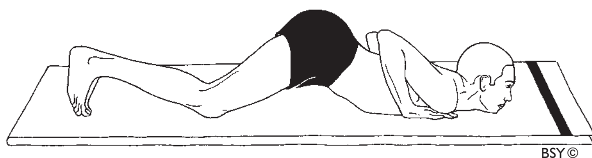


स्थिति 5: पर्वतासन

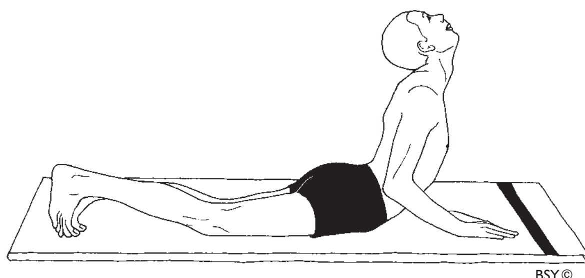
दाहिने पंजे को सीधा करके बायें पंजे के पास रखिये।
नितम्बों को ऊपर उठाइये और सिर को भुजाओं के बीच में लाइये।
अंतिम स्थिति में पैर और भुजाएँ सीधी रहें। इस स्थिति में एड़ियों को जमीन से स्पर्श कराने का प्रयास कीजिये।
श्वास – दाहिने पैर को सीधा करते हुए एवं धड़ को उठाते समय श्वास छोड़िये।
एकाग्रता – विशुद्धि चक्र पर।
मंत्र – ॐ खगाय नम:।

स्थिति 6: अष्टांग नमस्कार

शरीर को भूमि पर इस प्रकार झुकाइये कि अंतिम स्थिति में दोनों पैरों की अंगुलियाँ, छाती, दोनों हाथ तथा ठुड्डी जमीन से स्पर्श करें।



नितम्ब व आमाशय जमीन से थोड़ा ऊपर उठे रहें।
श्वास – स्थिति 5 में छोड़ी गई श्वास को बाहर ही रोक रखिये।
एकाग्रता – मणिपुर चक्र पर।
मंत्र – ॐ पूष्णे नमः ।



स्थिति 7: पूर्ण भुजंगासन

हाथों को सीधा करते हुए शरीर को कमर से ऊपर उठाइये।
सिर को पीछे की ओर झुकाइये।
श्वास – कमर को धनुषाकार बनाकर उठते हुए श्वास लीजिये।
एकाग्रता – स्वाधिष्ठान चक्र पर।
मंत्र – ॐ हिरण्यगर्भाय नमः।

स्थिति 8: पर्वतासन

यह स्थिति 5 की पुनरावृत्ति है।
श्वास – नितम्बों को ऊपर उठाते समय श्वास बाहर छोड़िए।
एकाग्रता – विशुद्धि चक्र पर।
मंत्र – ॐ मरीचये नमः।

स्थिति 9: अश्व संचालासन

यह स्थिति 4 की पुनरावृत्ति है।
श्वास – इस स्थिति में श्वास लीजिये।
एकाग्रता – आज्ञा चक्र पर।
मंत्र – ॐ आदित्याय नमः।

स्थिति 10: पादहस्तासन

यह स्थिति 3 की पुनरावृत्ति है।
श्वास – इस स्थिति में श्वास बाहर छोड़िये।
एकाग्रता – स्वाधिष्ठान चक्र पर।
मंत्र – ॐ सवित्रे नमः

स्थिति 11: हस्त उत्तानासन

यह स्थिति 2 की पुनरावृत्ति है।
श्वास – श्वास अन्दर लीजिये।
एकाग्रता – विशुद्धि चक्र पर।
मंत्र – ॐ अर्काय नमः।

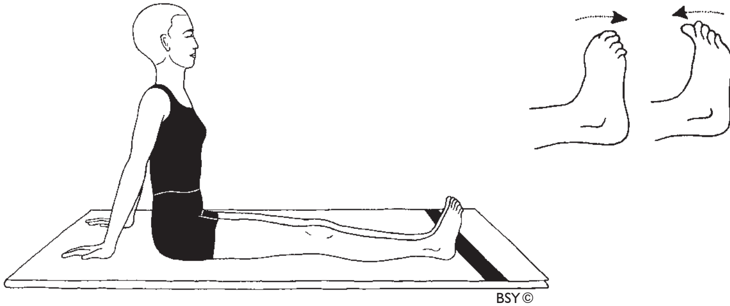
स्थिति 12: प्रणामासन

यह अन्तिम स्थिति प्रथम स्थिति की पुनरावृत्ति है।
श्वास – इस स्थिति में श्वास बाहर छोड़िये।
एकाग्रता – अनाहत चक्र पर।
मंत्र – ॐ भास्कराय नमः।

20

पवनमुक्तासन

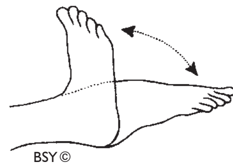
इन आसनों का समूह उन लोगों के लिए है जिन्होंने पहले कभी योग अभ्यास नहीं किया और जिनका शरीर अन्य आसनों के लिए कड़ा और बेलोच है। इन सभी अभ्यासों को पूर्ण शारीरिक एवं मानसिक सजगता के साथ करना चाहिये। ये आसन शरीर से अम्ल और वात निकालने में बड़े उपयोगी हैं।



अभ्यास 1: पैरों की अंगुलियाँ मोड़ना

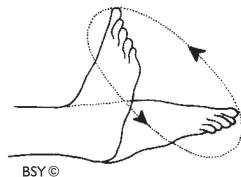
अपने पैरों को शरीर के सामने फैलाकर बैठ जाइये।
यह मूल स्थिति है।
अपने हाथों को जमीन पर रखकर उनके सहारे थोड़ा पीछे की ओर झुक जाइये।
हाथ सीधे रखिये। कोहनी को मोड़िये नहीं।
पैरो की अंगुलियों के प्रति सजग रहिये।
पंजों को कड़ा रखते हुए दोनों पैरों की अंगुलियों को आगे-पीछे मोड़िये।
इस क्रिया की दस आवृत्तियाँ कीजिये

अभ्यास 2: टखना मोड़ना



अभ्यास 1 की मूल स्थिति में रहिये।
दोनों पैरों को टखने के जोड़ों से झुकाते हुए यथासंभव आगे-पीछे मोड़िए।
इसे दस बार कीजिये।

अभ्यास 3: टखने को वृत्ताकार मोड़ना



अभ्यास 1 की स्थिति में रहिये।
पैरों को सीधा रखते हुए उनके बीच में कुछ फासला छोड़ दीजिये।
एड़ी को जमीन पर रखते हुये दाहिने पैर को टखने से दाहिनी ओर दस बार वृत्ताकार घुमाइये।
अब दाहिने पैर को बायीं ओर दस बार घुमाइये।
इसी अभ्यास को बायें पैर से कीजिये।
अब इसे दोनों पैरों को एक साथ मिलाकर कीजिये।

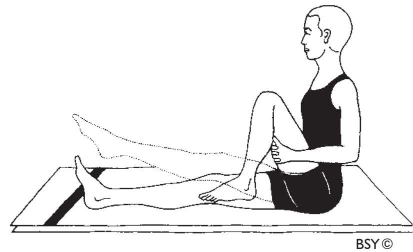


अभ्यास 4: टखने को उसकी धुरी पर घुमाना

मूल स्थिति में आ जाइये।
दाहिना टखना बायीं जाँघ पर रखिये।
बायें हाथ की सहायता से दाहिने पंजे को पहले दस बार दाहिनी ओर एवं फिर दस बार बायीं ओर वृत्ताकार घुमाइये।
यही क्रिया बायें पंजे से कीजिये।

अभ्यास 5: घुटने को मोड़ना

मूल स्थिति में आ जाइये।
दाहिने पैर को घुटने से मोड़िये और दोनों हाथों को दाहिनी जाँघ के नीचे बाँध लीजिये।
हाथों को दाहिनी जाँघ के नीचे रखते हुये एड़ी या पंजों को बिना जमीन से स्पर्श किए हुये दाहिने पैर को सीधा कीजिये।



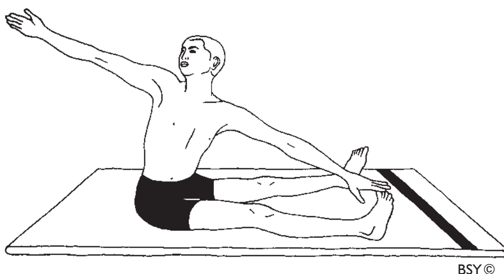
फिर दाहिने पैर को घुटने से मोड़ते हुए दाहिने नितम्ब के पास लाइये।
इसे दस बार दुहराइये। इसी प्रकार बायें पैर से कीजिये।

अभ्यास 5(प्रकारान्तर): घुटने को उसकी धुरी पर वृत्ताकार घुमाना

मूल स्थिति में आ जाइये।
दाहिने पैर को फैलाने के बदले जाँघ को धड़ के पास पकड़कर रखिये।
और पैर के निचले हिस्से को घुटने से वृत्ताकार घुमाइये।
दस बार दाहिनी एवं दस बार बायीं ओर घुमाइये।
यह क्रिया बायें पैर से कीजिए।

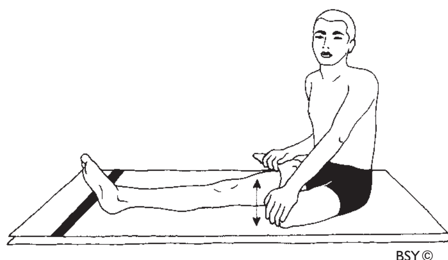
अभ्यास 6: मेरुदण्ड को दाहिने-बायें मोड़ना

मूल स्थिति में आइए।
पैरों को आराम के साथ एक-दूसरे से जितनी दूर फैला सकें, फैला लीजिए।
हाथों को सीधा रखते हुए दाहिने हाथ को बायें पैर के अँगूठे के पास लाइए और बायीं भुजा को पीछे की ओर फैला दीजिए।
दोनों भुजायें एक सीध में रहें।
अपने सिर को पीछे मोड़ते हुए बायें हाथ की ओर दृष्टि रखिये।

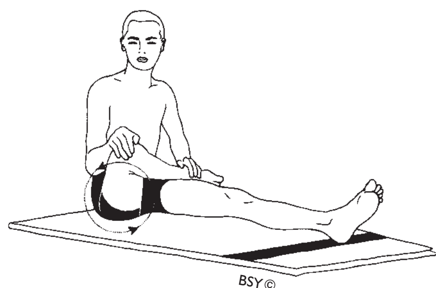


तत्पश्चात् धड़ को विपरीत दिशा में मोड़ते हुए बायें हाथ को दाहिने अँगूठे के पास ले आइये और दाहिने भुजा पीछे की ओर फैला दीजिए।
यह एक आवृति हुई।
दस से बीस आवृत्तियाँ कीजिये।
प्रारम्भ में अभ्यास धीरे-धीरे कीजिये। क्रमश: गति बढ़ाते जाइये।
यदि अभ्यासी चाहे तो पैरों को बिना मोड़े हुए अपेक्षाकृत दूर-दूर फैला कर अभ्यास को दुहरा सकता है।

अभ्यास 7: अर्द्ध तितली



बायें पैर को मोड़कर, उसके तलवे को दाहिनी जाँघ पर रख दीजिये। दाहिने हाथ से दाहिने पैर का घुटना पकड़िये और बायाँ हाथ मुड़े हुए बायें घुटने पर रख दीजिये।
मुड़े हुये पैर की मांसपेशियों को यथासंभव ढीला छोड़ते हुए बायें हाथ की मदद से ऊपर-नीचे हिलाइये।
इस अभ्यास को तब तक कीजिये तब तक कि बायाँ घुटना जमीन को पूर्णत: या अंशत: छू न जाये।
इसी प्रकार दाहिने पैर से कीजिये।
कुछ दिनों या कुछ हफ्तों के अभ्यास के बाद घुटने बिना किसी प्रयास या असुविधा के जमीन पर टिकने लगेंगे।

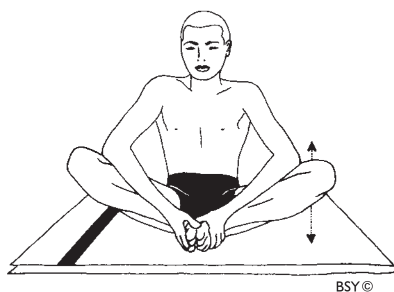


अभ्यास 8: घुटने को घुमाना

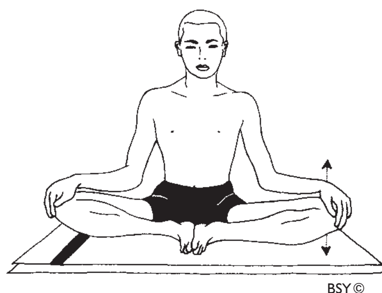
अभ्यास 7 की स्थिति में रहिये, परन्तु दाहिने हाथ से बायें पैर की अंगुलियों को पकड़कर बायें पैर को वृत्ताकार रूप में घुमाइये।
धीरे-धीरे वृत्त को बड़ा करते जाइये।

इस प्रकार बायें घुटने को दस बार दाहिनी ओर और दस बार बायीं ओर घुमाइये।
यही क्रिया दाहिने घुटने से कीजिये।

अभ्यास 9/1: पूर्ण तितली



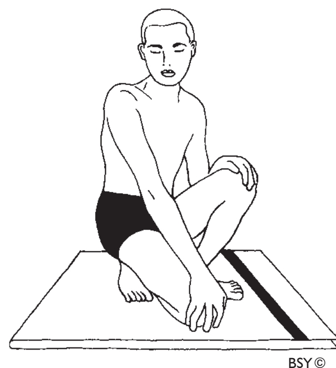
बैठने की स्थिति में पैरों के तलवे एक साथ सटा दीजिये।
यथासंभव एड़ियों को शरीर के पास लाइये।
हाथों की अंगुलियों को एक-दूसरे में फँसाकर पंजों के नीचे रखिये।
अब कोहनियों की सहायता से घुटनों को धीरे-धीरे जमीन की ओर दबाइये।
घुटनों के नीचे दबाते समय शरीर को आगे की ओर झुकाइये और मस्तक से भूमि का स्पर्श कीजिये। प्रारम्भ में यह कठिन हो सकता है।



अभ्यास 9/2: पूर्ण तितली

दोनों पैरों के तलवों को सटाए हुए ही हाथों को घुटनों पर रखिये।
भुजाओं का दबाव डालते हुए घुटनों को जमीन की तरफ ढकेलिये और उन्हें उछलकर ऊपर आने दीजिये।
बीस या अधिक बार दुहराइये।

अभ्यास 10: कौआ चाल

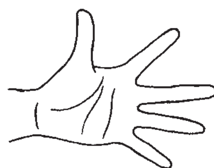


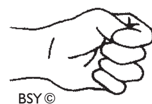
जमीन पर पंजों के बल बैठ जाइये।
हथेलियों को घुटनों पर जमा दीजिये और उसी स्थिति में चलना शुरू कीजिये।
आप अंगुलियों अथवा पंजों के बल चल सकते हैं फिर भी जिसमें अधिक कठिनाई लगे, उसे ही कीजिये।
बिना किसी तनाव के थोड़े समय के लिये इस अभ्यास को कीजिये।

अभ्यास 10: (प्रकारान्तर)

प्रत्येक कदम पर घुटनों से जमीन को छूते हुये कौआ चाल का अभ्यास कीजिये।
नोट – नितम्बों के जोड़ों को ढीला करने के लिये अभ्यास 9 एवं 10 अत्यंत उपयोगी हैं। ध्यान के आसन जैसे पद्मासन इत्यादि की तैयारी के लिये उपरोक्त अभ्यासों को करना चाहिये।

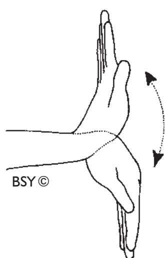
अभ्यास 11: मुट्ठी बाँधना





प्रारंभिक स्थिति में आ जाइये।
दोनों भुजाओं को शरीर के सामने फैला दीजिये ताकि वे कन्धों की सीध में रहें।
दोनों हाथों की अंगुलियों को फैलाकर उनमें तनाव उत्पन्न कीजिये।
अंगूठों को अंदर रखते हुये मुट्ठियों को कसकर बंद कीजिये।
अंगुलियों को फिर फैलाइये और तनाव उत्पन्न कीजिये।
इसे दस बार दुहराइये।

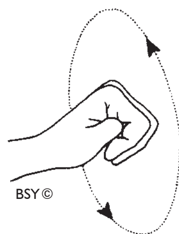
अभ्यास 12: कलाई मोड़ना



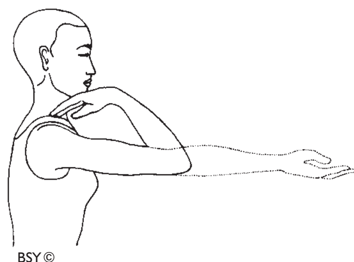
अभ्यास 11 की स्थिति में रहिये।
हाथों को कलाई से ऊपर की ओर इस प्रकार मोड़िये कि आप अपनी हथेलियों को दीवार से सटा रहे हैं।
अब ऊपर की गई उँगलियों को कलाई से नीचे जमीन की ओर लीजिये।
इसे दस बार दुहराइये।

अभ्यास 13: कलाई के जोड़ को घुमाना

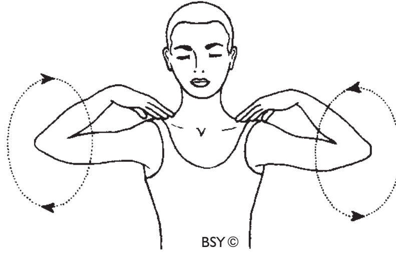
अभ्यास 12 की ही स्थिति में रहिये लेकिन इस बार केवल दाहिना हाथ फैलाकर रखिये।
दाहिने हाथ की मुट्ठी कसकर बाँधिये और उसे कलाई से दस बार दाहिनी ओर तथा दस बार बायीं ओर वृत्ताकार घुमाइये।
इसी क्रिया को बायें हाथ से दुहराइये।
दोनों मुट्ठियों को एक साथ दस बार दाहिनी ओर और दस बार बायीं ओर घुमाइये।



अभ्यास 14: कोहनी मोड़ना



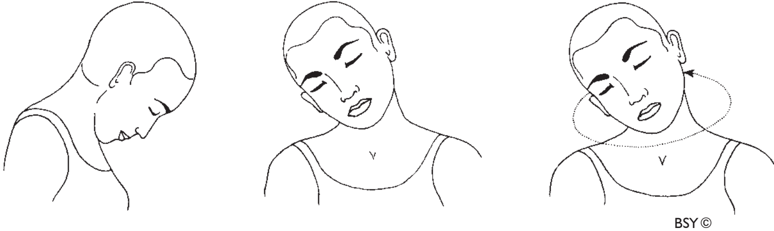
अभ्यास 13 की ही स्थिति में रहिये,लेकिन फैले हुए हाथों की मुट्ठियाँ खुली रहेंगी। साथ ही हथेलियाँ ऊपर की ओर रहें।
भुजाओं को कोहनियों से मोड़ते हुए अंगुलियों से कन्धों का स्पर्श कीजिये।
भुजाओं को फिर सीधा कर लीजिये।
इसे दस बार दुहराइये।
प्रकारान्तर – भुजाओं को सामने के बजाए बाजू में फैलाकर इसी अभ्यास को दस बार दुहराइये।



अभ्यास 15: कन्धा घुमाना

अभ्यास 14 प्रकारान्तर की स्थिति में रहिये। अंगुलियों को कन्धों पर रखे हुए कन्धों को जोड़ों से दस बार दाहिनी ओर और दस बार बायीं ओर वृत्ताकार घुमाइये।

कोहनियों से बनने वाले वृत्त को यथासंभव बड़ा बनाइए और ऐसा करते समय कोहनियों को छाती के सामने एक-दूसरे से स्पर्श करने दें।



अभ्यास 16/1: गर्दन झुकाना

बैठने की स्थिति में पैर सीधे रखते हुए दोनों हाथों को जाँघों के दोनों ओर जमीन पर रख लीजिये।

धीरे-धीरे सिर को आगे-पीछे ले जाइये।

इसे दस बार दुहराइये।

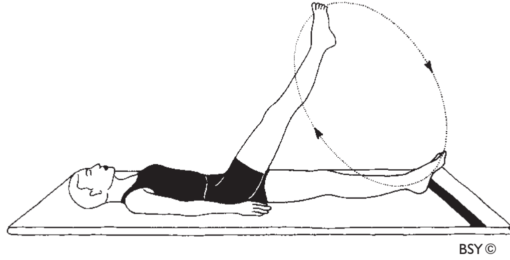
अभ्यास 16/2: गर्दन मोड़ना

मुँह को सामने की ओर रखते हुए सिर को धीरे-धीरे दाहिने-बायें झुकाइए।

इसे दस बार दुहराइए।

अभ्यास 16/3: गर्दन घुमाना

बिना किसी तनाव के यथासंभव बड़े घेरे में सिर को धीरे-धीरे घुमाइए। दस बार दाहिनी ओर से एवं दस बार बायीं ओर घुमाइए।



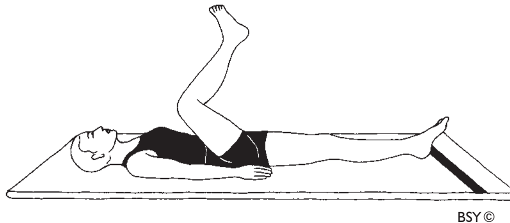
अभ्यास 17: पैर घुमाना

पैरों को सीधे रखते हुए हाथों को शरीर के दोनों ओर रखकर पीठ के बल लेट जाइये। दाहिने पैर को सीधे रखते हुए जमीन से ऊपर उठाइये और दाहिनी ओर घुमाइये। इसे दस बार घुमाइये।

अब दस बार बायीं ओर घुमाइये।

इसी क्रिया को बायें पैर से कीजिये।

कुछ क्षणों के विश्राम के पश्चात् दोनों पैरों को सीधा रखते हुए एक साथ उठाइये तथा उन्हें दस बार दाहिनी ओर तथा दस बार बायीं ओर घुमाइये। इस दौरान सिर सहित सम्पूर्ण शरीर विश्राम की हालत में रहे।



अभ्यास 18/1: साइकिल चलाना

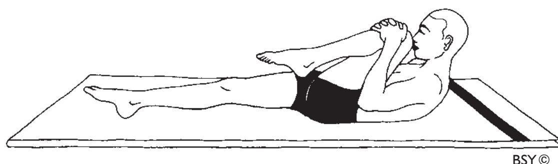
जमीन पर चित लेट जाइये।

दाहिना पैर उठाइये और उसे साइकिल चलाने के समान घुमाइये।

अब यही क्रिया बायें पैर से कीजिये।

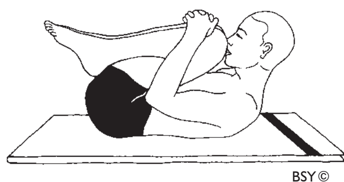
अभ्यास 18/2: साइकिल चलाना

पूर्ववत् साइकिल चलाने के अन्दाज में दोनों पैरों को एक ही समय में घुमाइये। दस बार दाहिनी ओर एवं दस बार बायीं ओर घुमाइये।



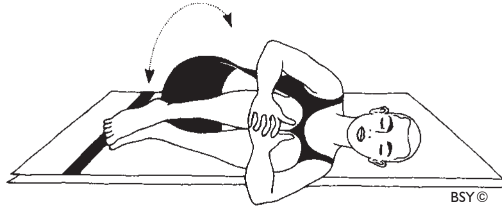
अभ्यास 19/1: पैर मोड़ना

पीठ के बल लेट जाइये।
बायाँ पैर मोड़िये और जाँघ को सीने के पास लाइये।
दोनों हाथों की अंगुलियों को फँसाइये और बायें घुटने पर रखिये।
गहरी श्वास लीजिये और फेफड़ों को खाली करते हुए श्वास छोड़िये।
श्वास को बाहर ही रोकते हुए सिर एवं सीने के ऊपरी भाग को उठाते हुए नाक से घुटने को छूने की कोशिश कीजिये।
श्वास लेते हुए धीरे धीरे जमीन पर लेटने की स्थिति में आ जाइये।
पूर्ण शरीर को ढीला छोड़ दीजिए।
इस क्रिया को दस बार दुहराइये।
यह क्रिया दूसरे पैर से कीजिये।



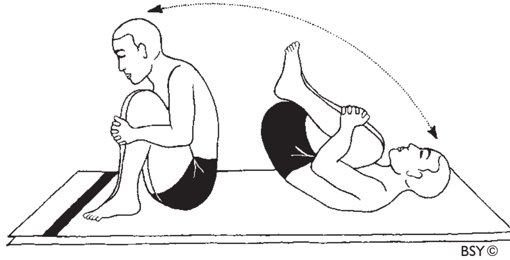
अभ्यास 19/2: पैर मोड़ना

दोनों पैरों को सीने पर मोड़ लीजिये और भुजाओं को घुटने के चारों ओर लपेट लीजिये।
शेष क्रिया अभ्यास 19/1 के अनुसार ही कीजिये। ध्यान रहे कि श्वास का क्रम शरीर की गति के साथ जुड़ा रहे।



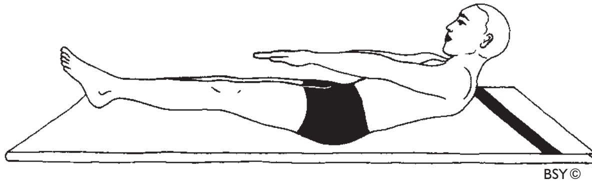
अभ्यास 20/1: हिलना-डुलना और लुढ़कना

पीठ के बल सपाट लेट जाइये।
दोनों पैरों को सीने तक मोड़ लीजिये।
हाथों की उँगलियों को एक-दूसरे में फँसाकर सिर के पीछे रखिये।
कोहनियों को जमीन पर रखे हुये शरीर को बारी-बारी से दोनों ओर लुढ़काइये।
ऐसा दस बार कीजिये।



अभ्यास 20/2: हिलना-डुलना और लुढ़कना

पूर्व स्थिति में ही रहिये लेकिन भुजाओं को घुटनों के चारों ओर लपेट दीजिये।
पूरे शरीर को मेरुदण्ड (रीढ़ की हड्डी) पर कसकर आगे-पीछे लुढ़काइये और उकड़ूँ बैठने की स्थिति में आने का प्रयत्न कीजिये।
इस अभ्यास के लिये खास तौर से कई पर्तों में मोड़ा गया कम्बल आवश्यक है ताकि मेरुदण्ड को किसी प्रकार की क्षति न पहुँचे।
ध्यान रखिये कि कहीं सिर जोर से जमीन से न टकरा जाये।



अभ्यास 21: नौकासन

पीठ के बल सपाट लेट जाइये। भुजाएँ शरीर के दोनों ओर रहें तथा हथेलियाँ नीचे जमीन की ओर रहें।
श्वास लीजिये और पैरों, भुजाओं, सिर तथा धड़ को जमीन से ऊपर उठाइये। सिर जमीन से एक फुट से ऊपर नहीं उठना चाहिये।
भुजाओं को भी इसी ऊँचाई तक उठाना चाहिये ताकि वे पैरों की अंगुलियों की सीध में रहें।
शरीर की उठी हुई स्थिति में मुट्ठियों को भींचिये और पूरे शरीर में तनाव उत्पन्न कीजिये।
श्वास छोड़ते हुए शरीर को एकदम जमीन पर गिरा दीजिये (शरीर को बिना किसी प्रकार चोट पहुँचाये) और तुरन्त पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिये।
शरीर को उठाते समय श्वास लीजिये।
शरीर की उठी हुई स्थिति में अन्तर्कुम्भक (फेफड़ों में श्वास रोकना) करें।
शरीर को नीचे ले जाते समय श्वास छोड़िये।
शरीर की उठी हुई स्थिति को तब तक बनाये रखना चाहिये जब तक कि आमाशय की मांसपेशियों में कंपन का अनुभव न होने लगे।
नोट – हाइपरटेंशन और उच्च-रक्तचाप से पीड़ित लोगों को 17 से 21 तक के अभ्यासों को नहीं करना चाहिये।

21

मुख्य आसन

संस्कृत शब्द आसन का अर्थ स्थिर या आरामदायक स्थिति से है। आसन शरीर, मन और चेतना पर प्रभाव डालने और उनके बीच सामंजस्य स्थापित करने की क्षमता रखते हैं, अत: इन्हें मात्र शारीरिक व्यायाम के रूप में नहीं देखना चाहिये। आसन करते समय अभ्यासी को शारीरिक हरकत, श्वास एवं मांसपेशियों की शिथिलता के प्रति सजग रहना चाहिये।

आसनों का उद्देश्य शारीरिक रोगों और असन्तुलन को दूर करके हमें उच्च चेतना की ओर अग्रसर करना है। आसन शारीरिक स्वास्थ्य की प्राप्ति के साथ ही मानसिक परिवर्तन लाकर हमें आशावादी बनाते हैं।

आसन शरीर के जोड़ों को ढीला करते हैं, मांसपेशियों को लचीला बनाते हैं, शरीर की विभिन्न प्रणालियों से विषाक्त तत्त्वों का निष्कासन करते हैं, स्नायु-संस्थान को सुव्यवस्थित करते हैं तथा आंतरिक अंगों की मालिश करते हैं। आसनों के अभ्यास से शरीर की विभिन्न ग्रंथियों में स्थिरता आती है एवं हार्मोन में संतुलन आता है। चूँकि शरीर में श्वसन, पाचन एवं मल-मूत्र निष्कासन प्रणालियाँ आपस में सम्बन्धित हैं, इसलिए आसन द्वारा उनमें समन्वय आता है। इस प्रकार आसन शरीर में प्राणों के प्रवाह को सन्तुलित करके शरीर और मन में सन्तुलन लाते हैं।

सुझाव एवं सावधानियाँ

स्थान– अभ्यास करने का स्थान साफ, शान्त एवं हवादार हो। वहाँ कोई दुर्गंध अथवा दूषित वायु इत्यादि न हो। उस स्थान के आस-पास कोई वस्तु जैसे–टेबुल-कुर्सी इत्यादि न हो। फर्श पर कम्बल या दरी बिछाकर

अभ्यास करना चाहिये, न तो कोई स्पंज का गद्दा उपयोग में लायें और न ही केवल फर्श पर अभ्यास करें। प्रतिदिन एक ही स्थान पर अभ्यास करना चाहिये।

वस्त्र– आसन करते समय ढीले, हल्के और आरामदायक वस्त्र धारण करना सुविधाजनक रहता है। अभ्यास करने के पूर्व चश्मा, कलाई घड़ी, आभूषण इत्यादि उतार देने चाहिये।

समय– योगाभ्यास के पूर्व आमाशय और मूत्राशय खाली रहना चाहिए। वैसे तो भोजन के तीन-चार घण्टों के बाद किसी भी समय आसनों का अभ्यास किया जा सकता है, परन्तु सभी यौगिक अभ्यासों को करने का सबसे उत्तम समय जलपान से पूर्व प्रात: चार से छ: बजे के बीच में है। संस्कृत में इस समय को 'ब्रह्ममुहूर्त' कहा गया है। यह समय यौगिक अभ्यासों के लिये अत्यन्त उपयुक्त है, इस समय ग्रहणशीलता अधिक रहती है। इस समय वातावरण शुद्ध, शान्त एवं सौर किरणों से परिपूर्ण रहता है। सम्भवत: अभ्यासी को इस समय मांसपेशियाँ कुछ कड़ी लगें, परन्तु उपर्युक्त लाभों को देखते हुए यह समय सर्वोत्तम है।

अभ्यास की अवधि– उपलब्ध समय के अनुसार निर्धारित करनी चाहिये। अत्यधिक उतावले होकर प्रारम्भ में बहुत अधिक अभ्यास न करने लगें, बल्कि उतना ही करें जितना आप आराम के साथ नियमित रूप से कर सकें। प्रतिदिन पन्द्रह मिनट का अभ्यास अच्छा है न कि आप एक दिन एक घण्टा अभ्यास करें, तीन दिन कुछ न करें और फिर एक घण्टा अभ्यास करें।

क्रम– सर्वप्रथम आसन, फिर प्राणायाम और अंत में ध्यान का अभ्यास कीजिये। विशेष आसन क्रम के निर्धारण में अनुभवी योग शिक्षक की सलाह लीजिये।

सीमाएँ– यदि आप सर्दी-जुकाम, अतिसार या इसी प्रकार के किसी रोग से पीड़ित हों तो आसनों का अभ्यास मत कीजिये, क्योंकि इस समय शरीर की शक्ति रोग के प्रतिकार के लिए विशेष स्थानों में लगी रहती है।

धीमा एवं नियंत्रित अभ्यास– आसनों के द्वारा शरीर में सन्तुलन लाने और उनसे अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए आसनों को धीमे और नियंत्रित ढंग से श्वास के साथ समन्वित करके किया जाना चाहिये। तीव्र गति से एवं अचानक किये जाने वाले अभ्यासों से तनाव बढ़ता है और शरीर की अधिक शक्ति व्यय होती है। आसनों का उद्देश्य शरीर की शक्ति को

सुरक्षित रखना एवं मांसपेशियों के नियंत्रण को विकसित करना है और ये दोनों धीमे एवं सजग अभ्यास के द्वारा प्राप्त होते हैं। इससे मांसपेशियों को अधिक-से-अधिक शिथिलता प्राप्त होती है। इसके साथ ही श्वसन सम्बन्धी निर्देशों का भी पालन करना चाहिये तथा अभ्यास के दौरान नाक से श्वास लेना चाहिये।

अन्तिम स्थिति – आसनों की अन्तिम स्थिति अभ्यास का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग है। इससे अत्यन्त गहरे एवं लाभदायक परिवर्तन होते हैं।

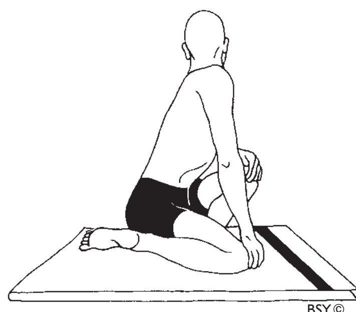
शिथिलीकरण – आसनों को कभी भी बहुत ज्यादा दबाव या तनाव से मत कीजिये। यद्यपि प्रारम्भिक अभ्यासी अपनी मांसपेशियों को शुरू में अवश्य ही कड़ा पायेंगे, परन्तु नियमित अभ्यास से वे लचीली हो जायेंगी। आसन करते समय मांसपेशियों को शिथिल करना अत्यंत आवश्यक है। यदि मांसपेशियाँ कसी हुई हैं तो उन्हें फैलाने में बाधा होगी।

आसनों के बीच में शिथिलीकरण का अभ्यास उतना ही आवश्यक है जितना कि स्वयं आसन। जब कोई व्यक्ति पूर्णत: विश्राम करता है तो शरीर के अंग और मांसपेशियाँ अपनी पहले की स्थिति में वापस लौटती हैं और उनमें स्वच्छ रक्त का संचार होता है। इस समय रक्त परिभ्रमण एवं श्वसन संस्थान सामान्य स्थिति में आते हैं। वैसे तो सभी आसन शिथिलीकरण के अभ्यास हैं, किन्तु आसनों के बीच में शवासन का अभ्यास उत्तम है। शवासन शिथिलीकरण का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। इससे मेरुदण्ड को पूर्ण विश्राम मिलता है और सोने के दौरान अधिकतम लाभ उठाया जा सकता है।

सजगता – आसनों को पूर्ण सजगता के साथ सीखना चाहिये। आसन की अन्तिम स्थिति में आप श्वास, मंत्र या किसी विशेष अंग के प्रति सजग रह सकते हैं। सजगता से ही शरीर में प्राणशक्ति का प्रवाह सहज होता है।

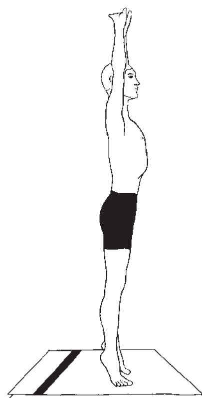
आसनों में अद्‌भुत उपचारात्मक शक्ति होती है। ये विभिन्न स्तरों पर कार्य करते हैं। आसनों के नियमित अभ्यास एवं अनुभव से ही इसे जाना जा सकता है एवं रोगों को दूर किया जा सकता है। अनुभवी योग शिक्षक के मार्गदर्शन में योगाभ्यास करने से दमा एवं मधुमेह जैसे रोगों पर सहज ही विजय पाई जा सकती है।

उदराकर्षण आसन

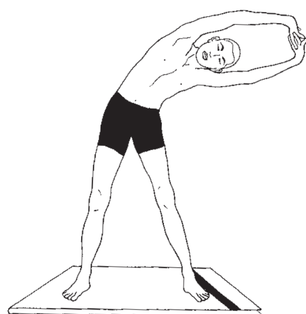


हाथों को घुटनों पर रखते हुए पंजों के बल उकड़ूँ बैठ जाइये। दाहिने घुटने को जमीन पर झुकाइये और धड़ को यथासंभव बायीं ओर घुमाइये। हथेलियों को घुटनों पर रखे-रखे पीछे की ओर देखिये।

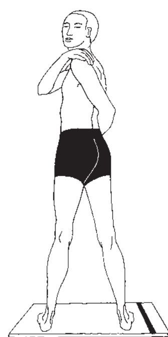
आरम्भिक स्थिति में लौट आइये। इस क्रिया को धड़ को विपरीत दिशा में मोड़कर कीजिए। शरीर को प्रत्येक दिशा में दस बार मोड़िये।



ताड़ासन



तिर्यक् ताड़ासन



कटि चक्रासन

ताड़ासन

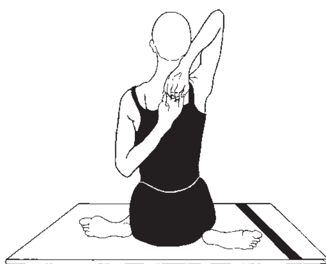
अपने पैरों के बीच चार-छः इंच का फासला छोड़कर खड़े हो जाइये।
भुजाओं को सिर के ऊपर उठाइये। हथेलियाँ ऊपर की ओर रहें।
अब अपने हाथों की ओर देखिये।
एड़ियों को ऊपर उठाइये और अनुभव कीजिये कि जैसे आपको ऊपर की ओर खींचा जा रहा है।
शरीर को पूरी तरह खींचिये।
धीरे-धीरे एड़ियों को जमीन पर वापस ले आइये।

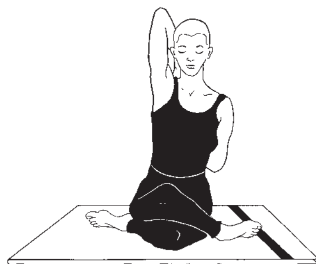
तिर्यक् ताड़ासन

ताड़ासन की स्थिति में खड़े हो जाइये। पैरों की उँगलियों पर उठकर शरीर को पहले दाहिनी एवं फिर बायीं ओर झुकाइये। मोड़ने की गति कमर से होनी चाहिये। प्रत्येक तरफ दस-बार झुकिये।
फिर एड़ी व तलवों पर खड़े हो जाइये। पैरों की उँगलियों पर सन्तुलन बनाए रखना कुछ लोगों को कठिन लगेगा। उन्हें तब तक पंजों के बल खड़े होकर ही इस आसन का अभ्यास करना चाहिये जब तक कि सन्तुलन का अभ्यास न हो जाये।

कटिचक्रासन

पैरों के मध्य दो-तीन फीट का फासला छोड़कर खड़े हो जाइये।
कंधों की ऊँचाई पर भुजाओं को बगल में फैला दीजिये।
शरीर के ऊपरी भाग को दाहनी ओर मोड़िये। इस स्थिति में बायाँ हाथ दाहिने कंधे पर रहेगा और दाहिना हाथ पीछे की तरफ घूमता हुआ धड़ से लिपट जायेगा।
इसी क्रिया को दूसरी ओर से दोहराइये।

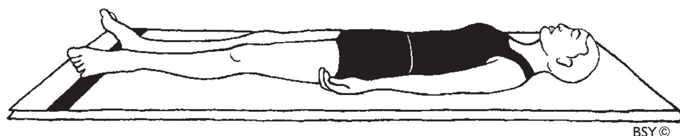




गोमुखासन

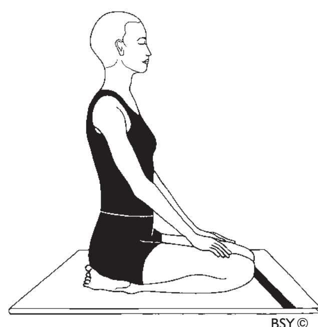
बैठने की स्थिति में रहिये।
बायें पैर की एड़ी को दाहिने नितम्ब के समीप रखिये।
दाहिने पैर को बायें पैर के ऊपर से मोड़कर बायीं जाँघ के बगल में जमीन पर रखिये। दोनों घुटने एक-दूसरे के ऊपर रहें।
बायें हाथ को पीठ के पीछे ले जाइये और दाहिने हाथ को दाहिने कंधे के ऊपर से पीछे ले जाइये। हाथों को परस्पर बाँध लीजिये। धड़ सीधा रहे,

सिर पीछे रहे। अब आँखें बंद कीजिये। इसी को दूसरे कंधे पर से दोहराइये। आपकी एकाग्रता श्वास पर रहेगी।



शवासन

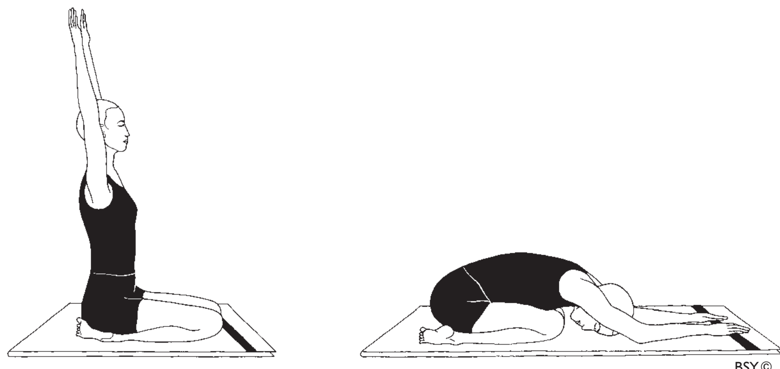
पीठ के बल लेट जाइये। भुजाएँ शरीर के बगल में रहें। हथेलियाँ ऊपर की तरफ खुली रहें। पैरों को आराम की स्थिति में थोड़ी दूर-दूर कर लें।
आँखें बंद कीजिये एवं पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिये।
शरीर का कोई भी भाग मत हिलाइये। श्वास को सहज होने दीजिये।
मस्तिष्क को श्वास-प्रश्वास के प्रति जागरूक होने दीजिये।
श्वास-प्रश्वास की गिनती कीजिये–1 अन्दर, 1 बाहर, 2 अन्दर, 2 बाहर इसी तरह गिनते जाइये। कुछ मिनटों तक इसी प्रकार गिनते रहिये। यदि मन इधर-उधर भटके तो उसे वापस गिनती में लगाइये।
यदि आप कुछ मिनटों तक अपनी श्वास के प्रति जागरूक रह सकें तो निश्चित ही आपका मन और शरीर शिथिल हो जायेगा।
श्वास सहज, स्वाभाविक एवं लयपूर्ण हो।



वज्रासन

घुटनों के बल खड़े हो जाइये। पंजों को पीछे फैलाकर एक पैर के अँगूठे को दूसरे पैर के अँगूठे पर रख दीजिये।

आपके घुटने पास-पास एवं एड़ियाँ अलग-अलग रहनी चाहिये।
नितम्बों को पंजों के बीच में रखिये। एड़ियाँ कूल्हों की तरफ रहेंगी। हथेलियाँ नीचे की ओर रखते हुए हाथों को घुटनों पर रखिये।

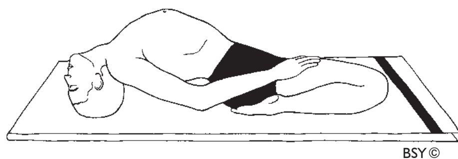


शशांकासन

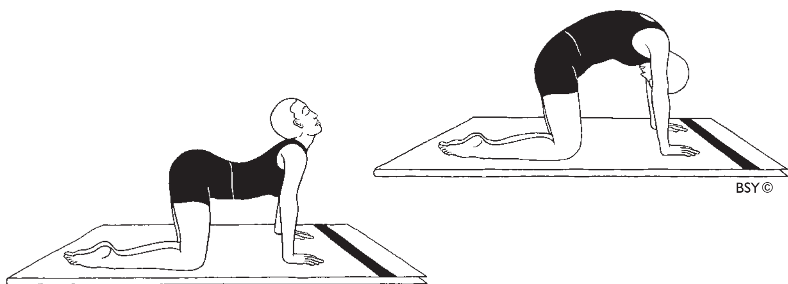
हाथों को घुटनों पर रखते हुए वज्रासन में बैठ जाइये।
श्वास लेते हुए हाथों को सिर के ऊपर उठाइये।
हाथों को धड़ की सीध में रखते हुए एवं श्वास छोड़ते हुए धड़ को सामने की ओर मस्तक के जमीन से छूने तक झुकाइये। अभ्यास की अंतिम स्थिति में हाथों और मस्तक को जमीन पर आराम से होना चाहिये। अंतिम स्थिति में कुछ क्षणों के लिए श्वास बाहर ही रोक कर रखिये। अब श्वास लेते हुए हाथों और धड़ को एक सीध से ऊपर की ओर ले आइये।
श्वास छोड़ते हुए धीरे-धीरे प्रारंभिक स्थिति में जाइये।
श्वास धीमी एवं शरीर की गति के अनुसार होनी चाहिये।
यदि अंतिम स्थिति में देर तक रुका जाता है तो श्वास धीमी एवं सामान्य होनी चाहिए।

सुप्त वज्रासन

वज्रासन में बैठ जाइये।
भुजाओं और कोहनियों के सहारे पीछे की तरफ झुकते जाइये जब तक कि सिर का ऊपरी भाग जमीन से न लग जाये।

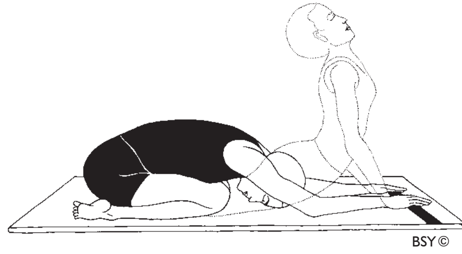


कमर पूर्ण रूप से धनुषाकार रहे।
हाथों को जाँघों पर रख लीजिये। ध्यान रखिये कि घुटने जमीन पर सटे हुए रहें।
आँखें बंद करके पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिये।
श्वास धीमी एवं गहरी हो।



मार्जारि आसन

वज्रासन में बैठ जाइये।
नितम्बों को ऊपर उठाइये तथा घुटनों के बल खड़े हो जाइये।
हाथों को सामने जमीन पर इस प्रकार सजा दीजिये कि वे ठीक कंधों के नीचे सीधे रहें।
रीढ़ की हड्डी को नीचे की तरफ झुकाते हुए सिर को ऊपर उठाइये।
भुजाओं को लम्बरूप में सीधा रखिये।
सिर को नीचे लाते हुए रीढ़ धनुषाकार रूप में ऊपर ले जाइये।
पुन: अपने मेरुदण्ड को झुकाइए और अपने सिर को ऊपर उठाइए।
रीढ़ नीचे झुकाते समय श्वास लीजिये।
रीढ़ ऊपर की तरफ धनुषाकार बनाते समय श्वास छोड़िये।

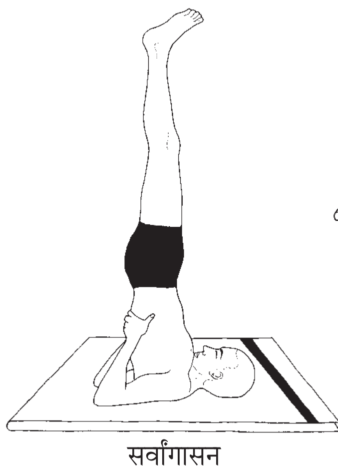


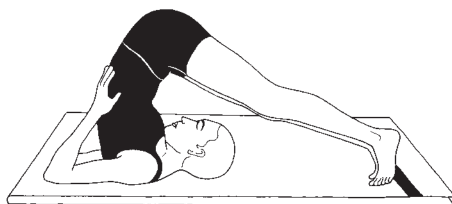
शशांक-भुजंगासन

मार्जारि आसन में बैठिये। हाथों को एक दूसरे से लगभग अठारह इंच दूर रखिये।
अपने नितम्बों को शशांकासन में लाइये।
हाथों को बिना हटाए छाती से जमीन का स्पर्श करते हुए उसे आगे की ओर तब तक ले जाइये जब तक कि वह हाथों की सीध में न आ जाये।
हाथों को सीधा करते हुए तथा आमाशय को जमीन से लगाते हुए छाती को आगे व ऊपर की ओर कीजिये।
इस स्थिति में पीठ को धनुषाकार बनाते हुए सिर को भुंजगासन की अंतिम स्थिति के समान पीछे की ओर झुकाना चाहिये।
अब धीरे से शशांकासन की स्थिति में आइये तथा इसके बाद मार्जारि आसन में लौट जाइये।
एक बार पुन: शशांकासन में तथा भुजंगासन में आगे आइये।
मार्जारि आसन में सामान्य श्वास लीजिये।
भुजंगासन में सामने जाते हुए श्वास लीजिये।
शशांकासन में लौटते समय श्वास छोड़िये।

सर्वांगासन

पीठ के बल सीधे लेट जाइये। पैर सटे रहें। दोनों भुजाएँ जमीन पर बगल में हों तथा हथेलियाँ सीधी हों।
हाथों का सहारा देकर दोनों पैरों को धीरे-धीरे ऊपर उठाइये।
हाथों को कोहनियों से मोड़िये तथा हथेलियों से दबाव डालकर पीठ को सीधा कीजिये।

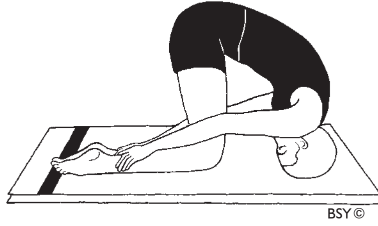

सर्वांगासन


हलासन

धड़ एवं पैर ग्रीवा से समकोण बनाते हुए सीधे रहें। छाती का स्पर्श ठुड्डी से होना चाहिये।
आसन करते समय एवं वापस लौटते समय श्वास अंदर रोकिये।
शरीर की उठी हुई स्थिति में श्वास सामान्य रहेगी।

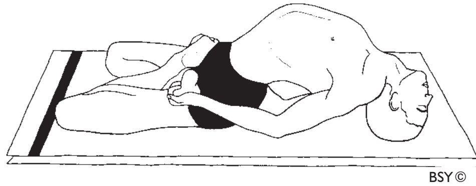
हलासन

पीठ के बल लेट जाइये। हाथ बगल में तथा हथेलियाँ ऊपर रहें।
पैरों को सीधे रखते हुए धीरे-धीरे कमर की ओर उठाइये। पैरों को उठाते समय हाथों पर बल न डालकर उदर की माँसपेशियों पर जोर दीजिये। उसी समय धड़ को मोड़िये। पहले नितम्बों को झुकाइये तथा उसके बाद पैरों को सिर के पीछे ले जाकर अँगूठों को जमीन पर रखिये।
पैरों को उसी प्रकार रखते हुए हाथों को कमर पर रखिये।
पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिये।
अंतिम स्थिति में कुछ समय के लिए आराम के साथ रुकिये।
आसन की पूर्वावस्था में एवं वापस लौटते समय श्वास अंदर रोकिये।
अंतिम स्थिति में धीमी एवं गहरी श्वास लीजिये।
धीरे-धीरे प्रारम्भिक स्थिति में वापस आइये।



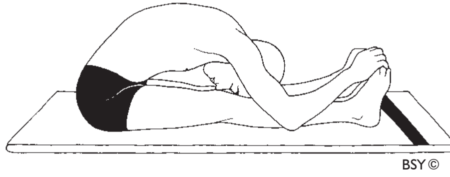
प्रणामासन

वज्रासन में बैठ जाइये। रीढ़ सीधी रहे एवं हाथ घुटनों पर।
सामने की ओर झुकिये और अपने सिर के ऊपरी भाग को जमीन पर रखिये।
दमा के रोगियों को हाथों को पिंडलियों पर रखने के बदले सर के पीछे झूले की आकृति में रखना चाहिये।
नितम्बों को ऊपर उठाइये ताकि सिर पर भार आये।
वज्रासन की स्थिति में तथा उठते समय श्वास लीजिये तथा झुकते समय श्वास छोड़िये। प्रणाम की स्थिति में श्वास सामान्य रहेगी।



मत्स्यासन

पद्मासन में बैठिये या पैरों को सामने फैलाकर बैठिये।
भुजाओं एवं कोहनियों का सहारा लेते हुए तब तक पीछे की ओर झुकिये जब तक कि सिर का ऊपरी हिस्सा जमीन न छूने लगे।
पैरों के अँगूठों को पकड़िये। कोहनियाँ जमीन से सटी रहें।
यदि पैर फैले हुए हों तो हाथों को नितम्बों पर या शरीर के बगल में रखें।
पीठ को यथासंभव धनुषाकार बनाइये। अंतिम स्थिति में धीमी एवं गहरी श्वास लीजिये।



पश्चिमोत्तानासन

हथेलियों को जाँघों पर रखते हुए पैरों को सामने की ओर फैलाकर बैठ जाइये। पूरे शरीर को शिथिल कीजिये, विशेषकर पीठ की मांसपेशियों को। शरीर को धीरे-धीरे आगे की ओर झुकाइये। दोनों हाथों से पैरों के अँगूठों को पकड़ने का प्रयत्न कीजिये। यदि यह संभव न हो तो टखनों को पकड़िये। पीठ एवं पैरों की मांसपेशियों को सजगतापूर्वक शिथिल कीजिये।

पैरों को सीधे रखते हुए तथा केवल भुजाओं का उपयोग करते हुए धड़ को बिना किसी तनाव के पैरों की ओर नीचे झुकाइये।

माथे से घुटनों का स्पर्श करने का प्रयत्न कीजिये।

नये अभ्यासी प्रारंभ में केवल उतना ही झुकें जितना वे आराम से झुक सकते हैं। किसी भी हालत में शरीर पर जोर मत डालिये।

अंतिम स्थिति में जितनी देर आराम से रह सकें, रहिये। तत्पश्चात् शरीर को ढीला करते हुए पहले की स्थिति में आ जाइये।

अभ्यास के दौरान घुटने नहीं मोड़िये।

आगे झुकते समय श्वास बाहर छोड़िये। अंतिम स्थिति में धीमी एवं गहरी श्वास लीजिये। पूर्व स्थिति में लौटते समय श्वास अंदर लीजिये।

भुजंगासन

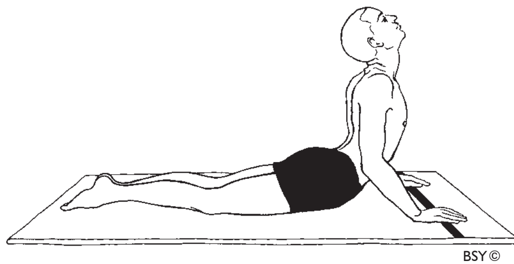
पेट के बल लेट जाइये तथा पैरों को सीधा व लम्बा फैला दीजिये।

हथेलियों को कंधों के नीचे जमीन पर रखिये।

माथे को जमीन से छूने दीजिये।

पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिये।

धीरे-धीरे सिर एवं कंधों को जमीन से ऊपर उठाइये तथा सिर को जितना पीछे की ओर ले जा सकें, ले जाइये।



अभ्यासियों को बिना हाथों की सहायता से कंधों को केवल पीठ के सहारे ऊपर उठाने का प्रयत्न करना चाहिये।

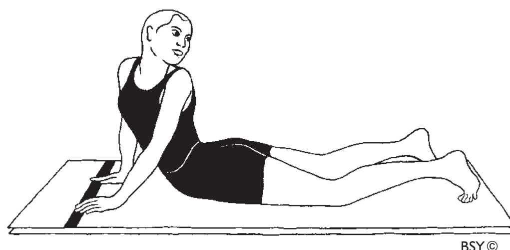
अब हाथों को काम में लाइये और धीरे-धीरे पूरी पीठ को ऊपर तथा पीछे की ओर झुकाते हुए तब तक गोलाकार करते जाइये जब तक कि हाथ पूर्ण रूप से सीधे न हो जायें।

इस बात का ध्यान रहे कि पीठ पर अधिक तनाव या अनावश्यक खिंचाव न पड़ने पाये।

शरीर को नाभि से ऊपर तक उठाना चाहिये।

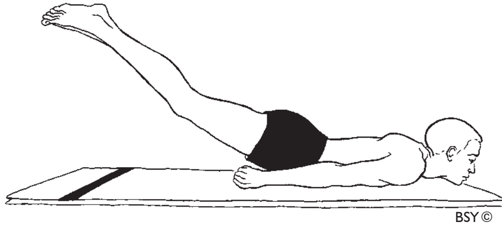
शरीर को जमीन से ऊपर उठाते समय श्वास लीजिये।

अंतिम स्थिति में सामान्य श्वास लीजिये या यदि अंतिम स्थिति में कुछ ही समय के लिये रुकते हैं तो श्वास को अन्दर रोका जा सकता है।



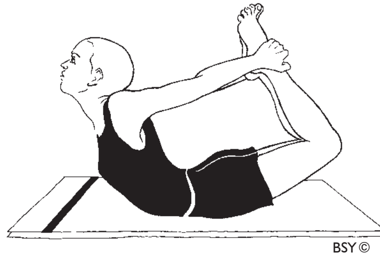
तिर्यक भुजंगासन

मूल भुजंगासन की अंतिम स्थिति में आइये। सिर एवं धड़ को एक दिशा में मोड़कर दूसरी दिशा में पैर की एड़ी को देखिये। इस क्रिया को विपरीत दिशा में दोहराइये।



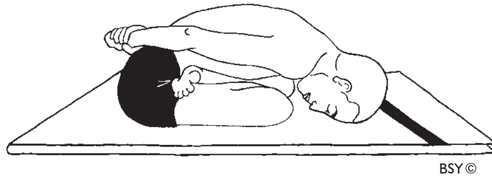
शलभासन

पेट के बल लेट जाइये। हाथ जाँघों के नीचे रहें तथा हथेलियाँ नीचे की ओर। पैरों को खींचिये व हाथों को तानिये। पैरों को बिना मोड़े पेट एवं पैरों को ऊपर उठाइये। इसी स्थिति में कुछ देर रुकिये तथा फिर पूर्व स्थिति में वापस लौटिये।
जमीन पर लेटी हुई स्थिति में श्वास अंदर लीजिये।
अंतिम स्थिति में श्वास को अंदर रोककर रखिये।
पूर्व स्थिति में श्वास बाहर छोड़िये।



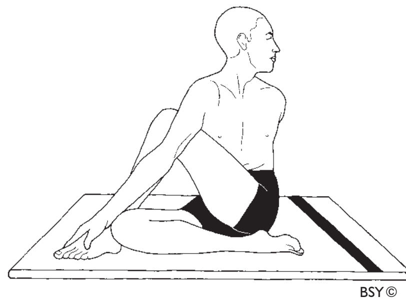
धनुरासन

पेट के बल सीधे लेट जाइये तथा पूर्ण रूप से श्वास लीजिये।
पैरों को मोड़िये और हाथों से दोनों पैरों के टखनों को पकड़िये।
पैरों की मांसपेशियों में तनाव उत्पन्न कीजिये एवं पीठ को धनुषाकार रूप में मोड़िये। उसी समय सिर, छाती एवं जाँघों को यथासंभव ऊपर उठाइये।
हाथों को सीधा रखिये।
अंतिम स्थिति में शरीर एक धनुष के समान होना चाहिये।



योग मुद्रा

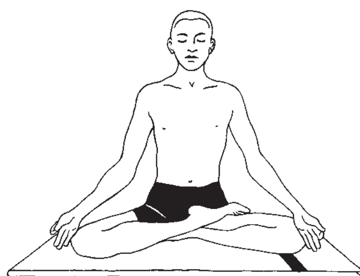
पद्मासन में बैठिये। आँखें बंद कीजिये।
पीठ के पीछे एक हाथ से दूसरे हाथ की कलाई पकड़िये।
पूरे शरीर को कुछ समय के लिए शिथिल छोड़ दीजिये।
धीरे-धीरे धड़ को सामने झुकाते हुए मस्तक जमीन पर रखिये और कुछ समय तक इस स्थिति में रुकिये।
धीरे-धीरे पूर्व स्थिति में आइये।
प्रारंभिक स्थिति में शरीर को शिथिल करते समय सामान्य श्वास लीजिये।
उसके बाद प्रारंभिक स्थिति में ही धीमी एवं गहरी श्वास लीजिये एवं सामने की ओर झुकते समय श्वास बाहर छोड़िये।
अंतिम स्थिति में लंबी एवं गहरी श्वास लीजिये।
पूर्व स्थिति में वापस लौटते समय श्वास अंदर लीजिये।



अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन

सामने की ओर पैर फैलाकर बैठ जाइये।
दाहिने पैर को जमीन पर सीधा एवं बायें घुटने के बाहर की ओर रखिये। बायें पैर को दाहिनी ओर मोड़िये ताकि एड़ी दाहिने नितम्ब के पास रहे। बायें हाथ

को दाहिने पैर के बाहर की ओर रखिये तथा बायें हाथ से दाहिने पैर के टखने को पकड़िये। दाहिना घुटना बायीं काँख के अधिक-से-अधिक समीप रहे। शरीर को दाहिनी ओर मोड़िये तथा दाहिना हाथ पीछे की ओर रखिये। गले एवं पीठ को आराम के साथ अधिकाधिक मोड़ने का प्रयास कीजिये। अंतिम स्थिति को एकाएक मत कीजिये।
आपकी एकाग्रता आज्ञा चक्र पर रहे। कमर को मोड़ते समय श्वास बाहर छोड़िये। अंतिम स्थिति में गहरी श्वास लीजिये। पूर्व स्थिति में लौटते समय श्वास अंदर लीजिये।


अर्द्ध पद्मासन



पद्मासन

अर्द्ध पद्मासन

पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइये।
दाहिने पैर को मोड़कर पंजे को बायीं जाँघ के नीचे रखिये।

पद्मासन

पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइये। एक पैर को मोड़िये और उसके पंजे को दूसरी जाँघ पर इस प्रकार रखिये कि एड़ी कूल्हे की हड्डी का स्पर्श करे एवं तलवा ऊपर की ओर रहे।
दूसरा पैर मोड़िये एवं उसका पंजा दूसरी जाँघ पर रखिये। पद्मासन के अभ्यास में रीढ़ की हड्डी बिल्कुल स्थिर और सीधी रहनी चाहिये, मानो जमीन में गाड़ दी गई हो।
नये अभ्यासियों को सुविधा के लिए नितम्बों के नीचे गद्दी या तकिया रख लेना चाहिये।

22

प्राणायाम

प्राण वह वायवीय शक्ति है जो समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। यह सजीव एवं निर्जीव सभी वस्तुओं में समाविष्ट है। यह वह जैव-शक्ति है जो मानवीय संस्थान को सक्रियता प्रदान करती है। श्वास द्वारा ली जाने वाली वायु से इसका घनिष्ठ संबंध है परन्तु ये दोनों एक ही वस्तु नहीं। प्राण वह माध्यम है जो शरीर और आत्मा को जोड़ता है। यह चेतना और पदार्थ के बीच भी सम्पर्क सूत्र स्थापित करता है। इस प्रकार प्राण वह मूल शक्ति है जो वायु तथा समस्त सृष्टि में व्याप्त है।

यम का अर्थ है–नियंत्रण। अत: प्राणायाम प्रक्रियाओं की वह शृंखला है जिसका उद्देश्य शरीर की प्राणशक्ति को उत्प्रेरणा देना, बढ़ाना तथा उसे विशेष अभिप्राय से विशेष क्षेत्रों में संचालित करना है। प्राणायाम का अंतिम उद्देश्य सम्पूर्ण शरीर में प्रवाहित 'प्राण' को नियंत्रित कर शरीर को स्वस्थ रखना है।

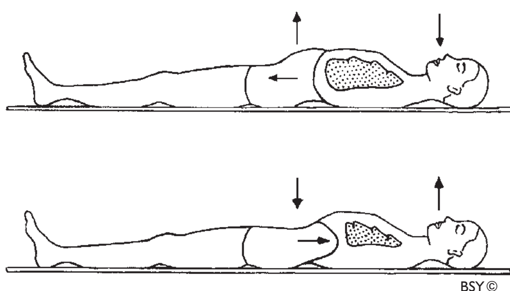
प्राणायाम शरीर एवं मन के बीच पुल का काम करता है। प्राणायाम का अभ्यास बड़े विश्राम एवं सजगता के साथ करना चाहिये तथा क्षमता से अधिक अभ्यास नहीं करना चाहिये। प्राणायाम विचार-प्रक्रिया की बाधाओं को दूर करके शान्ति लाता है। यह मन के अवरोधों को दूर करके हमें सूक्ष्म आत्मिक तरंगों से सम्बन्धित करता है। इसलिए प्राणायाम उन लोगों के लिए एक महत्त्वपूर्ण प्राणिक विधि है जो आध्यात्मिक मार्ग में आगे बढ़ना चाहते हैं।

प्राणायाम के अभ्यास के पूर्व निम्नलिखित निर्देशों को ध्यान में रखना चाहिये–अभ्यास करने के पूर्व जठर, आँतों व मूत्राशय को खाली रखना चाहिये।

भोजन के पश्चात् कम-से-कम चार घण्टे बाद ही प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिये।
आसनों के बाद एवं ध्यानाभ्यास के पूर्व प्राणायाम कीजिये।
प्राणायाम करते समय शरीर को अधिक-से-अधिक शिथिल कीजिये। मेरुदण्ड, गला एवं सिर सीधे तथा एक लाइन में हों।
प्राणायाम करते समय शरीर तनाव रहित होना चाहिये। सुखपूर्ण स्थिति तक ही कुम्भक लगाइये अन्यथा फेफड़ों पर कई प्रतिक्रियाएँ हो सकती हैं। हवादार, साफ एवं सुखद वातावरण में ही प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिये।
प्राणायाम की प्रारंभिक अवस्था में अपचन या मूत्र की मात्रा में कमी देखी जा सकती है। यदि कड़े दस्त हों तो मिर्च-मसाले त्याग दीजिये। यदि पतले दस्त होने लगें तो कुछ दिनों के लिए प्राणायाम का अभ्यास रोक दीजिये एवं केवल चावल तथा दही का सेवन कीजिये।
प्राणायाम के समय बाहरी बाधाओं, जैसे, मच्छर-मक्खियों से बचने के लिए शरीर को आरामदायक एवं हल्के वस्त्र से ढक लेना चाहिये।

यौगिक श्वसन

शवासन के समान ही शरीर को शिथिल करते हुए पीठ के बल लेट जाइये। क्रमशः उदर एवं छाती को प्रसारित करते हुए यथासंभव अधिकतम वायु फेफड़ों में भर लीजिये।



तत्पश्चात् पहले छाती और उसके बाद उदर को शिथिल करते हुए श्वास छोड़िये। अंत में उदर की मांसपेशियों पर बल डालिये ताकि फेफड़ों से अधिकतम वायु का निष्कासन हो सके। उदर से छाती एवं छाती से उदर तक गति एक तरंग

की भाँति मृदुल होनी चाहिये तथा सम्पूर्ण क्रिया बिना झटके के सम्पन्न हो। सभी पूरक एवं रेचक क्रियाएँ उपर्युक्त विधि के अनुसार ही होनी चाहिये। यहाँ यह बता देना उचित होगा कि प्रारम्भिक अभ्यासी इसको निम्नलिखित तीन भागों में सीखते हैं–

प्रथम– उदर श्वसन जिसमें नाभि पर हाथ रखकर फेफड़ों की गति का अनुभव किया जाता है।

द्वितीय– मध्य श्वसन जिसमें पसलियों पर हाथ रखकर फेफड़ों की गति का अनुभव किया जाता है।

तृतीय– यौगिक श्वसन जो श्वसन का पूर्ण रूप है।

जब इन तीनों विधियों में दक्षता प्राप्त हो जाये तो इन्हें संयुक्त किया जा सकता है। इस दशा में तीनों विधियों को मिलाकर अभ्यास करना चाहिये।



नाड़ीशोधन प्राणायाम

प्रारंभिक स्थिति– वज्रासन को छोड़कर अन्य किसी भी ध्यान के आसन में जैसे, पद्मासन, सिद्धासन या सुखासन में बैठिये। आसन ऐसा हो जिसमें कम-से-कम पन्द्रह मिनट तक सुविधापूर्वक बैठ सकें।

हाथों को घुटनों पर रख मेरुदण्ड, सिर, एवं मुँह को सीधा कीजिये।

सम्पूर्ण शरीर को शिथिल कीजिये।

अब आँखों को बंद कर मानसिक एवं शारीरिक रूप से प्राणायाम के लिए तैयार हो जाइये।

कुछ देर के लिए अपने शरीर एवं श्वास के प्रति सजग होइये।

अब अभ्यास प्रारम्भ कीजिये।

प्रथम अवस्था – पन्द्रह दिन तक प्रतिदिन के अभ्यास के लिए:
बायें हाथ को बायें घुटने पर ही रखे हुए दाहिने हाथ को मस्तक पर भ्रूमध्य के पास रखिये। दाहिने हाथ की अंगुलियों का उपयोग नासिका-छिद्रों में श्वास के नियंत्रण के लिए इस प्रकार अभ्यास कीजिये –
प्रथम एवं द्वितीय अंगुलियों (तर्जनी एवं मध्यमा) को भ्रूमध्य पर रखिये। उन्हें इस स्थिति में पूर्व अभ्यास के समान रखिये। अँगूठे को दाहिने नासिका-छिद्र के समीप रखिये ताकि आवश्यकतानुसार इसके द्वारा नासिका पर दाहिनी ओर दबाव डालकर श्वास को भीतर या बाहर रोका जा सके। इसी भाँति बायें नासिका छिद्र में श्वास के नियंत्रण के लिए तृतीय अंगुली (अनामिका) को उसके बाजू में रखिये।
अँगूठे से दाहिने नासिका छिद्र को बंद कीजिये।
बायें नासिका छिद्र से पूरक कीजिये। उसके बाद उसी से रेचक कीजिये।
पूरक एवं रेचक की गति सामान्य रहेगी।
पाँच बार पूरक एवं रेचक कीजिये।
दाहिने नासिका छिद्र से अँगूठे का दबाव हटाकर उसे खोल दीजिये।
बायें नासिका छिद्र को अनामिका अंगुली से बंद कीजिये।
दाहिने नासिका छिद्र से पूरक एवं रेचक क्रिया कीजिये।
प्रत्येक नासिका से पाँच बार की गई क्रिया को एक आवृत्ति कहते हैं।
उपर्युक्त क्रिया की पचीस आवृत्तियाँ कीजिये।
अभ्यासियों को बलपूर्वक श्वास-प्रश्वास क्रिया नहीं करनी चाहिये।
साथ ही श्वास लेते एवं छोड़ते समय किसी प्रकार की ध्वनि नहीं होनी चाहिये।
पाँच की गिनती तक श्वास रोकिये।

द्वितीय अवस्था – अँगूठे से दाहिने नासिका छिद्र को बंद कीजिये।
बायें नासिका छिद्र से पूरक कीजिये।
पूरक के अंत में अनामिका अंगुली से बायें नासिका छिद्र को बंद कीजिये।
दाहिने नासिका छिद्र को मुक्त कर उससे रेचक कीजिये।
अब दाहिने नासिका छिद्र से पूरक कीजिये।
पूरक के अंत में उसे अँगूठे से बंद कर दीजिये।
अब बायें नासिका छिद्र से दबाव हटाकर उससे रेचक कीजिये।
यह एक आवृत्ति है।

इस स्थिति में अभ्यासी पूरक एवं रेचक की लम्बाई की गणना 1 ॐ, 2 ॐ, 3 ॐ आदि की पुनरावृत्ति द्वारा कर सकते हैं।
पूरक एवं रेचक की अवधि में समानता होनी चाहिये। उदाहरणार्थ – पाँच पूरक एवं पाँच रेचक अथवा सुखपूर्वक गिनती तक पूरक एवं रेचक क्रिया की जा सके। किसी भी स्थिति में तनाव न पड़ने पाये।
कुछ दिनों के उपरान्त पूरक एवं रेचक की अवधि बढ़ाइये।
अनुपात 1:1 ही रहे, अर्थात् छः पूरक हों तो उतनी ही गिनती तक रेचक भी हो। इसमें पूर्णता प्राप्त करने के बाद सात पूरक एवं सात रेचक का अभ्यास कीजिये। बलपूर्वक श्वसन न करें। श्वास में कमी की पूर्ति के लिए रेचक काल में गणना जल्दी न करें।
किसी भी प्रकार की असुविधा का अनुभव होते ही तुरन्त पूरक एवं रेचक की अवधि कम कर दीजिये या कुछ समय के लिए अभ्यास बंद कर दीजिये। लगभग पन्द्रह दिनों के अभ्यास के बाद द्वितीय अवस्था को छोड़कर तृतीय अवस्था का अभ्यास प्रारम्भ कीजिये।

तृतीय अवस्था (अन्तरंग कुंभक) – दाहिने नासिका छिद्र को बंद कीजिये और बायें से पूरक कीजिये।
पूरक के अंत में दोनों नासिका छिद्रों को बंद कीजिये।
दाहिने नासिका छिद्र से रेचक कीजिये।
अब बायें नथुने को बंद रखते हुए दाहिने से पूरक कीजिये।
पुनः दोनों नासिका छिद्रों को अँगूठे व तृतीय अंगुली से बंद रखते हुए श्वास रोक कर पाँच तक गिनती गिनिये।
दाहिने नथुने को बंद रखिये। बायें को मुक्त करते हुए उससे रेचक कीजिये। यह एक आवृत्ति है।
अभ्यास की पचीस आवृत्तियाँ कीजिये।
कुछ दिनों के अभ्यास के बाद पूरक, कुंभक एवं रेचक का अनुपात 1:2:2 लीजिये, अर्थात् यदि पाँच की गिनती तक पूरक करते हैं तो दस की गिनती तक कुंभक एवं रेचक कीजिये।
कुछ दिनों के बाद पूरक में एक इकाई की वृद्धि कीजिये, अर्थात् पाँच के स्थान पर छः तक की गिनती। तब कुम्भक एवं रेचक में दो इकाई का योग हो जायेगा अर्थात 12 की गिनती तक कुम्भक एवं 12 की गिनती तक रेचक।

सुखपूर्ण अवस्था तक ही मात्रा में वृद्धि करनी चाहिये। अभ्यासी को तनिक भी असुविधा की अनुभूति नहीं होनी चाहिये।
पुनः आवृत्तियों की मात्रा में वृद्धि कीजिये। अनुपात यही रहेगा।
पूर्णता प्राप्त करने तक इस अवस्था का अभ्यास करना चाहिये।

भस्त्रिका प्राणायाम

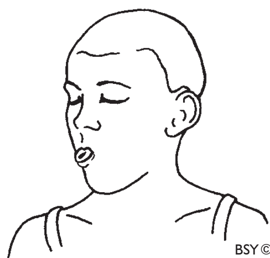
ध्यान के किसी सुखप्रद आसन में बैठिये।
सिर एवं मेरुदण्ड सीधे रहें।
आँखें बंद करके पूरे शरीर को शिथिल कीजिये।

प्रथम अवस्था – दाहिने हाथ को मस्तक पर भ्रूमध्य के पास रखिये और बायें हाथ को बायें घुटने पर रखिये।
दाहिने हाथ की प्रथम एवं द्वितीय अंगुलियों को कपाल पर रखिये, अँगूठा दाहिने नथुने के बाजू में रहे। तृतीय अंगुली को बायें नथुने के बाजू में रखिये।
अँगूठे से दाहिने नथुने के बाजू में दबाव डालते हुए उसे बंद कर लीजिये।
बायें नथुने से शीघ्रतापूर्वक बीस बार श्वसन कीजिये।
यह क्रिया उदर के प्रसार एवं आंकुचन के साथ जल्दी तथा लयुक्त हो।
अब एक लम्बा पूरक कीजिये। दोनों नथुनों को अँगूठे एवं तृतीय अंगुली से बंद कीजिये। अब जालंधर बंध कीजिये। क्षमतानुसार श्वास रोकिये।
फिर बंध को शिथिल कर रेचक कीजिये।
अब दायें नथुने से शीघ्रतापूर्वक बीस बार श्वसन कीजिये। पुनः बीस बार उदर के प्रसार एवं आंकुचन के साथ शीघ्रतापूर्वक लययुक्त श्वसन कीजिये।
दीर्घ पूरक कीजिये। दोनों नासिका छिद्रों को बंद कीजिये तथा जालंधर बंध कीजिये। कुछ समय तक श्वास रोकिये एवं फिर रेचक कीजिये।
यह एक आवृत्ति है। अभ्यास की तीन आवृत्तियाँ कीजिये।

द्वितीय अवस्था – पूर्व स्थिति में बैठिये। दोनों हाथों को घुटनों पर रखिये।
इस बार दोनों नासिका छिद्रों से एक साथ शीघ्रता से बीस बार श्वास लीजिये।
अब दीर्घ पूरक कीजिये। श्वास रोकिये एवं जालंधर बंध कीजिये।कुछ समय के आरामदायक अभ्यास के बाद बंध को शिथिल कीजिये एवं रेचक कीजिये।
यह एक आवृत्ति है। अभ्यास की तीन आवृत्तियाँ कीजिये।

कपालभाति प्राणायाम

ध्यान के किसी भी आसन में बैठिये।
आँखें बन्द करके पूरे शरीर को शिथिल कीजिये।
रेचक की प्रमुखता रखते हुए श्वसन क्रिया कीजिये।
भस्त्रिका की भाँति पूरक सहज व समकालीन हो। केवल रेचक क्रिया में धीरे से बल लगाइये। साठ से सौ तक रेचक कीजिये।
दीर्घ रेचक कीजिये तथा जालंधर बंध कीजिए।
आँखों को बंद रखे हुए ही भ्रूमध्य पर आँखों के सम्मुख शून्य पर ध्यान कीजिये। शून्यता एवं शान्ति का अनुभव कीजिये।
बंध को शिथिल कर धीरे-धीरे पूरक कीजिये।
सम्पूर्ण शरीर को शिथिल कीजिये।
यह एक आवृत्ति है। अभ्यास एक आवृत्ति से शुरू कीजिये एवं पाँच आवृत्तियों तक बढ़ाइये।



शीतली प्राणायाम

ध्यान के किसी भी आसन में बैठिये। हथेलियों को घुटनों पर रखिये। जिह्वा को मुँह के बाहर निकालकर उसके दोनों किनारों को इस प्रकार मोड़िये कि उसकी आकृति एक नलिका की भाँति हो जाये।
इस मुड़ी हुई जिह्वा से धीमी एवं गहरी श्वास लीजिये।
श्वास रोकिये तथा जालंधर बंध लगाइये।
कुछ समय बाद जालंधर बंध हटाकर नासिका से रेचक कीजिये।
पुनः मुड़ी हुई जिह्वा से पूरक कीजिये एवं अभ्यास को दोहराइये।



शीतकारी प्राणायाम

यह शीतली प्राणायाम की ही भाँति है तथा अभ्यास विधि में भी समानता है। केवल जिह्वा की स्थिति में भिन्नता है।
जिह्वा को मुँह के भीतर पीछे की ओर इस विधि से मोड़िये कि उसके अग्र भाग का स्पर्श ऊपरी तालु से हो।
दाँतों की पंक्तियों को एक-दूसरे पर रखिये। होठों को अधिक-से-अधिक फैलाइये। पूरक दाँतों के मध्य से कीजिये।
इसका अन्य विवरण शीतली प्राणायाम की ही तरह है।

उज्जायी प्राणायाम

खेचरी मुँा लगाइये अर्थात जिह्वा को मुँह में पीछे की ओर इस प्रकार मोड़िये कि उसके अग्र भाग का स्पर्श ऊपरी तालु से हो।
अब गले में स्थित स्वर-यंत्र को संकुचित करते हुए अभ्यास कीजिये।
श्वसन क्रिया गहरी तथा धीमी हो तथा उससे कोमल खर्राटे की या सोते हुए छोटे बच्चे की सी आवाज होनी चाहिये।
इस समय ऐसा अनुभव करना चाहिये कि श्वसन क्रिया नासिका से नहीं वरन् सिर्फ गले से ही हो रही है।
इसका अभ्यास किसी भी आसन में किया जा सकता है। कई मुद्राओं एवं अजपा जप आदि ध्यान की विधियों में भी इसका अभ्यास किया जाता है। नियमित अभ्यास द्वारा इसे घण्टों किया जा सकता है।



भ्रामरी प्राणायाम

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठिये।
मेरुदण्ड सीधा रहे एवं मुँह सामने रहे।
आँखें बंद कीजिये तथा पूरे शरीर को शिथिल कीजिये।
पूर्ण अभ्यास के दौरान मुँह बंद रहेगा।
दोनों नथुनों से पूरक कीजिये।
अंतरंग कुंभक लगाइये एवं लगभग पाँच सैकण्ड तक जालंधर बंध लगाइये।
बंध को मुक्त कर दोनों कर्ण-छिद्रों को तर्जनी उँगलियों से बंद कीजिये। मुँह को बंद रखते हुए ही दाँतों को विलग कीजिये तथा भ्रमर (भौंरे) की गुंजार जैसी लगातार ध्वनि निकालते हुए धीरे-धीरे अविरल रेचक कीजिए।
मस्तिष्क में इस ध्वनि की तरंगों को गुंजित होते हुए अनुभव कीजिये।
यह एक आवृत्ति हुई।
पाँच आवृत्तियों से अभ्यास प्रारंभ कर आवृत्तियों की संख्या बढ़ाइये।
इस अभ्यास को झुककर मत कीजिये अन्यथा शरीर में तनाव उत्पन्न हो सकता है।
फेफड़ों पर किसी प्रकार से जोर मत डालिये।

23

बंध

बंध शारीरिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा अभ्यासी को अपने शरीर के विभिन्न अंगों एवं नाड़ियों को नियंत्रित करने में मदद मिलती है। यह योगाभ्यास का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग है। बंधों के अभ्यास से शरीर के विभिन्न अंग संकुचित हो जाते हैं अथवा कस जाते हैं तथा आंतरिक अंगों की मालिश हो जाती है।

वैज्ञानिक शोधों से यह प्रमाणित हो चुका है कि बंधों द्वारा रक्तचाप को घटाने में मदद मिलती है तथा रक्त वाहिनियों में रक्त प्रवाह को बढ़ाया जाता है। इनके द्वारा अनुकम्पी तन्त्रिका उद्दीपन को घटाया एवं परानुकम्पी तन्त्रिका उद्दीपन को बढ़ाया जाता है।

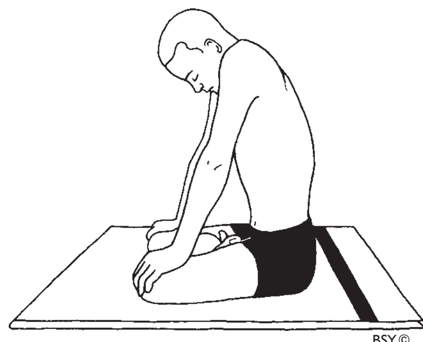
बंधों के अभ्यास द्वारा छाती के प्रवेश-द्वार एवं गुहाओं की सफाई होती है, रक्तचाप सामान्य रहता है तथा स्वास्थ्यप्रद श्वसन करने में सहायता मिलती है।

दमा एवं मधुमेह पर भी उपरोक्त लाभ स्पष्ट रूप से देखे गये हैं। बंधों द्वारा अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र की उत्तेजना में कमी लाकर रोगों के निदान में मदद मिलती है। इनसे स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र में पुनर्संतुलन आता है तथा शरीर पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों में कमी की जा सकती है।

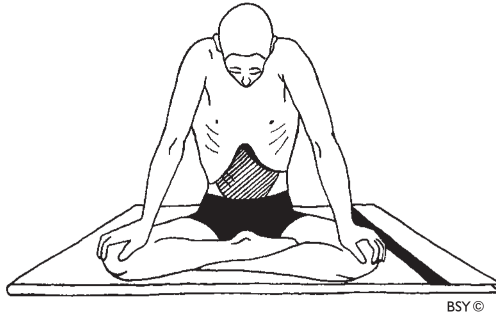
बंध आत्मिक तरंगों में प्रवेश कर चक्रों पर सूक्ष्म प्रभाव डालते हैं। वे प्राणों को पुनर्संतुलित करते हैं तथा उसके अवरोधों को दूर करते हैं। प्राणायाम के साथ समन्वित करने से बंध अत्यन्त शक्तिशाली हो जाते हैं तथा उनके द्वारा पूर्ण तथा उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त करने एवं आध्यात्मिक मार्ग पर आगे बढ़ने में मदद मिलती है।

जालंधर बंध

ध्यान के किसी भी आसन में बैठिये जिसमें घुटने जमीन को छूते हों। इसके लिए सुखासन उपयुक्त नहीं है। यदि आप पद्मासन या अर्द्ध पद्मासन में नहीं बैठ सकते हों तो जालंधर बंध का अभ्यास खड़े होकर कर सकते हैं।



हाथों को घुटनों के ऊपर रखिये।
सम्पूर्ण शरीर को शिथिल कीजिये एवं आँखों को बंद कीजिये।
दीर्घ पूरक के बाद अंतरंग कुंभक कीजिये।
सिर को सामने झुकाइये तथा ठुड्डी को छाती पर दबाइये।
हाथों पर बल डालते हुए उन्हें अचल अवस्था में रखिये।
दोनों कन्धों को एक साथ ऊपर उठाकर सामने रखिये, इससे हाथ सीधे एवं स्थिर रहेंगे।
हथेलियाँ घुटनों पर ही रहनी चाहिये।
यह अंतिम अवस्था है।
श्वास को रोकने की क्षमतानुसार इस अवस्था में रुकिये।
अब कंधों को शिथिल कीजिये तथा हाथों को मोड़िये, धीरे से बंध छोड़िये तथा सिर को ऊपर उठाइये।
धीरे-धीरे रेचक कीजिये।
सामान्य श्वसन के बाद इसे दोहराइये।
बहिरंग कुंभक के साथ यह क्रिया भी की जा सकती है।

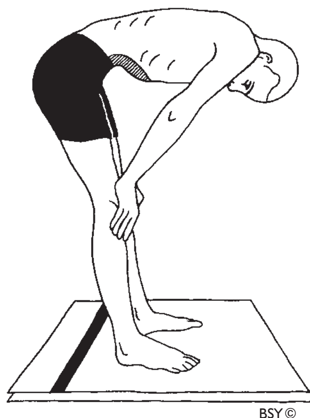


उड्डियान बंध

ध्यान के किसी आसन में बैठिये ताकि घुटने जमीन पर रहें। हथेलियों को घुटनों पर रखिये।
आँखें बंद कीजिये व पूरे शरीर को शिथिल कीजिये।
दीर्घ रेचक कीजिये एवं बहिर्कुम्भक लगाइये।
जालंधर बंध लगाइये।
अब उदर की मांसपेशियों को अधिक-से-अधिक ऊपर तथा भीतर की ओर संकुचित कीजिये।
यह अंतिम अवस्था है।
आरामदायक स्थिति तक अभ्यास कीजिये।
अब उदर की पेशियों तथा जालंधर बंध को शिथिल कीजिये।
पूरक कीजिये।
यह एक आवृत्ति हुई।
श्वसन क्रिया सामान्य होने पर पुनः अभ्यास कीजिये।

उड्डियान बंध (प्रकारान्तर)

पैरों को परस्पर आधा मीटर दूर रखते हुए खड़े हो जाइये।
कुछ सामने झुकिये एवं हथेलियो को जाँघों पर रखिये।
धीरे से घुटनों को कुछ मोड़िये।
दृष्टि सामने रखिये। पहले दीर्घ पूरक तथा बाद में दीर्घ रेचक कीजिये। धीरे से पीठ को ऊपर उठाइये। पैर सीधे रहें। अब उदर को संकुचति कर भीतर खींचिये। पेट का मध्यवर्ती भाग नतोदर अवस्था में आ जाये।



दृष्टि सामने रखते हुए इसी स्थिति में रुकिये।
कुछ देर श्वास रोकने के बाद बंध छोड़िये। धीरे-धीरे पूरक कीजिये एवं शरीर को शिथिल कीजिये।
यह अभ्यास अपेक्षाकृत सरल है। अतः प्रारम्भिक अभ्यासियों के लिए उपयुक्त है।

24

ध्यान

शताब्दियों के यौगिक अनुभवों से यह सिद्ध हो चुका है कि रोगों के निदान के लिए ध्यान एक शक्तिशाली क्रिया है। आज वैज्ञानिक शोधों द्वारा यह बात प्रकाश में आ रही है कि उत्तम स्वास्थ्य के लिए ध्यान का कितना महत्त्व है। प्रयोगशालाओं के निष्कर्षों के आधार पर ध्यान के शरीर पर पड़ने वाले प्रभाव निम्नलिखित हैं–

1. ऑक्सीजन के क्षय को कम करता है (शिथिलता और उचित श्वसन को प्रभावित करता है)।
2. रक्तचाप को निम्न करता है।
3. अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र को शिथिल करता है। इसके परिणामस्वरूप निचले स्तर के विशिष्ट हार्मोन एड्रिनलिन एवं नार-एड्रिनलिन प्रभावित होते हैं।
4. शरीर के विद्युतीय दबाव को बढ़ाता है। यह शिथिलीकरण का लक्षण है।
5. अम्ल-उत्पादन को बंद करता है एवं उसे शरीर से बाहर करता है।
6. मस्तिष्क तरंगों को मंद करता है एवं अल्फा स्तर तक लाता है। इससे तनाव समाप्त होते हैं तथा शिथिलता एवं सजगता का विकास होता है।
7. हृदय की धड़कन को मंद करता है
8. कार्बन-डाइ-ऑक्साइड के उत्पादन को कम करता है।

ध्यान के दौरान उपरोक्त प्रभावों को शरीर पर पड़ते देखा जा सकता है। ये सभी परिवर्तन स्वास्थ्य पर बहुत अच्छा प्रभाव डालते हैं।

मस्तिष्क एवं चेतना के स्तरों पर ध्वनि के प्रभावों को अल्फा तरंगों के माध्यम से नापा जाता है। इन्हें मंत्रों के उपयोग से भी उत्पन्न करके रक्तचाप को कम किया जाता है। विभिन्न शोधों से पता चलता है कि ध्यान की अवस्था में मस्तिष्क

में अल्फा तरंगों की अधिकता हो जाती है, विशेषकर सामने और मध्यवर्ती भागों में। अल्फा तरंगों का क्षेत्र प्रति सैकण्ड 9 से 13 साइकिल है परन्तु ध्यान की अवस्था में धीमी तरंगों की गति भी प्रति सैकण्ड 8 से 9 साइकिल रिकार्ड की गई है। यह शिथिलीकरण के अत्यन्त गहरे स्तर का सूचक है। ध्यान के द्वारा थीटा तरंगों की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है जो कि निद्रावस्था में स्वप्न देखने में तथा दूसरे समय में क्रियाशील श्वसन के अनुभव में सहायक है। इनसे शरीर तथा प्राणों में एक समान आनन्द-दायक स्तर की प्राप्ति होती है।

विभिन्न रोगों के निदान में ध्यान के प्रभावों के कारण 'इन्टरनेशनल मेडिकल फ्रेटरनिटी' द्वारा ध्यान को एक महत्त्वपूर्ण सहायक के रूप में स्वीकार किया गया है। संयुक्त राज्य अमेरिका की शोधों से प्रमाणित हो चुका है कि ध्यान के द्वारा कैंसर का उपचार भी हो सकता है। ध्यान के द्वारा मनुष्य के अनेकों अर्द्धचेतन क्रियाकलापों को चेतन नियंत्रण में लाया जाता है एवं इसके द्वारा मानसिक एवं शारीरिक ऊर्जाओं में संतुलन स्थापित किया जाता है। 'अनैच्छिक तन्त्रिका तन्त्र' का संतुलन करने से हम आधुनिक जीवन के दबावों एवं तनावों के प्रभाव से मुक्त होते हैं जिससे मन व शरीर रोग से कम प्रभावित होते हैं।

योग में बाह्य जीवन के विक्षेपों को हटाने से लेकर उपचारात्मक क्षमता तक के लिए सैकड़ों अभ्यास हैं जो शरीर, मन और आत्मा पर प्रभाव डालते हैं जिन्हें हम दमा और मधुमेह के लिए विशेष उपयोगी समझते हैं। योगाभ्यास द्वारा रोगों को दूर करने वाले यह भी पायेंगे कि ये विधियाँ सजगता के विस्तार एवं आध्यात्मिक मार्ग पर बढ़ने में मदद करती हैं।

शिथिलीकरण (विश्रांति)

शिथिलीकरण का मतलब बिना हिले-डुले आरामकुर्सी पर बैठा रहना नहीं है। यह एक प्राणिक शक्ति है जो हमारे जीवन के प्रत्येक क्रियाकलाप में व्याप्त हो जाती है तथा हमें दक्षतापूर्वक और आनन्दपूर्वक कार्य करने में समर्थ बनाती है। जब हम कार्य करने के बाद थककर बैठ जाते हैं तो इसके द्वारा हमें बड़ी आसानी से विश्राम प्राप्त होता है।

शिथिलीकरण के अभ्यास तीनों प्रकार के तनावों को समाप्त करते हैं– मांसपेशीय, भावनात्मक और सूक्ष्म तनाव। इन अभ्यासों से दमा और मधुमेह

के रोग के प्राणिक अवरोध दूर होते हैं। जब भी आप अपने को थका हुआ या तनावयुक्त महसूस करें तो इनका अभ्यास कर सकते हैं, इससे आपके शरीर और मन दोनों पुनः ताजे हो जायेंगे। सोने से पहले शिथिलीकरण का अभ्यास आपको दिन भर के कोलाहल, विचारों एवं चिन्ताओं से मुक्ति दिलाकर विश्रामदायक नींद लाने में मदद करेगा। शिथिलीकरण का अभ्यास ध्यान की तैयारी के लिए सर्वश्रेष्ठ है।

अभ्यास

अवस्था 1 – आरामदायक स्थिति में लेट जाइये।
अपने को सुविधाजनक स्थिति में स्थिर कीजिये।
आँखें बंद कीजिये एवं पूर्ण रूप से शिथिल होइये।
अपने पूरे शरीर के प्रति सजग होइये।
ऐसा अनुभव कीजिये कि आपका शरीर भी जमीन का एक हिस्सा है।
अपने पूरे शरीर के इन्द्रियजनित ज्ञान का अनुभव कीजिये और यदि संभव हो तो मानसिक रूप से अपने शरीर का प्रतिबिम्ब देखिये।
अपने शरीर के किसी भी दर्द के प्रति सजग होइये।
अपनी सजगता को केवल इस दर्द पर लगाइये।
यदि आपका मन भटकता है तो उसे भटकने दीजिये।
इस दौरान अपनी सजगता को शरीर के दर्द पर केन्द्रित रहने दीजिये।
कुछ मिनटों तक लगातार इसे कीजिये।
इसके बाद अपनी सजगता को दाहिने पैर पर लाइये।
उस समय केवल दाहिने पैर का ही ख्याल रहे।
कुछ समय पश्चात् अपनी सजगता को बायें पैर पर लाइये।
मानसिक रूप से बायें पैर का ख्याल कीजिये या बायें पैर से जमीन के स्पर्श का ख्याल कीजिये। सजगता बराबर बनी रहे।
अब अपनी सजगता को पुनः दाहिने पैर पर लाइये एवं उपरोक्त क्रिया को दोहराइये। लौटते समय यही क्रिया क्रमशः बायें पैर, उदर, छाती, दाहिनी भुजा, बायीं भुजा, गले तथा अंत में सम्पूर्ण शरीर पर कीजिये।
यह एक आवृत्ति है।
अपनी सजगता अधिक बनाए रखें।
यदि आपकी सजगता दूसरे स्थान पर जाती है तो उसे वापस अपने शरीर पर

लाइये। एक और आवृत्ति कीजिये।
सजग रहिये।
अब अपनी सजगता को शरीर के विभिन्न भागों में ले जाइये।
अब शरीर के उन भागों का ख्याल कीजिये जिनके बारे में आपने अभी तक कभी ख्याल नहीं किया है। इस प्रकार अपना अभ्यास करते जाइये।

अवस्था 2 – आँखें बंद कीजिये।
अपनी श्वास के प्रति सजग होइये।
कल्पना कीजिये कि आप हृदय से श्वास ले एवं छोड़ रहे हैं। श्वसन सीधे हृदय से होता है।
श्वास लेने एवं छोड़ने को पचास शून्य तक गिनती के रूप में गिनते जाइये।
श्वास लेने पर पचास गिनिये।
श्वास छोड़ने पर उनचास।
पुनः श्वास लेने पर अड़तालीस। इस विधि से श्वास लेते हुए शून्य तक जाइये।
गिनती के प्रति मानसिक रूप से सजगता बनी रहे।
आपकी श्वास सामान्य होनी चाहिये।
यदि आप गिनती भूलते हैं तो पुनः पचास से गिनना प्रारंभ कीजिये। उपलब्ध समय के अनुसार इस अभ्यास को कीजिये।

अवस्था 3 – यह अवस्था 2 के समान ही है, परन्तु इसमें श्वास लेते एवं छोड़ते समय आपको यह ख्याल रखना चाहिये कि श्वसन गले (विशुद्धि चक्र) से हो रहा है।

अवस्था 4 – नासिका से चलने वाली स्वाभाविक श्वास के प्रति सजग होइये। जैसे, जब आप श्वास लेते हैं तो पचास गिनिये। जब श्वास छोड़ते हैं तो उनचास गिनिये।
इस प्रकार से गिनते हुए शून्य तक जाइये।
इस दौरान मानसिक रूप से नासिका से प्रवाहित श्वास पर और गिनती पर सजगता बनी रहे।

अजपा जप

जप मंत्र का सतत् दोहराव है। जब मंत्र का उच्चारण चैतन्यता के साथ स्वत: होने लगता है तो जप अजपा में परिणत हो जाता है। इस विधि में लगातार मंत्र को श्वास के साथ संयुक्त किया जाता है। 'सोऽहं' मंत्र द्वारा मस्तिष्क को शान्ति मिलती है एवं उसको शरीर में स्थानान्तरित किया जाता है। चेतना की उच्च अवस्था में इसका प्रभाव उपचार के रूप में डाला जा सकता है।

अजपा जप के प्रारंभिक अभ्यास के दौरान अभ्यासी को नाभि से लेकर गले तक के सूक्ष्म मार्ग का ख्याल करना चाहिये, जहाँ प्राण (उपचारात्मक बायो ऊर्जा) का प्रवाह होता है। इस सूक्ष्म मार्ग की स्थिति ज्ञात करने के लिए आप योग शिक्षक से मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं। अभ्यास के आरंभ में आपको इस प्राणिक-पथ की कल्पना करनी होगी, परन्तु बाद में यह वास्तविकता बन जायेगा।

ऊर्ध्ववर्ती सूक्ष्म पथ एवं मेरुदण्ड में प्राणों की जागृति से शरीर में पुनर्संतुलन आता है, ऊर्जा बढ़ती है एवं मस्तिष्क स्वच्छ होता है। इस प्रकार शरीर के सम्पूर्ण क्रियाकलाप उचित रीति से सम्पन्न होते हैं। कुछ समय के अनुभवों के बाद आपके रोग समाप्त होते हैं तथा आपको आनन्द एवं जीवनीशक्ति की प्राप्ति होती है।

अभ्यास

अवस्था 1 – आरामदायक स्थिति में बैठिये।
आँखें बंद कीजिये एवं पूरे शरीर को शिथिल कीजिये।
बिना अधिक तनाव के मेरुदण्ड को सीधा रखिये।
स्वयं से कहिये कि अभ्यास के दौरान सभी समस्याएँ एवं चिन्ताएँ हट गई हैं; और आपका पूरा ध्यान अजपा जप के अभ्यास पर रहेगा।
अब आप अभ्यास के लिए तैयार हैं।
उज्जायी प्राणायाम एवं खेचरी मुद्रा कीजिये। जीभ को पीछे की तरफ मोड़िये ताकि उसका अग्रभाग ऊपरी जबड़े को स्पर्श करे। बिना किसी तनाव के जीभ को यथासंभव पीछे ले जाने का प्रयत्न कीजिये।
अपनी श्वास के प्रति सजग होइये।
श्वास लेने एवं छोड़ने का पूरा ख्याल कीजिये।

प्रत्येक श्वास के प्रति सजग रहिये; श्वास के लययुक्त प्रवाह का ख्याल कीजिये।
इस प्रकार कुछ मिनटों तक अभ्यास कीजिये।
अब कल्पना कीजिये कि आपकी श्वास सामने के भाग में नाभि एवं गले के बीच में चल रही है।
पूरक के समय श्वास नाभि से गले तक एवं रेचक के समय श्वास गले से नाभि तक जाती है।
हो सकता है कि प्रारंभ में आपको इस प्रकार कल्पना करने में कठिनाई हो परन्तु बिना चिंता किये हुए अभ्यास करते जाइये। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि आपकी सजगता श्वास पर रहे।
बिना किसी दबाव के श्वास को लययुक्त, गहरी एवं लम्बी होने दीजिये।
आप जितना ही शिथिल होंगे, आपकी श्वास उतनी ही धीमी एवं गहरी होगी।
लगभग पाँच मिनट तक इस प्रकार अभ्यास कीजिये।
सजगता बनाए रखिये।
यदि मस्तिष्क में विभिन्न विचार उठते हैं तो उनसे लड़ाई मत कीजिये, आप केवल श्वास के प्रति सजगता को बनाए रखने का प्रयत्न कीजिये। श्वास के उतार-चढ़ाव के साथ सोऽहं मंत्र को समन्वित कीजिये।
आपको उसी प्रकार श्वास के उतार-चढ़ाव एवं गले से प्रतिध्वनित सोऽहं के प्रति सजगता बनाए रखनी चाहिये। मंत्र एवं श्वास आपस में समन्वित होने चाहिये।
श्वास लेते समय 'सो' एवं छोड़ते समय 'हं' की ध्वनि होनी चाहिये।
श्वास लेते समय गले एवं नाभि के बीच में निरंतर सजगता रहनी चाहिये।
यदि आपके मन में विभिन्न विचार आते हैं तो कोई बात नहीं, उन्हें आने दीजिये, मगर यह बात आपको मालूम होनी चाहिये। मंत्र एवं श्वास के प्रति सजगता को बनाए रखिये।
अपने उपलब्ध समय तक इस अभ्यास को करते जाइये।

अवस्था 2 – यह अवस्था 1 की तरह ही है, केवल 'हं सो' के अलावा।
इसे रेचक 'हम्' से प्रारंभ करें एवं पूरक 'सो' के साथ समाप्त करें।
'हम्' और 'सो' के बीच में कोई विराम नहीं होना चाहिये परन्तु 'हं सो' की एक आवृत्ति के बाद छोटा सा विराम हो। इस प्रकार पूरक और रेचक के बीच में कोई विराम नहीं होना चाहिये।

अवस्था 3 – मंत्र की निरंतरता के साथ आप पूरक के समय 'सो' एवं रेचक के समय 'हम्' की ध्वनि सुनते हैं। 'सो' एवं 'हम्' के बीच में कोई निरंतरता नहीं होती। इनको एक-दूसरे से मिलाये बिना अलग-अलग मंत्रों के समान माना जाता है। पूरक एवं रेचक के साथ 'सो' एवं 'हम्' की आवृत्तियाँ निरंतर रहनी चाहिये।

अवस्था 4 – यह अवस्था तीन के समान ही है परन्तु इसमें 'सो' एवं 'हम्' को मिलाया जाता है। पूरक एवं रेचक के साथ ही बिना रुके लम्बे समय तक सो-हं-सो-हं चलता रहेगा।

पूरक के समय नाभि से हृदय तक 'सो' मंत्र होता है। पूरक 'हम्' मंत्र के साथ छाती से गले तक ऊपर बढ़ता है। रेचक 'हम्' मंत्र के साथ ही गले से छाती तक होता है। हृदय के नीचे रेचक 'सो' मंत्र का रूप ले लेता है। यह लगातार आवृत्ति है जिसका न तो प्रारंभ है और न अंत। बाद में 'सो हं' 'हं सो' के साथ मिलता है।

योगनिद्रा

योगनिद्रा पूर्ण रूप से मानसिक, शारीरिक और भावनात्मक शिथिलीकरण प्राप्त करने का एक व्यवस्थित तरीका है। यह निद्रा एवं जागृति की सीमा के बीच की शिथिल सजगता की एक ऐसी अवस्था है जिसमें आप अर्द्धचेतन एवं चेतन मस्तिष्क से सम्पर्क करते हैं।

योगनिद्रा शान्तिप्रदायक यौगिक विधि है जो शरीर की सभी प्रणालियों में सामंजस्य स्थापित करती है। यह ध्यान का एक ऐसा प्रभावकारी तरीका है जो बीमार या कमजोर व्यक्तियों के तन्त्रिका तन्त्र में नवजीवन भर देता है, प्राणों को जाग्रत करता है तथा उपचारात्मक क्षमता उत्पन्न करता है। योगनिद्रा बाह्य सूक्ष्म बीमारियों को दूर करने में अत्यन्त उपयोगी है।

योगनिद्रा का अभ्यास कहीं पर भी और किसी भी समय किया जा सकता है, परन्तु इसके लिए हल्का प्रकाशयुक्त कमरा एवं सुविधाजनक तापक्रम अच्छा है। शरीर पर ढीले एवं कम कपड़े हों, ठण्ढ एवं मच्छर-मक्खियों से बचने के लिए शरीर को एक हल्की चादर से ढक सकते हैं। अभ्यास का स्थान बिल्कुल शान्त एवं अवरोधों से रहित होना चाहिए। योगनिद्रा करने के लिए

सबसे उपयुक्त समय सुबह चार से छः बजे का है या बिल्कुल सोने के पहले। एक बार समय निर्धारित करने के बाद प्रतिदिन उसी समय अभ्यास कीजिये। भोजन के बाद कम-से-कम दो घण्टे एवं हल्के जलपान के बाद कम-से-कम आधे घण्टे तक योगनिद्रा का अभ्यास मत कीजिये। योगनिद्रा का अभ्यास शवासन में किया जाता है। इसमें सिर, धड़ एवं पैर एक सीधी लाइन में रहते हैं। यदि आवश्यक हो तो अभ्यास करते समय सिर, कंधों अथवा पीठ के नीचे पतले तकिये का उपयोग किया जा सकता है।

योगनिद्रा के दौरान आपको अभ्यास को याद करने का प्रयत्न करना चाहिये। हमारा सुझाव है कि इसे किसी योग शिक्षक से सीखना चाहिये। यदि यह संभव न हो तो अभ्यास को टेप कर लेना चाहिये अथवा किसी दूसरे व्यक्ति से पढ़वाना चाहिये।

संकल्प – योगनिद्रा के पूर्व एवं अंत में एक संकल्प दोहराया जाता है। संकल्प छोटा एवं आशावादी होता है। यह एक बीज के समान है जिसे अर्द्धचेतन मन में बोया जाता है। यदि संकल्प को गंभीरतापूर्वक एवं पूर्ण ख्याल के साथ किया जाये तो यह आश्चर्यजनक परिणाम ला सकता है। जब अर्द्धचेतन मन अत्यन्त ग्रहणशील होता है उस समय संकल्प में महान् उपचारात्मक शक्ति एवं आशावादिता का रोपण करने की क्षमता होती है। संकल्प छोटा, सारगर्भित एवं गहरा होना चाहिये। निम्नलिखित संकल्पों में से आप अपने लिए एक चुन सकते हैं –

मैं पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त करूँगा।
मैं पूर्णता को प्राप्त करूँगा।
मैं सजगता से अपनी बीमारी दूर कर रहा हूँ।

संकल्प को पूर्ण उत्सुकता के साथ योगनिद्रा के अभ्यास में दोहराना चाहिए जब तक वह जिन्दगी में वास्तविकता नहीं बन जाता।

मानस दर्शन – मस्तिष्क का सबसे क्रियाशील भाग कार्टेक्स है। यह संकेत करता है कि मस्तिष्क धारणा करने के लिए तैयार है। आंतरिक या मानसिक धारणा का मस्तिष्क एवं शरीर की सभी कार्यप्रणालियों पर अत्यन्त गहरा प्रभाव पड़ता है।

अभ्यास के प्रारंभ में तो आपको बहुत ज्यादा कल्पना करनी होगी, परन्तु बाद में अभ्यास द्वारा यह स्वयं स्पष्ट हो जायेगा। जैसे-जैसे आपकी सजगता का विकास होगा, आप स्वयं उच्च चेतना की ओर बढ़ते जायेंगे।

अभ्यास

योगनिद्रा के लिए तैयार हो जाइये। शवासन में लेट जाइये एवं अपने को अधिक-से-अधिक शिथिल कीजिये। पैरों के बीच थोड़ी जगह रखिये और उन्हें जमीन पर आराम से रखिये। भुजाएँ शरीर के बगल में रहें तथा हथेलियाँ खुली रहें। अपने कंबल, कपड़ों एवं स्थिति को व्यवस्थित कर लीजिये ताकि योगनिद्रा का अभ्यास करते समय आपको हिलना न पड़े अथवा कोई शारीरिक असुविधा न हो। कृपया अपनी आँखें बंद कीजिये। योगनिद्रा में बाहर की आवाजों को सुनना एवं उनका अनुभव करना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। योगनिद्रा में आप पूरे समय सजग रहते हैं तथा बाहर की आवाजों को सुनते हैं। स्वप्न का सृजन करते हैं। मानसिक रूप से अपने आप से कहें मैं नहीं सोऊँगा। इसे पुन: दोहराइये– "मैं नहीं सोऊँगा"। कुछ समय तक शान्त रहिये। एक गहरी श्वास लीजिये। श्वास लेते समय अपने पूरे शरीर में शान्ति का अनुभव कीजिये। श्वास छोड़ते समय मानसिक रूप से कहिये कि मैं पूर्ण रूप से शिथिल हूँ।

अब थोड़ी दूर की आवाजों के प्रति सजग हो जाइये। सबसे दूर से आने वाली आवाजों के प्रति सजग हो जाइये। आपके सुनने की ग्रहणशीलता एक राडार की किरण की तरह हो। इस प्रकार बाहर की आवाजों को कुछ सैकण्ड तक सुनते जाइये। अपनी चेतना को एक आवाज से दूसरी आवाज पर ले आइये, बिना प्रयत्न किये... क्रमश: बाहर की आवाजें, फिर अंदर की आवाजें। अब अपने कमरे के प्रति सजग होइये। कमरे की चारों दीवारें, छत एवं फर्श (जहाँ आपका शरीर पड़ा हुआ है) की बिना आँखें खोले कल्पना कीजिये। लेटे हुए अपने शरीर के प्रति पूर्ण रूप से सजग होइये।

आपके शरीर के जो अंग जमीन का स्पर्श कर रहे हैं, उनके स्पर्श बिन्दुओं के प्रति सजग होइये।

अपनी स्वाभाविक श्वास के प्रति सजग होइये...गहरी स्वाभाविक एवं स्वत: चलने वाली श्वास के प्रति सजग होइये। इस पर एकाग्र होने की आवश्यकता नहीं, इससे स्वाभाविक प्रक्रिया में व्यवधान उत्पन्न होगा। श्वास को सुनते जाइये एवं यह जानिये कि आप श्वास ले रहे हैं। अब मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ। मैं नहीं सोऊँगा। मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ।

संकल्प– यह संकल्प का समय है। अपने संकल्प को मानसिक रूप से तीन बार पूर्ण ख्याल एवं सजगता के साथ दोहराइये। संकल्प जीवन के किसी महान उद्देश्य से प्रेरित होना चाहिये।

चेतना को घुमाना – इसमें आपको यथासंभव शीघ्रातिशीघ्र अपनी चेतना को शरीर के विभिन्न अंगों पर घुमाना है। मानसिक रूप से अपने शरीर के किसी अंग का ख्याल कीजिये एवं उस अंग के प्रति सजग होइये। अभ्यास दाहिने हाथ से शुरू होता है –

(दाहिनी तरफ) दाहिने हाथ का अँगूठा, दूसरी अंगुली, तीसरी अंगुली, चौथी अंगुली, पाँचवीं अंगुली, हथेली, कलाई, कोहनी, कन्धा, बगल, कमर, नितम्ब, दाहिनी जाँघ, घुटना, पिण्डली, टखना, एड़ी, तलवा, दाहिने पैर का अँगूठा, दूसरी अंगुली, तीसरी अंगुली, चौथी अंगुली, पाँचवी अंगुली...

(बायीं तरफ) बायें हाथ का अँगूठा, दूसरी अंगुली, तीसरी अंगुली, चौथी अंगुली, पाँचवीं अंगुली, हथेली, कलाई, कोहनी, कन्धा, बगल, कमर, नितम्ब, बायीं जाँघ, घुटना, पिण्डली, टखना, एड़ी, तलवा, बायें पैर का अँगूठा, दूसरी अंगुली, तीसरी अंगुली, चौथी अंगुली, पाँचवीं अंगुली...

(पीछे) दाहिना कंधा, बायाँ कंधा, दाहिना पुट्ठा, बायाँ पुट्ठा, दाहिना नितम्ब, बायाँ नितम्ब, रीढ़...पूरी पीठ एक साथ...

(सामने) सिर का ऊपरी हिस्सा, मस्तक, दाहिनी भौंह, बायीं भौंह, दोनों भौहों के बीच का स्थान, दाहिनी आँख, बायीं आँख, दाहिना कान, बायाँ कान, दाहिना गाल, बायाँ गाल, नासिका का अग्र भाग, ऊपर का होंठ, नीचे का होंठ, ठुड्डी, गला, गले की दाहिनी हड्डी, गले की बायीं हड्डी, दाहिनी छाती, बायीं छाती, मध्य छाती, नाभि, उदर, उदर का निचला भाग...

(मुख्य अंग) पूरा दाहिना पैर, पूरा बायाँ पैर, दोनों पैर एक साथ, पूरा दाहिना हाथ, पूरा बायाँ हाथ, दोनों हाथ एक साथ, पूरी पीठ, पूरा सामने का भाग, पूरा सिर एक साथ...सम्पूर्ण शरीर...सम्पूर्ण शरीर...सम्पूर्ण शरीर... सम्पूर्ण शरीर।

श्वास – अन्दर आने वाली एवं बाहर जाने वाली श्वास का ख्याल कीजिये। नाभि एवं गले के बीच में श्वास के प्रवाह को अनुभव कीजिये...पूरक के समय यह नाभि से गले तक प्रवाहित होती है और रेचक के समय गले से नाभि तक। पूर्ण रूप से नाभि से गले और गले से नाभि के बीच में चलने वाली श्वास के प्रति सजग होइये। श्वास लेने में जोर मत लगाइये। केवल सजगता। जब आप श्वास अंदर लेते हैं तो शरीर फैलता है और जब आप श्वास बाहर छोड़ते हैं तो शरीर सिकुड़ता है। श्वास लेने के साथ शरीर को फैलाइये एवं प्राणशक्ति से भरिये...इस प्रकार श्वास लेने से शरीर की अशुद्धियाँ बाहर निकलती जा रही

हैं। श्वास लीजिये तथा अनुभव कीजिये कि शरीर के प्रत्येक कोश एवं तन्तु में प्राण प्रवाहित हो रहा है... श्वास छोड़िये एवं शिथिल होइये...इस समय आप सभी दोषों और अशुद्धियों को बाहर फेंक रहे हैं। आपको बिना सोये अभ्यास करते जाना है।

मानस दर्शन– आप जाग रहे हैं या सो रहे हैं? अपने को देखिये एवं मानसिक रूप से कहिये "मैं जाग रहा हूँ।" मणिपुर चक्र के प्रति सजग होइये जो आपकी नाभि के पीछे मेरुदण्ड में स्थित है। श्वास लेने के साथ अनुभव कीजिये कि मणिपुर चक्र में प्राणिक ऊर्जा इकट्ठी होती जा रही है...श्वास छोड़िये एवं प्राण एवं उपचारात्मक जीवनीशक्ति को मणिपुर चक्र में लाइये। अब पूरक के साथ अनुभव कीजिये कि उपचारात्मक ऊर्जा का प्रवाह सारे शरीर में हो रहा है। श्वास छोड़ने के साथ प्राण को एक प्रकाश की रेखा के रूप में देखिये। श्वास लेने के साथ ऐसी धारणा कीजिये कि प्राण रूपी जीवन-शक्ति मणिपुर चक्र से शरीर के सभी भागों में सूर्य की किरणों के समान फैल रही है। प्राण शक्ति से युक्त एक चमकीले एवं सुनहले सूर्य की कल्पना अपनी नाभि में कीजिये। जिस प्रकार की आवाज के साथ कोयला जलता है, ठीक उसी प्रकार शरीर में प्राण-शक्ति की कल्पना कीजिये...ऊर्जा के स्वच्छ प्रवाह को स्पष्ट देखिये...मणिपुर चक्र को प्रकाश से आलोकित कमरे के रूप में देखिये...यह एक फटते हुए ज्वालामुखी के टुकड़ों की सफेद रोशनी की तरह है जो पूरे शरीर में प्रवेश करती है...इसके बाद जैसे विस्फोट रुक जाता है और प्रकाश अपने केन्द्र को लौट जाता है।

उपचारात्मक प्रतीक– अपनी चेतना को चिदाकाश में लाइये। बंद आँखों के समक्ष उस स्थान में एकाग्रता बनाए रखिये। उस स्थान में नीला आकाश देखिये...एक असाधारण सूर्य...इस सूर्य से आने वाली उष्णता एवं सुनहरी ऊर्जा का अनुभव कीजिये...प्रकाश का समाप्त होना...एक नीला आकाश...एक क्रास...एक षट्कोणीय तारा...फव्वारे से सुनहरे जीवनदायक द्रव का प्रवाह...नीला कमल...सफेद कमल...लाल कमल...शिवलिंग...जलती हुई मोमबत्ती...सुनहरा अंडा, रात्रि में तारे...चमकीला पूर्ण चन्द्रमा...एक सुनहरी नदी...सुनहरे पानी का समुद्र...एक अनन्त सुनहरा समुद्र...अपने को समुद्र के किनारे पर देखिये...समुद्र में गोता लगाइये...आपके चारों तरफ समुद्र है... समुद्र का जल आपके रोम-रोम में प्रवेश कर रहा है और आपको नवजीवन प्रदान कर रहा है....आपका शरीर प्राणों से परिपूरित हो गया है...हल्केपन

का अनुभव...अपने को समुद्र की गहराई में जाते देखिये...बहुत गहरे...दूर एक हरित मणि को चमकते देखिये...उस मणि को लीजिये...उसे ध्यानपूर्वक देखिये...इससे प्रकाश की किरणों के साथ विस्फोट होता है...और आप अपने को समुद्र के किनारे पाते हैं।

आंतरिक स्थान– अपनी सजगता को चिदाकाश पर लाइये। उसी अंधेरे स्थान पर अपनी सजगता ले जाइये। अंधेरे को बहुत ध्यान से देखिये। अपने मस्तिष्क को उस उष्ण एवं मित्रतापूर्ण अंधेरे में विश्राम करने दीजिये...यदि कोई सूक्ष्म स्पष्ट आकार दिखते हैं तो उन्हें ध्यान से देखते हुए सजगता बनाए रखिये। यदि मन में विचार आते हैं तो उन्हें आने-जाने दीजिये, लेकिन आप अंधेरे स्थान को देखते हुए अपनी सजगता बनाए रखिये।

संकल्प– अपने संकल्प को याद कीजिये। वही संकल्प जो आपने योग निद्रा के प्रारंभ में किया था, उन्हीं शब्दों एवं तरीके के साथ दोहराइये। अपने संकल्प को मानसिक रूप से पूर्ण सजगता के साथ तीन बार दोहराइये।

समाप्ति– अपनी श्वास के प्रति सजग होइये, अपनी स्वाभाविक श्वास के प्रति सजग होइये। श्वास एवं शिथिलीकरण पर सजगता। शारीरिक अस्तित्व पर सजगता एवं शिथिलीकरण पर सजगता। अपने हाथों, पैरों व जमीन पर लेटे हुए शरीर के प्रति सजग होइये।

कमरे की दीवारों, छत तथा कमरे के अंदर एवं बाहर की आवाजों के प्रति सजगता का विकास कीजिये। अपने मस्तिष्क को बाहर की तरफ उन्मुख कीजिये। आँखें बंद किये हुए चुपचाप लेटे रहिये। धीरे-धीरे शरीर को हिलाइये-डुलाइये। जब यह निश्चित हो जाये कि आप पूर्ण रूप से जाग चुके हैं तो धीरे से उठ बैठिये एवं आँखें खोल लीजिये। यह योगनिद्रा के अभ्यास की समाप्ति है। ॐ तत्सत्।

प्रकारान्तर मानस दर्शन

उपर्युक्त उपचारात्मक प्रतीक शीर्षक के अन्तर्गत दी गई धारणाओं के स्थान पर इन धारणाओं को अपनाया जा सकता है। ये धारणाएँ शरीर में प्राणिक ऊर्जा-स्रोत को प्रभावित करती हैं।

दमा के लिए– अब सुनहरे प्रकाश को अपने नथुनों एवं गले में फैलते हुए देखिए...इसके बढ़ने के साथ इसकी उष्णता एवं चमक का ख्याल कीजिए...यह धीरे-धीरे फेफड़ों में प्रवाहित हो रहा है....श्वास लेने के साथ

एक चमकीले प्रकाश की रेखा देखिए...श्वास लेने के साथ ही प्रकाश रेखा नथुनों तक आती है - नीचे गले में एवं फेफड़ों तक। फेफड़ों के दोनों ओर प्रत्येक स्थान में ऊर्जा के समाहित होने की कल्पना कीजिए...इस ऊर्जा के समाहित होने की कल्पना कीजिये...यह ऊर्जा शरीर के प्रत्येक कोश में जाती है...श्लेष्म एवं फेफड़ों की कठोरता में इस सुनहरे प्राण को व्याप्त देखिए... सूखे एवं कठोर श्लेष्म का प्रत्येक टुकड़ा इस जीवनदायिनी शक्ति से व्याप्त है। ध्यान से देखिए....यह ऊर्जा श्लेष्मा को गला रही है...प्राणों की गर्मी ऊतकों को गला रही है...आपके फेफड़ों में सुनहरी आकृति उभर रही है... आप अपने फेफड़ों की अशुद्धियों को गलते एवं विलीन होते देख सकते हैं... गलने की क्रिया जारी है...आपके फेफड़ों में सुनहरी आकृति उभर रही है... आप अपने फेफड़ों की अशुद्धियों को गलते एवं विलीन होते देख सकते हैं... अब वापस लौटते हैं...सुनहरा आकार नये ऊतकों में बदल जाता है...इस क्रिया को फिर से कीजिए...आपके चाहे अनुसार ही आपके फेफड़े आकार धारण कर लेते हैं...मजबूत फेफड़े...लचीले...पूर्ण...साफ...स्वस्थ...अब देखिये कि आपके फेफड़े नया आकार ले चुके हैं एवं सुनहरे प्रकाश में चमक रहे हैं।

मधुमेह के लिए– अब सुनहरे प्रकाश को मणिपुर चक्र से पैंक्रियाज (अग्न्याशय) की तरफ निर्देशित कीजिये। पैंक्रियाज के प्रति सजग होइये... अपने पेट की दीवार के बगल में...नाभि के स्तर तक...ऊतकों का एक लम्बा द्वीप...पैंक्रियाज को समुद्र में फैले अरबों नीले और हरे द्वीपों के रूप में देखिये। उन्हें ऊँचाई पर से देखिये...प्रत्येक द्वीप इन्सुलिन का उत्पादन करता है, लेकिन अभी यह ठीक से काम नहीं कर रहा था...आप देखते हैं कि प्रत्येक द्वीप चमक रहा है...द्वीपों पर अनन्त रूप से यह प्रकाश विद्यमान है... उस नीले समुद्र में अनेक हरे द्वीप हैं...प्रत्येक द्वीप प्राणों को वितरित कर रहा है...उष्ण एवं सुनहरा प्रकाश...आप देखते हैं कि प्रकाश की तीव्रता बढ़ती जाती है और द्वीप तीव्रता से टिमटिमाते लगते हैं...प्रत्येक टिमटिमाते हुए द्वीप में विस्फोट होता है...आप देखते हैं कि...प्रत्येक टिमटिमाते हुए द्वीप में विस्फोट होता है...ज्वालामुखी की तरह...सभी अशुद्धियों एवं अवरोधों का समापन होता है। अशुद्धियाँ गलकर शून्य में विलीन हो जाती हैं, नीले समुद्र में विलीन हो जाती हैं...पिघले हुए द्वीपों से आपकी धारणा पुनः उद्घाटित हुई...उष्ण एवं सनसनीपूर्ण ऊर्जा का सुनहरा भाव हमेशा वहीं था, परन्तु अब

तक वह आवरण से ढँका था...अब सब अशुद्धियाँ समाप्त हो गईं...अब वहाँ मूल रूप में द्वीप बाकी हैं...शुभ्र चमकीले द्वीप नीले समुद्र में विद्यमान हैं...क्रमशः सुनहरापन अपने केन्द्र को लौटता है। पूरा समुद्र सुनहरा हो जाता है। पूरा पैंक्रियाज (अग्न्याशय) शक्तिशाली ऊर्जा से भर गया है...पैंक्रियाज (अग्न्याशय) एवं द्वीप सुनहरे प्रकाश में चमकने लगते हैं।

दमा एवं मधुमेह पर शोध

25

एक परिचय

1977 में इस पुस्तक के प्रकाशन के बाद बिहार योग विद्यालय में दमा, मधुमेह, उच्च रक्तचाप तथा अन्य कई तथाकथित असाध्य मनोकायिक रोगों की चिकित्सा पर काम हुआ है। इन प्रयोगों से प्राप्त अनुभवों से हम आश्वस्त हुए हैं कि इस प्रकार की मनोकायिक दशाओं में आशातीत सुधार हेतु योग का सहारा लिया जा सकता है। इसी परिप्रेक्ष्य में इन विषयों पर शोध चल रहा है ताकि इन रोगों की उत्पत्ति और इनके उन्मूलन में योग की भूमिका पर विस्तृत जानकारी प्राप्त की जा सके।

कई लोग अपनी विविध प्रकार की व्याधियों के निदान हेतु योगोपचार का सहारा लेते हैं और हमें यह देखकर आश्चर्य होता है कि तुलनात्मक दृष्टि से अल्पावधि में ही उन्हें भरपूर लाभ प्राप्त हो जाता है। इसके लिए उन्हें ज्यादा कुछ नहीं करना पड़ता, बस अपने दैनिक आहार में थोड़ा परिवर्तन लाने के साथ कुछ योगासन और शिथिलीकरण के अभ्यास करने पड़ते हैं। योगासन से इतना ही लाभ नहीं होता। योग द्वारा मनोकायिकी को संतुलित किया जा सकता है और एलोपैथी एवं अन्य उपचारात्मक विधियों के सहयोग से हम अपने व्यक्तित्व के विविध स्तरों में नव शक्ति का संचार कर सकते हैं। योग में वह क्षमता है कि हमारी आधिभौतिक और आधिमानसिक दशाओं में अपनी प्रायोगिक एवं वैज्ञानिक विधियों के माध्यम से रूपान्तरण ला दे। इस दृष्टि से हमें योग के महत्त्व को समझने का प्रयास करना चाहिए।

यौगिक प्रक्रियाओं के द्वारा न केवल रोगोपचार किया जा सकता है, बल्कि इनका प्रतिरोधात्मक उपयोग भी किया जा सकता है और रोगजनित पीड़ा का उपशमन भी हो सकता है। योग सर्वदा स्वास्थ्यवर्द्धक है। हमें यह

स्मरण रखना चाहिए कि शरीर और मन का समग्रत: समन्वित स्वरूप ही हमारा स्वास्थ्य है। जब तक हम अपने समग्र व्यक्तित्व के विविध आयामों को सन्तुलित नहीं कर लेते तब तक पूर्ण स्वास्थ्य की कल्पना नहीं कर सकते। हमें सिर्फ अपनी व्याधियों से मुक्त नहीं हो जाना है, बल्कि यह भी सुनिश्चित करना है कि हमारा स्वास्थ्य निरन्तर ठीक-ठाक रहे और हम दुबारा रोगों की चपेट में न आएँ। इसके लिए हमें आजीवन सत्प्रयास करने होंगे। यौगिक दृष्टि से रोगमुक्त शरीर ही सुन्दर स्वास्थ्य का प्रतीक नहीं है; सुन्दर स्वास्थ्य का अर्थ है कि हमारे समग्र व्यक्तित्व का समन्वित विकास निरन्तर चलता रहे।

क्या दमा और मधुमेह असाध्य रोग हैं?

आमतौर पर सभी चिकित्साकर्मियों की यह धारणा है कि दमा और मधुमेह असाध्य रोग हैं और इसलिए दमा और मधुमेह से पीड़ित व्यक्तियों को इनके साथ जीने का मन बना लेना चाहिए। इस दृढ़मूल धारणा के कारण चिकित्साकर्मियों एवं रोगियों के मन में पराजय एवं हताशा की नकारात्मक भावना घर कर जाती है। यह घातक प्रवृत्ति हमें यह सोचने के लिए विवश कर देती है कि हमें जीवन भर बीमार रहना है। दमा, मधुमेह एवं अन्य मनोकायिक रोगों की चिकित्सा में यह प्रवृत्ति सबसे बड़ी बाधा है।

योग रोग के प्रति हमारे दृष्टिकोण में परिवर्तन का शिक्षण प्रदान करता है। रोग प्रकट होने पर हमें उससे कुछ सीख लेनी चाहिए। योग हमें न केवल रोग से छुटकारे की विधि से अवगत कराता है, वरन् उच्चतर चेतना और अनुभूति के जागरण हेतु हमारी अन्त:कायिक प्रक्रिया को स्फूर्त करता है। दमा के दौरे के कारण आयी मांसपेशियों की ऐंठन को शिथिल करना, श्वास-नलिका का विस्तार, जमे हुए कफ का निष्कासन, तन्त्रिका-तन्त्र का पुनर्सन्तुलन, चिन्ताहरण और अन्तर्काया से भावनात्मक मूल कारण का निवारण, यह सब यौगिक क्रियाओं द्वारा सम्पन्न हो सकता है।

मधुमेह के रोगियों में यौगिक प्रक्रियाओं के द्वारा रक्त-शर्करा के स्तर को घटाया जा सकता है, असंतुलित तन्त्रिकीय एवं चयापचयक प्रक्रियाओं को संतुलित किया जा सकता है और इस प्रकार मधुमेहग्रस्त व्यक्ति को अधिक बलशाली, कार्यकुशल एवं प्रसन्नचित्त बनाया जा सकता है।

चिरकालिक रोगों को यदि हम यों ही छोड़ दें तो वे अकथ्य यन्त्रणाओं को जन्म दे सकते हैं। मगर हम अपनी नकारात्मक प्रवृत्तियों को कुरेद कर और

अपनी संकल्प-शक्ति एवं दृढ़ निश्चय के बल पर रोग को समस्या के रूप में नहीं मानकर एक चुनौती के रूप में ले सकते हैं। इससे एक सीख और प्रेरणा लेकर हम अपना आत्मिक विकास कर सकते हैं। जब योग को हम अपने दैनिक जीवन से जोड़ देते हैं तो वह हमारा शोधन करता है, हमें बलिष्ठ बनाता है, हमारी जीवनशैली में परिवर्तन लाता है और हमें मनोकायिक व्याधियों से मुक्ति दिलाकर रुचिकर आरोग्य प्रदान करता है। यह दमा और मधुमेह अथवा उच्च रक्तचाप से ग्रस्त व्यक्तियों के लिए ही सच नहीं है, वरन् सामान्यत: स्वस्थ व्यक्तियों के लिए भी उतना ही हितकर है।

योग की आवश्यकता

मनोकायिक व्याधियों के निराकरण के लिए लीक से हटकर किसी नवीन विधि की आवश्यकता प्रतीत होती है। दमा और मधुमेह से पीड़ित व्यक्तियों को दिन-प्रतिदिन अपनी दशा में ह्रास दृष्टिगत होता है। लगातार बीमार रहने के कारण उनके जीवन की गुणवत्ता नष्ट हो जाती है। निरन्तर ओषधि सेवन के बावजूद वे जीवन के दैनिक क्रियाकलाप में खुलकर भाग नहीं ले पाते। योग का दावा है कि इस विषम स्थिति से निजात दिलायी जा सकती है।

योग की उपादेयता तभी समझ में आ सकती है जब हम आज की तिथि में विविध रोगों की चिकित्सा हेतु उपलब्ध उपचार-विधियों का परीक्षण कर देख लें कि वे हमारे लिए कितनी हितकर हैं। उदाहरणस्वरूप, दमा में तेज और प्रभावकारी ओषधियों का बार-बार सेवन करना पड़ता है। प्रभावी दवाओं में एक कार्टिसोन है जिसके कई अवान्तर प्रभाव हैं। उससे मधुमेह भी हो सकता है। यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें लाभ से अधिक हानि ही है। यदि योग द्वारा दमा में सुधार हो सकता है और इस कारण उपयोग में लायी जाने वाली तेज और अनिष्टकर दवाओं की मात्रा में कमी की जा सकती है तो कोई कारण नहीं कि हम दमा की चिकित्सा में योग को सम्मिलित न करें। लेकिन योग इतना ही करके शान्त नहीं हो जाता। उसकी भूमिका इससे कहीं अधिक है। हमारा अनुभव है कि योग की विधियों के अवलम्बन से कई बार रोग निर्मूल हो जाता है।

मधुमेह में कई चिकित्सकों की मान्यता है कि यह रोग अचिकित्स्य है और इसमें इन्सुलिन ही कुछ काम कर सकता है। आज यह सोच है कि जब तक रक्त-शर्करा स्तर को निम्न स्तर पर रखा जा सकता है तब तक रोगी को

अन्धता, स्नायु-रोग, हृदय-रोग, गुर्दा-रोग और पैरों के नासूर से बचाया जा सकता है। कतिपय चिकित्सकों एवं शोधकर्त्ताओं का विश्वास है कि इन्सुलिन के सेवन से ही रक्त की मिठास के स्तर को नियन्त्रण में रखा जा सकता है, परन्तु यह धारणा विवादास्पद है, क्योंकि इन्सुलिन लेने पर भी रोग में वृद्धि होती है और उसके परिणामस्वरूप अन्य प्रकार की जटिलताएँ उत्पन्न होने लगती हैं।

इन्सुलिन के अधिकाधिक सेवन से धमनियों में कड़ापन आने की शिकायतें धड़ल्ले से प्राप्त हो रही हैं जो हृदयाघात का एक प्रमुख कारण है। एक प्रयोग द्वारा यह प्रमाणित हुआ है कि शारीरिक व्यायाम एवं रेशेदार आहार के सेवन से इन्सुलिन की मात्रा बहुत कम की जा सकती है।

प्रयोगों द्वारा यह भी दर्शाया गया है कि योगाभ्यास से रक्त-शर्करा स्तर के साथ-साथ शारीरिक वजन एवं तनाव को कम किया जा सकता है जो मधुमेह को बढ़ाने में योगदान करते हैं। यदि योग की इस उपादेयता को स्वीकार किया जाय तो मधुमेह की चिकित्सा में योग को एक अत्यावश्यक कारक के रूप में अंगीकार कर लेना चाहिए। इन्सुलिन एवं मुँह द्वारा ली जानेवाली टिकियों से छुटकारा पा जाना साधारण बात नहीं है, क्योंकि इनके निरन्तर सेवन से शरीर-संस्थान पर पड़ने वाले कुप्रभावों से हम अवगत हैं।

जटिलता में वृद्धि के पूर्व योग

दुर्भाग्य से बहुधा बीमारी में पेचीदगी बढ़ जाने के बाद ही लोग योग की शरण में आते हैं। मधुमेह की प्रारंभिक अवस्था में जटिलता कम होती है। इसमें दर्द-पीड़ा का अनुभव नहीं होता। इसलिए लोग लापरवाही बरतते हैं। वे सामान्य चिकित्सा से संतुष्ट होकर अपनी जीवनशैली में बदलाव लाने, खान-पान में सुधार लाने या व्यायाम आदि आरंभ करने की आवश्यकता पर विचार नहीं करते। वे अपनी बीमारी की उस गहन अवस्था में योगाश्रम आते हैं जब योग के लिए रोग को संभालना कठिन हो जाता है।

इसलिए यह आवश्यक है कि हर व्यक्ति को यौगिक क्रियाओं की जानकारी रखनी चाहिए ताकि जरूरत पड़ने पर रोग की तीव्रता या जटिलता बढ़ने के पूर्व ही यौगिक क्रियाओं का सहारा लेकर इससे छुटकारा पाया जा सके।

योग की जानकारी जितनी जल्दी हो जाए उतना ही अच्छा, क्योंकि योग को जीवन में अपनाकर हम सफलता की कामना कर सकते हैं। इसीलिए

चिकित्सकों को चाहिए कि अपने मरीजों को परामर्श दें कि वे चिकित्सकीय मार्गदर्शन में अपनी दशा में सुधार लायें और रोग को जटिल होने से बचाने हेतु यौगिक क्रियाओं का उपयोग करें। इससे उसके शरीर और मन दोनों स्वस्थ एवं सबल होंगे।

सम्पूर्ण स्वास्थ्य

कई चिकित्सा पद्धतियाँ मनोकायिक व्याधियों एवं जीर्ण रोगों के निवारण में विफल हो गई हैं, क्योंकि वे रोगी के सूक्ष्म शरीर के तल का स्पर्श नहीं कर सकी हैं। हम इस भौतिक शरीर से बहुत कुछ अधिक हैं।

योग के अनुसार मानव-अस्तित्व के भौतिक, भावनात्मक, मानसिक, इन्द्रिय बोध से परे एवं आध्यात्मिक आयाम हैं और जब तक इनमें से प्रत्येक पक्ष का समुचित पोषण एवं विकास नहीं होगा, हमें संतुलित और समग्र स्वास्थ्य प्राप्त नहीं होगा। इस सन्दर्भ में अत्याधुनिक ओषधियों को योग का सहयोग अत्यन्त लाभकारी होगा। योग न केवल हमारे मन और व्यक्तित्व के अति सूक्ष्म आयामों की स्पष्ट रूप-रेखा प्रस्तुत करता है, वरन् हमें कुछ ऐसी विधियाँ प्रदान करता है, जिनसे हम अपने मन और चेतना को स्वस्थ एवं संतुलित रख सकते हैं।

अधिकतर चिकित्सा-प्रणालियाँ मन की व्याधियों को समझने में विफल रही हैं। वे मन के गहरे तलों तक नहीं पहुँच पायी हैं। उन्हें नहीं पता है कि मन कितना शक्तिशाली और व्यापक है। इस दिशा में मानसिक व्याधियों के नियन्त्रण में योग की भूमिका अद्वितीय है, क्योंकि यौगिक ध्यान की तकनीकें हमें मन की गहराइयों तक ले जाती हैं। यौगिक क्रियाएँ हमारे चेतन मन का विस्तार करती हैं और हमारे जागरण को बल प्रदान करती हैं। अन्त: जागरण प्राप्त होने पर हम अपने अन्तर्जगत् के सभी पक्षों को अधिक स्पष्टता से देख-समझ सकते हैं। हम जान सकते हैं कि वस्तुत: हम कौन हैं।

हमें स्मरण रखना चाहिए कि दमा, मधुमेह अथवा अन्य मनोकायिक व्याधियों के उपचार या निराकरण के लिए हमें बाह्य शारीरिक लक्षणों के परे जाकर देखना चाहिए। भावनात्मक दमन अथवा भावनात्मक असंतुलन, मानसिक चिन्ता, अवसाद और आंतरिक उथल-पुथल पर भी हमें गौर करना चाहिए और इस हेतु मन की गहराइयों की जानकारी रखने वाले विशेषज्ञ की आवश्यकता होगी। योग द्वारा हमें अपने मन तथा अन्य जनों के मन को

समझने में अच्छी सहायता प्राप्त होती है। चाहे कोई मरीज हो या योग शिक्षक अथवा चिकित्सक हो, सबको योग द्वारा यह दक्षता प्राप्त हो सकती है।

योग और ओषधि

पुनः हम इस बात को दुहराना चाहेंगे कि योग और अन्य चिकित्सा-पद्धतियाँ एक-दूसरे की पूरक हैं। वे परस्पर विरोधी नहीं हैं। एलोपैथी, होम्योपैथी, आयुर्वेद, एक्युपंक्चर और अन्य चिकित्सा-प्रणालियाँ मानव-जाति के लाभ के लिए कार्यरत हैं। सबका लक्ष्य व्याधियों का उन्मूलन है। योग की भूमिका उन चिकित्सा-विधियों की तरह उपचारात्मक नहीं है। इसकी भूमिका सुदृढ़ स्वास्थ्य प्रदान करने की है। विशुद्ध रूप से रोग-निवारण की पद्धति यह नहीं है। इसलिए मेडिकल चिकित्सा-प्रणाली की आवश्यकता रोग की प्रगति और ओषधि की खुराक को घटाने-बढ़ाने एवं अन्य जाँच-पड़ताल के लिए बनी रहती है। योग शरीर को शुद्ध कर उसे विश्रान्ति और सुदृढ़ स्वास्थ्य प्रदान करने का कार्य करता है। वह दवा की खुराक को घटा कर ऊतकों को मजबूत बनाने और उन्हें नवस्फूर्ति प्रदान करने की भूमिका निभाता है।

इस प्रकार दवा और योग एक-दूसरे के पूरक हैं। यदि हम दोनों प्रणालियों का सर्वोत्तम उपयोग करें तो मरीज और चिकित्सक दोनों लाभान्वित हो सकते हैं। इस हेतु रोगी को समय-समय पर अपने चिकित्सक के पास जाँच-पड़ताल के लिए जाते रहना चाहिए। इससे योग शिक्षक को भी पता चलता रहेगा कि उसकी पद्धति कितनी कारगर सिद्ध हो रही है। इस समीक्षा के आधार पर ओषधि और योग में सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है।

इसमें सन्देह नहीं कि दमा और मधुमेह में योगोपचार प्रभावकारी है। चिकित्सकों को यह स्मरण रखना चाहिए कि मनोकायिक रोगों के निदान में एलोपैथी अधिक कुछ नहीं कर पाती है। वह रोगी को पूरी तरह स्वस्थ और भला-चंगा नहीं बना पाती है। एलोपैथिक ओषधियों की अपनी सीमाएँ हैं, वे सब कुछ नहीं दे सकतीं।

योग-कक्षाओं में रोगी को अपनी आंतरिक आवश्यकताओं पर ध्यान देने का अधिक अवसर प्राप्त होता है।

उसे सामाजिक, मानसिक और भावनात्मक समस्याओं को यौगिक विधियों के माध्यम से सुलझाने का भी अवसर प्राप्त होता है। आसनों और

शिथिलीकरण के अभ्यासों से रोगी का अन्तर्मन विश्रान्ति प्राप्त करता है, जिससे उसका स्वास्थ्य सुन्दर और सुदृढ़ होता है।

योग और ओषधि के तालमेल से हम एक नये बेहतर विश्व का निर्माण कर सकते हैं जिसमें हमारी शारीरिक, भावनात्मक, मानसिक और अधिमानसिक आवश्यकताओं पर पूरा ध्यान दिया जा सकेगा। इसके द्वारा हम सम्पूर्ण स्वास्थ्य के लक्ष्य को प्राप्त कर आज की तिथि में उपलब्ध चिकित्सा-प्रणालियों की सीमाओं को अतिक्रमित कर स्वास्थ्य, सुख और शान्ति को उपलब्ध होंगे।

26

एक निजी अनुभूति

इस पुस्तक के अर्द्धभाग के लेखन के पश्चात् मुझे कुछ अनुभूतियाँ हुईं, जिनसे मुझे ज्ञान हुआ कि दमा का मूल कारण हमारे अन्तर्मन की गहराइयों में छुपा है। हमारी प्रवृत्तियों में, हमारी अवधारणाओं में, हमारी आत्मछवि में और साथ ही जन-साधारण के प्रति हमारे दृष्टिकोण में भी दमा के मूल कारण दबे पड़े हैं। जब तक हम अपने अस्तित्व के इन गहन क्षेत्रों का अवगाहन नहीं करेंगे और प्रभावकारी विधियों द्वारा अपने अन्तर्तम में परिवर्तन का अनुभव नहीं करेंगे तब तक हम अपने जीवन की समस्याओं का समाधान नहीं प्राप्त कर पायेंगे।

पुस्तक के मूल संस्करण के समय मेरी यौगिक क्रियाएँ चल रही थीं। स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के मार्गदर्शन में मैं आसन, प्राणायाम, हठयोग (षट्-कर्म) एवं ध्यान के अभ्यास सीख रहा था। इस बीच मैं दमा के लक्षणों से मुक्त होता हुआ अनुभव कर रहा था। कुछ ही महीनों के अभ्यास के बाद ओषधि पर मेरी निर्भरता समाप्त हो गई।

इस अवधि में मेरे ऊपर दमा के दौरे कम पड़ने लगे थे और जब कभी दौरे पड़ते भी थे तो उनकी तीव्रता कम रहती थी और उन्हें कुंजल, नेति, बीस मिनट तक ॐ मन्त्र के जप तथा गर्म काली कॉफी से संभाल लिया जाता था। इस काल में मैंने अपने दमा के प्रकोप में तीन प्रमुख घटकों की सक्रियता का अनुभव किया– आहार, एलर्जी (प्रत्यूर्जता), मनोवेग।

आहार– मेरी बीमारी को बढ़ाने में आहार एक गंभीर कारक था, क्योंकि अपनी पाचन-शक्ति से अधिक मात्रा में जब भी मैं दूध, दही, पनीर अथवा दुग्ध निर्मित अन्य पदार्थ, चावल, मिष्ठान्न या केले खा लेता था तो मेरे

शरीर का बलगम मोटा और सामान्य से अधिक होकर मेरे साइनोसाइटिस, राइनाइटिस, दमा और ब्रोन्काइटिस को बढ़ा देता था। रात में भारी भोजन, विशेष कर तेलयुक्त या तला हुआ भोजन, जिसमें दाल की मात्रा अधिक हो - लेने पर अपच हो जाती थी, पेट में गैस बढ़ जाती थी और निद्रावस्था में अथवा नींद आने के पूर्व दमे का दौरा शुरू हो जाता था।

अधिक मात्रा में भोजन लेना दमा के प्रकोप में वृद्धि का एक बड़ा कारण था। जब मुझे इस बात का एहसास हो गया कि भोजन की मात्रा और प्रकार से दमा का सीधा सम्बन्ध है, तो मुझे इस पर विचार करने के लिए विवश होना पड़ा कि कब कितनी मात्रा में किस प्रकार का आहार ग्रहण करना चाहिए, जिसका प्रभाव शरीर और मन के अनुकूल हो और साथ ही जो सुपाच्य हो। भोजन के कारण जब साँस लेने में कठिनाई बढ़ जाती थी तो तुरत कुंजल (व्याघ्र-क्रिया) कर लेने पर और उसके बाद कोई प्राणायाम अथवा ॐ जाप कर लेने से विश्रान्ति प्राप्त हो जाती थी। इसके साथ थोड़ी काली कॉफी की चुस्की ले लेने से शरीर में गर्माहट आ जाती थी।

ऊपर वर्णित अनुभवों की कई आवृत्तियाँ कर लेने के बाद हमारा आत्मविश्वास बढ़ जाता है और हम दमे के दौरे की संभावना के प्रति भयभीत नहीं होते। इस प्रकार की मनोदशा का निर्माण अपने-आप में एक उपचार-विधि है और तब दमे का प्रकोप होने पर हम घबराते नहीं, वरन् उसे एक चुनौती के रूप में स्वीकार कर हम यह जानने का प्रयास करते हैं कि दमा का दौरा कैसे आता है, दौरे के दरम्यान हमारे भीतर क्या घटित होता है और फिर इस आक्रमण से अपनी प्रतिरक्षा करने के उपायों पर विचार करते हैं। इसके साथ ही हम अपनी आवश्यकता का भी आकलन करते हैं। उदाहरण के लिए, दमा से पीड़ित व्यक्ति को यह सर्वदा ध्यान में रखना चादिए कि वह उतना ही बलगम पैदा करने वाला भोजन ले जितना वह सरलतापूर्वक पचा सके।

एलर्जी

दमा से आक्रान्त होने की अवस्था में मेरा दूसरा अनुभव हुआ कि एलर्जी उत्पन्न करने वाले घटकों की जानकारी प्राप्त कर उनसे निबटने का उपाय सीख लेना चाहिए। जब कभी धूल, धुँआ या एलर्जी पैदा करने वाले अन्य पदार्थों से सम्पर्क हो, जिससे राइनाइटिस और घरघराहट पैदा होने की संभावना हो तो जल-नेति की क्रिया कर लेने पर प्रकोप की तीव्रता कम हो जाती है।

ध्यान रखना है कि यौगिक क्रियाओं द्वारा एलर्जी का मुकाबला करते समय धैर्य को नहीं छोड़ना है। दौरे के समय हमें एन्टी हिस्टेमिन (एलर्जी को दबाने की दवा) से यथासंभव परहेज करना चाहिए। आक्रमण होने पर यौगिक विधियों का ही प्रयोग कर उसका उपशमन करना चाहिए। दौरा पड़ जाने पर उतना धैर्य, सहिष्णुता एवं साहस जुटा पाना कठिन हो जाता है और दवा से परहेज कर पूर्णत: यौगिक क्रियाओं पर निर्भर होने के लिए कठोर आत्मानुशासन एवं सुयोग्य मार्गदर्शक की आवश्यकता पड़ जाती है। हमें थोड़ी प्रतीक्षा करने के लिए तैयार रहना चाहिए और नेति, प्राणायाम एवं शिथिलीकरण की विधियों को प्रयोग में लाकर दमे की आक्रामकता को कम करने का प्रयास करना चाहिए, क्योंकि एन्टी हिस्टेमिन के कुप्रभावों से बचाव का यही एक मार्ग है।

मेरे प्रारम्भिक आश्रम-प्रवास-काल में धुँआ, धूल, पराग और अन्य कई प्रकार के प्रदाहजनक पदार्थों के सम्पर्क में आने के कारण मुझे छींक आने लगती और घुरघुराहट पैदा होती थी। ऐसी स्थिति आने पर मैं उपयुक्त योगाभ्यास कर अपने काम में लग जाता था। इस प्रकार एलर्जी के प्रभाव से उत्पन्न होने वाले रोगजनक लक्षण समाप्त हो जाते थे।

एलर्जी के कारण दमा होने में मानसिक प्रवृत्ति एक प्रमुख घटक है। अपने बारे में मैंने देखा कि जो स्थिति मेरे मनोनुकूल नहीं होती थी उसके प्रकट हो जाने पर मेरी छींक और घुरघुरी बढ़ जाती थी। आसन, प्राणायाम और विशेषकर ध्यान की क्रियाओं के द्वारा हम लोग अपनी इस मानसिक प्रतिक्रिया को अधिक स्पष्ट रूप से देख सकते हैं और तदनुसार प्रभावकारी ढंग से उसका प्रतिकार भी कर सकते हैं। अपने मन और व्याधि के अन्तर्सम्बन्ध को ठीक से समझ लेने पर उससे निबटना सरल हो जाता है। जब कभी कोई विषम स्थिति उत्पन्न हो जिसमें नकारात्मक मानसिक प्रतिक्रिया होने की संभावना हो, हमें तुरन्त अपना दृष्टिकोण बदल लेना चाहिए और घटना या स्थिति के यथार्थ पक्ष को स्वीकार कर लेना चाहिए। यथासंभव हमें वस्तुस्थिति के उज्जवल पक्ष को देखने की मानसिकता पैदा करनी चाहिए और उस स्थिति से कुछ सीखने के अवसर का लाभ उठाना चाहिए। दृष्टिकोण में परिवर्तन नहीं लाते तो हम उस स्थिति को सीधे खारिज कर देते, उससे कोई सबक नहीं लेते।

अपने मामले में अपनी चिकित्सा के दौरान मुझे कुछ लोगों के सम्पर्क से वितृष्णा (एलर्जी) हो गई थी। जब भी मैं उस सम्पर्क में आता मेरे भीतर

अज्ञात रूप से चिन्ता एवं असुरक्षा की भावना घर कर जाती, जिसका संबंध मेरे अतीत की किसी घटना से जुड़ा हुआ था। मुझे अन्दर-अन्दर महसूस होने लगता था कि इस सम्पर्क से अतीत जैसी कोई त्रासदी घटित हो जाएगी। कुछ अज्ञात कारणों से मन में उत्पन्न हुई इस आशंका के कारण मैं जोर-जोर से छींकने लग जाता था। बाद में मुझे पता चला कि छींक उस वितृष्णा (एलर्जी) के कारण आती थी।

बाद में चलकर ध्यान के दौरान मुझे इस बात की अनुभूति हुई कि उस चिन्ता और भय का कोई उपयुक्त कारण नहीं था। मेरे अनुभव में यह भी आया कि वह समस्या मेरे मन की उपज थी और यदि उसके प्रति अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन ले आऊँ, उसे नयी रोशनी में सकारात्मक दृष्टि से देखने लगूँ, उसे सेवा-भाव से स्वीकार कर लूँ और उससे कुछ सीख लेने की चेष्टा करूँ तो सारी बातें बदल जायेंगी। जब ऐसी आंतरिक अनुभूति हुई तो सम्पूर्ण परिदृश्य रूपान्तरित हो गया और मुझे छींक आनी बंद हो गयी। फिर उस सम्पर्क (एलर्जी) का कोई प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न नहीं हुआ।

संवेगात्मक विमुक्ति

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर में मेरे पदार्पण के कुछ मास बाद जब सब ठीक-ठाक चल रहा था और मुझे इस बात पर गर्व हो रहा था कि मेरा दमा बन्द हो गया है कि अचानक मेरे ऊपर दमा और श्वास नली शोथ का तीव्र आक्रमण हो गया। मैं इससे इतना आक्रान्त हो गया कि मैं चल-फिर नहीं सकता था, लगातार बिस्तर पर पड़ा रहने लगा।

एक दिन अपराह्न में अपने बिस्तर पर पड़े-पड़े मुझे एक अनुभूति हुई, जिसने मेरे जीवन को रूपान्तरित कर दिया। बिस्तर पर पड़ा हुआ बाह्य जगत् के सभी उद्दीपनों के प्रति सजग रहते हुए मेरे अर्द्ध चेतन मन में अतीत की एक स्मृति इतनी तीव्रता से उठी कि मुझे लगा कि मैं अपने बाल्यकाल में लौट गया। पुरानी स्मृतियाँ ताजी हो आयीं। सारे अनुभव वास्तविक से प्रतीत हो रहे थे। मुझे लगा कि मेरा दमा संवेगात्मक अंगघात (लकवा) के कारण पैदा हुआ है। मैं अपनी भावनाओं और संवेगों को प्रकट करने में असमर्थ था, क्योंकि मैं निराधार अज्ञात भय से पीड़ित था और अपने को असुरक्षित महसूस करता था। आत्मविश्वास में कमी के कारण विषम परिस्थिति से निबटने में घबराहट होती थी।

मैंने अच्छी तरह अनुभव किया कि पलायन और असमर्थता की यह प्रवृत्ति बचपन से ही मेरे भीतर घनीभूत हो गयी थी, जिससे मैं विकट और विषम परिस्थितियों का मुकाबला करने से कतराता रहता था। मेरे दमा का बस यही कारण था। यह अनुभव आने के बाद मेरे हृदय-केन्द्र (अनाहत-चक्र) में गहरी विश्रान्ति आ गयी और शारीरिक यन्त्रणा के बावजूद मेरे अन्तर्मन में परम आनन्द, परम शान्ति और तनावमुक्ति की अनुभूति हुई। मैं पूर्णत: भारमुक्त हो गया और इसी के साथ मेरा श्वास नली शोथ (ब्रोंकाइटिस) भी जाता रहा।

उसी समय से मेरे ऊपर दमा या श्वास नली शोथ का आक्रमण समाप्त हो गया। इन पंक्तियों के लिखने (सात वर्ष की अवधि) तक मेरे ऊपर कोई दौरा नहीं हुआ है। आज पूर्व जीवन का सिंहावलोकन करने पर मैं देखता हूँ कि रोग के मानस-कारण को दूर कर भय एवं चिन्ता से मुक्त होकर आत्मान्वेषण करने पर रोग निर्मूल हो जाता है। दमा का मूल कारण समाप्त हो जाने के बाद शरीर, मांसपेशियों और चयापचय पर आये दुष्प्रभावों को ही ठीक करना बाकी था।

रोगावशेष का निष्कासन

दमा के मूल कारण के विलोपन के बाद मांसपेशियों एवं तन्त्रिका-तन्त्र को स्वस्थ और सुपुष्ट बनाना बाकी रह गया था। दमा की अवधि में हृदय-केन्द्र के आस-पास तनाव और उपद्रव केन्द्रित था और मध्यपट के संचलन एवं पीठ की पंक्तियों में (टी॰ 4-8 के स्तर पर) विकृति आ गई थी। फलत: आगे की ओर झुकने की मुद्रा के साथ वक्ष एवं उदर के ऊर्ध्व भाग में सम्पीड़न (दबाव) हो गया था। इस क्षेत्र में दबाव रहने के कारण पाचन-क्रिया भी प्रभावित हो गई थी और कब्ज बढ़ी हुई थी।

बलगम के निष्कासन, कब्ज और साइनोसाइटिस तथा मध्यपट से संकुचन के निराकरण के लिए लघु शंखप्रक्षालन, कुंजल और नेति बड़े कारगर साबित हुए थे। इन क्रियाओं का प्राय: एक मास तक प्रतिदिन अभ्यास करना पड़ा था। बाद में यह क्रिया सप्ताह में एक या दो बार करनी पड़ती थी और बलगम में वृद्धि अथवा कब्ज के लक्षण प्रकट होने पर क्रिया की आवृत्ति बढ़ा दी जाती थी। तीन-चार मास के बाद इन क्रियाओं की आवश्यकता नहीं रह गई थी, फिर भी स्वास्थ्य-सम्वर्द्धन एवं योगाभ्यास के आनन्द को प्राप्त करने के लिए मैं इन अभ्यासों को करता रहा। परिणामत: मेरा स्वास्थ्य लौट आया और दिनानुदिन उसमें सुधार होता रहा। काल-क्रम से मैंने इन क्रियाओं

का अभ्यास बहुत कम कर दिया और रोग के प्रतिरोध एवं शरीर-संस्थान के शुद्धिकरण के लिए ही इनका अभ्यास समय-समय पर करने लगा।

शारीरिक मुद्राओं में आई त्रुटियों एवं विकृतियों के निराकरण के लिए सूर्य नमस्कार आदि के साथ शंखप्रक्षालन हेतु वर्णित आसनों का अभ्यास कारगर सिद्ध हुआ। इन आसनों का अभ्यास निजी आवश्यकताओं और शारीरिक स्थिति में आने वाले परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए किया जाने लगा। आसनों का क्रम-निर्धारण भी उसी दृष्टि से किया गया।

ताड़ासन, हस्त उत्थानासन, पाद हस्तासन, सर्वांगासन, चक्रासन, पश्चिमोत्तानासन, भुजंगासन, तिर्यक भुजंगासन और धनुरासन अधिक लाभदायक सिद्ध हुए थे। निश्चय ही इन सारे आसनों के बीच-बीच में विश्रान्ति हेतु शवासन किया जाता था ताकि सभी आसनों से अभिप्रेत लाभों को प्राप्त किया जा सके। इन अभ्यासों के कारण मध्यपट एवं पीठ का तनाव घटता गया, श्वसन-क्रिया में सुधार होने लगा, शरीर में नव ऊर्जा का संचार होने लगा और सम्पूर्ण संस्थान में विश्रान्ति एवं शक्ति का अनुभव हुआ।

एक अवसर पर जब मुझे धनुरासन के अभ्यास में थोड़ी दक्षता प्राप्त हो गई थी तो अचानक मेरी पीठ के ऊपरी भाग में शक्ति की एक ग्रन्थि खुल-सी गई और उसके फलस्वरूप मेरे नासापुट, जो विगत कई वर्षों से अवरुद्ध होकर बलगम छोड़ते रहते थे, बिलकुल खुल गये, उनकी सूजन भी जाती रही। श्वसन-क्रिया निर्बाध कुछ घण्टों तक चलती रही, परन्तु उसके बाद फिर पुरानी स्थिति वापस आ गयी। तत्पश्चात् आसन के नियमित अभ्यास से यह समस्या पूर्णतः समाप्त हो गई। श्वसन-प्रणाली बिलकुल मजबूत और सुव्यवस्थित हो गयी।

मध्यपट की ऐंठन और तनाव को कम करने में प्राणायाम बड़े प्रभावकारी सिद्ध हुए। दमा को निर्मूल करने में नाड़ीशोधन, भस्त्रिका और उज्जायी प्राणायाम यदि विभिन्न मुद्राओं एवं बंधों के साथ किये जायें तो उनका प्रभाव कई गुणा बढ़ जाएगा।

प्राणायाम को सिद्ध करने के लिए उदर श्वसन, वक्षीय श्वसन एवं हँसली श्वसन के तीनों चरणों को सिद्ध करना आवश्यक है। इन तीनों प्रकार के श्वसनों के बीच-बीच में विशुद्ध उदर श्वसन पर भी ध्यान करना चाहिए ताकि हमारे अर्द्धचेतन मन से उत्पन्न होने वाले उन तनावों का अवलोकन किया जा सके जो उदर प्रदेशीय मांसपेशियों में उथल-पुथल पैदा करते हैं। इस विधि का

उपयोग करने पर प्राणायाम में तो सुधार हुआ ही, साथ ही, दिन भर श्वसन-क्रिया को सुचारु रूप से चलाने की भी आदत बन गयी। वक्षीय श्वसन पर सजगता की क्रिया किसी भी समय कहीं पर भी की जा सकती है।

मध्यपट एवं मांसपेशियों के तनाव को कम करने में नौलि और अग्निसार की क्रियायें बड़ी लाभकारी सिद्ध हुईं। मस्तिष्क-वृन्त के विविध घटकों को कार्यशील बनाने में कुंजल और वस्त्र धौति क्रियाएँ बड़ी शक्तिशाली हैं। इन क्रियाओं से तन्त्रिका-तन्त्र भी ठीक से काम करने लगता है।

अन्ततः हठयोग, आसन और प्राणायाम, अजपा जप, अन्तर्मौन और क्रिया-योग के साथ मिलकर हमारे अर्द्ध-चेतन मन के तनावों को दूर करते हैं। आसन-प्राणायाम और ध्यान की इन क्रियाओं से मानसिक द्वन्द्व मिटते हैं, संवेगात्मक संतुलन स्थापित होता है और हमारी अन्तर्दृष्टि विकसित होती है जिससे हमारा जीवन-पथ प्रशस्त होता है।

इन सभी विधियों के समन्वित एवं संतुलित उपयोग से सुघड़ स्वास्थ्य एवं शान्ति के साथ जीवन में पूर्णता एवं आनन्द की अनुभूति प्राप्त होती है।

27

दमा एक समग्र दृष्टि

कई लोगों की धारणा है कि दमा एक असाध्य रोग है। बच्चों को सहज ही इससे छुटकारा मिल जाता है, फिर भी उनके फेफड़े कमजोर हो जाते हैं और रोग के लक्षण पुन: प्रकट हो सकते हैं; सर्दी, खाँसी, श्वसन-नली शोथ और एलर्जी के दौरे पड़ सकते हैं। यौगिक दृष्टि से दमा को सरल विधि से संभाला जा सकता है और उसके उपर्युक्त लक्षणों को कम कर रोग से पूरी तरह मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। फेफड़े को मजबूत कर, तन्त्रिका-तन्त्र को संतुलित कर और दमा के मूल कारण, संवेगात्मक तनावों को दूर कर यह स्थिति प्राप्त की जा सकती है। ओषधि के साथ सहयोग कर योग द्वारा दमा से छुटकारा पाया जा सकता है। हमारी धारणा है कि दमा बहुमुखी रोग है जिसका समाधान बहुमुखी विधियों द्वारा किया जाना चाहिए। अभी तक इस रोग के कई पहलुओं पर ध्यान नहीं देने के कारण पारम्परिक चिकित्सा-पद्धति इसके उन्मूलन में विफल रही है। इन घटकों और उपेक्षित पक्षों को ठीक से समझ कर उनका समुचित उपाय कर लेने पर दमाग्रस्त व्यक्ति को अपनी त्रासद स्थिति से बड़ी राहत मिल सकती है।

हँफनी और साँस के फूलने से दमा में जो असह्य पीड़ा होती है उसे झेलनेवाला व्यक्ति इस बात को अच्छी तरह समझ सकता है कि दमा की चिकित्सा का कोई बेहतर तरीका अपनाया जाए। ऑस्ट्रेलिया में प्रत्येक दस शिशुओं में एक एवं प्रत्येक बीस वयस्कों में एक व्यक्ति दमा से ग्रस्त होता है। वहाँ हर साल 400 से 500 लोग दमा से मर जाते हैं। अमेरिका में अनुमानत: एक करोड़ दमा से ग्रस्त हैं। औद्योगिक प्रदूषण से युक्त भारतीय नगरों और इस्पात एवं खान वाले शहरों में दमा का भारी प्रकोप है।

दमा की प्रक्रिया

दमा के बारे में एक बात जो लोग अभी तक ठीक से नहीं समझ पाये हैं, वह है– "दमा मात्र छाती का रोग नहीं है, पूर्णतः नहीं तो अधिकांशतः यह अति संवेदनशीलता, अति-प्रतिक्रियात्मकता और हार्मोन के स्राव में असंतुलन का प्रतिफल है, जो कि श्वसन नली में एक बाह्य लक्षण के रूप में प्रकट होता है। इसका समाधान जैविक नियमन और रोगी के प्रति समग्र दृष्टि रखने पर होगा।" *[1] यही दृष्टि योग की भी है और मनोकायिक रोगों के निदान हेतु यही स्वस्थ दृष्टिकोण है। मनोदैहिक तन्त्रकीय प्रतिरक्षण विज्ञान इस तथ्य पर शोध कर रहा है कि किन कारणों से मन शरीर को दमा रोग के आक्रमण हेतु प्रभावित करता है।

दमा के प्रकोप में श्वसन-मार्ग में रुकावट पैदा हो जाती है और संवेग, दबाव, एलर्जन, सिगरेट का धुँआ, व्यायाम, श्वसन-नली में संक्रमण, भाप, धूल, मादक द्रव्य, ऐस्प्रिन आदि ओषधि और मौसम तथा वायुमण्डल में परिवर्तन से फेफड़े में अति प्रबल उत्तेजना पैदा होती है। सामान्य जनों पर इनका कुप्रभाव नहीं पड़ता, परन्तु दमा वाले लोगों के फेफड़ों की नलियों में संकुचन उत्पन्न हो जाता है। बलगम में गाढ़ापन आ जाता है, पेशियों में जकड़न पैदा हो जाती है, परिणामतः जोरों की घरघराहट होने लगती है और शारीरिक एवं मानसिक कष्ट बेतरह बढ़ जाते हैं।

दमा के प्रकोप के समय श्वसन में तीव्रता आ जाती है, साँस तेज हो जाती है, पर साँस छोड़ने में कठिनाई बढ़ जाती है, जिसका कारण श्वसन-नली में बलगम का बढ़ जाना है। बलगम के कारण श्वास-नली जाम हो जाती है और साँस छोड़ने के पूर्व हाँफना पड़ता है। इससे रोगी की परेशानी बढ़ जाती है। मध्यपट में अति संकुचन के कारण उदरीय श्वसन कठिन हो जाता है और सहायक पेशियों की मदद से वक्षीय श्वसन करना पड़ जाता है और इस अधूरी श्वसन-क्रिया से पूरे शरीर-संस्थान में थकावट आ जाती है।

दमा के दौरान फेफड़ों में गैस के विनिमय में गतिरोध उत्पन्न हो जाता है और रक्त तथा रक्त ओषजन के स्तर में गिरावट के कारण हँफनी और कमजोरी बढ़ जाती है। वायुरोध वाले क्षेत्र में रक्त-संचरण में ह्रास हो जाता है।

दमा में पेशियों में सामान्य तौर से और मध्यपट में विशेष रूप से जकड़न पैदा हो जाती है, फलतः शारीरिक गतियों में झटके पैदा होने लगते हैं। चलने-फिरने और उठने-बैठने की भंगिमा में विकृति आने के कारण श्वसन-शक्ति

और क्षीण हो जाती है, क्योंकि झुककर चलने से तन्त्रिका-तन्त्रों पर बुरा असर पड़ता है।

श्री लोवेन और प्राण-ऊर्जा विज्ञान के अनुसार मांसपेशियों में निरन्तर तनाव बना रहना और चाल-ढाल में विकृति आ जाना हमारे संवेगात्मक एवं आन्तरिक तनावों का द्योतक है।[*2] दमा के रोगी अपनी भावनाओं और विशेषकर अपने क्रोधावेग को प्रकट करने से बचना चाहते हैं।[*3] दमा के रोगी शब्दों और भावों के द्वारा आक्रामकता से परहेज करना चाहते हैं। उसके बदले वे श्वसन की असामान्य प्रक्रिया का उपयोग करते हैं।[*4]

दमा स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र एवं कतिपय रासायनिक द्रव्यों यथा हिस्टैमिन, मन्द क्रियात्मक पदार्थ ए, काइनिन्स, प्रोस्टाग्लैन्डिस और सिरोटोनिन के द्वारा अपने प्रभाव प्रकट करता है। ये सारे रासायनिक द्रव्य श्वास-नली-अवरोध उत्पन्न करते हैं। ऐसा संभव प्रतीत होता है कि दबाव, संवेगात्मक तनाव, दुश्चिन्ता और विविध मनोवैज्ञानिक कारक मस्तिष्क के केन्द्रीय नियन्त्रण केन्द्रों के माध्यम से कार्य करते हैं, विशेषकर प्रिफ्रौन्टल कोर्टेक्स, लिम्बिक और रेटीक्यूलर एक्टीवेटिंग प्रणाली और हाइपोथैलमिक पिट्यूटरी एक्सिस की भूमिका प्रधान है।

हम इस बात से अवगत हैं कि दबाव मस्तिष्क की इस संरचना को अस्त-व्यस्त कर रोग को जन्म दे सकता है।

हमारी तन्त्रिका-प्रणाली के कार्यकलाप में दुर्बलता से दमा पैदा होता है और यह दुर्बलता दबाव तथा मानसिक तनाव के कारण अनुकम्पी अधिवृक्क नाड़ी-संस्थान के अति कार्यशील होने से उत्पन्न होती है। अनुकम्पी एवं परानुकम्पी नाड़ी-संस्थान में असंतुलन के साथ-साथ पेशीय-ग्राहकों में आये असंतुलन के कारण भी दमा का प्रकोप होता है।

संक्षेप में, श्वसन-प्रणाली में व्यवधान, रक्त में ओषजन की आपूर्ति में कमी, मध्यपट एवं श्वसन-तन्त्र में अति संकुचन, शरीर की मांसपेशियों में जकड़न, झुककर चलना-फिरना, संवेगात्मक दमन, दुश्चिन्ता एवं तन्त्रिका तन्त्र में असंतुलन के कारण दमा का आक्रमण होता है।

निदान के प्रति एक समग्र दृष्टि

दमा के विभिन्न कारकों पर विचार करने से स्पष्ट है कि इस रोग से संबंधित संवेगात्मक, मानसिक, मांसपेशीय अथवा श्वसन-संबंधी समस्याओं का

निदान मेडिकल चिकित्सा-प्रणाली के अन्तर्गत उपलब्ध नहीं है। ओषधियों का उपयोग, एलर्जीरोधक दवा और फिजियोथेरापी इस रोग के उपचार के लिए पर्याप्त नहीं हैं, क्योंकि ये उपचार लक्षणों के आधार पर दर्द निवारण के लिए किये जाते हैं। इससे रोग का उन्मूलन संभव नहीं है।

जापान के डॉ. जॉन गोयके का कहना है कि मेडिकल प्रणाली से किये जाने वाले उपचार में कई मनोवैज्ञानिक, दैहिक-मानसिक विशिष्टताओं की उपेक्षा कर दी जाती है, जिसके फलस्वरूप दमा का उपचार अधूरा रह जाता है।*[5] उनका यह भी कथन है कि भले ही दमा की मेडिकल चिकित्सा हेतु उच्च स्तरीय प्रक्रियाएँ निर्मित की गयी हैं, परन्तु रूढ़िवादी चिकित्सा के अन्तर्गत स्टेरायड्स और ब्रोन्कोडाइलेटर्स आदि का उपयोग अस्थायी राहत के लिए किया जाता है जिस पर कई प्रश्न-चिह्न लग जाते हैं। इन औषधों का निरन्तर उपयोग करने से दवा की लत पड़ जाती है और दवा पर रोगी की निर्भरता बढ़ जाती है। इन दवाओं के निरन्तर प्रयोग से शरीर संरचना पर पड़ने वाले प्रभावों पर शोध होगा तो निश्चय ही उसके निराशाजनक परिणाम सामने आयेंगे। डॉ. गोयके का सुझाव है कि दमा की चिकित्सा पर एक व्यापक समेकित दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। उन्होंने मनोदैहिक कारकों की सूची इस प्रकार दी है जिन पर अभी ध्यान नहीं दिया गया है–

1. अधिकतर दमा के मरीज दमित मनोभावों एवं क्रोध तथा दुश्चिन्ता जैसी भावनाओं की अभिव्यक्ति में अपनी असमर्थता का परिचय देते हैं। उनमें अपनी आत्म-चेतना का प्रबल बोध एवं परनिर्भरता का भाव भरा होता है।
2. इस संवेगात्मक दमन के कारण सामान्य मांसपेशियों में तनाव उभरता है जिसके कारण चलने-फिरने की भंगिमा में विकृति आती है।
3. ये तनाव श्वसन पेशियों के संकुचन एवं विशेषरूप से मध्यपट की जकड़न में परिलक्षित होते हैं।
4. डॉ. गोयके का कथन है कि पेशियों का तनाव संभवत: दमा के प्रकोप के कारण नहीं होता, वरन् पेशियों का तनाव ही संभवत: दमा के प्रकोप को तीव्रता प्रदान करता है। यह लक्षण दुष्चक्र की तरह कार्य करता है।*[6]
5. असामान्य श्वसन के कारण भी दुश्चिन्ता और दमा के दौरे की अधिक वृद्धि होती है। यह दुष्चक्र का ही काम करता है, दोनों एक-दूसरे के सहायक हैं।

डॉ. गोयके ने सभी बिन्दुओं पर विचार कर दमा के निराकरण हेतु समेकित कार्य-योजना निम्न प्रकार निर्धारित की है–

1. आक्रामकता एवं व्यथा की अभिव्यक्ति को प्रोत्साहित किया जाय।
2. दुश्चिन्ता की अभिव्यक्ति, आत्म-चेतना की तीव्रता में न्यूनता और आत्मनिर्भरता एवं आत्म-नियन्त्रण में वृद्धि की विधियाँ रोगी को सिखायी जायें।
3. पेशियों की तनाव-मुक्ति की विधियाँ बतायी जायें।
4. उठने-बैठने और चलने-फिरने की भंगिमाओं में आयी विकृति को शुद्ध करने हेतु सही आसन बताये जायें।
5. श्वसन-तंत्र की असंगति को शिथिल कर मध्य-पटीय श्वसन की प्राकृतिक विधि को अपनाया जाय।
6. बलगम को बाहर निकालने की विधि बतायी जाए।

हमारा अनुभव है कि उपर्युक्त कार्य-योजना हमारी यौगिक कार्यप्रणाली से मेल खाती है जो दमा से छुटकारे के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

28

दमा-एक समग्र उपचार विधि

समग्र दृष्टि से तैयार की गई यौगिक विधि से दमा का उपचार करने से न केवल रोग से मुक्ति प्राप्त होती है, वरन् नूतन जीवन-दिशा की उपलब्धि के लिए मस्तिष्क, मन और देह पर नियन्त्रण के विकास का एक सुनहरा अवसर हाथ आ जाता है।

इस प्रकार दमा हमारे लिए एक अभिशाप न होकर वरदान सिद्ध होता है जिससे हमारे भीतर एक श्रेष्ठतर मानव के रूप में ढलने की ललक पैदा होती है और तदनुकूल हम अपने में बदलाव लाने के लिए सचेष्ट हो जाते हैं।

दमा के विविध आयामों के अनुरूप सभी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु शायद ही अन्य कोई उपचार-विधि इतने प्रकार की तकनीकों का जुगाड़ बिठा पायी है। यह सोचना हमारी भूल होगी कि कोई एक उपचार-पद्धति या एक ओषधि इतनी प्रभावी होगी कि वह हमारे शरीर और मन को इस प्रकार प्रभावित कर दे कि हम दमा के कष्ट से बिलकुल ही मुक्त हो जायें। योग-पद्धति में भी हम पेशीय तनाव, श्वसन संबंधी विकृतियों, गहरे संवेगात्मक, मानसिक एवं तन्त्रिका-संस्थान संबंधी असंतुलन को शुद्ध करने के लिए विभिन्न प्रकार की तकनीकों का उपयोग करते हैं।

इस अध्याय में दमा उपचार के लिए विश्रान्ति एवं श्वसन विधियों पर हम कई शोध-पत्र प्रस्तुत करेंगे। दमा-उन्मूलन के लिए समन्वित एवं संतुलित रूप से तैयार की गयी उन समस्त शक्तिशाली विधियों की रूपरेखा एवं कार्यक्रमों की हम विस्तार से चर्चा करेंगे। दमा से छुटकारा पाकर हम पुनः स्वस्थ एवं सक्रिय जीवन में प्रवेश कर सकेंगे।

विश्रान्ति

विश्रान्ति एवं उससे सम्बन्धित कई प्रकार की विधियों पर अनेक अध्ययन किये गये हैं। हालाँकि इनके परिणाम उत्साहजनक रहे हैं, किन्तु कुछ मामलों में परीक्षणों के परिणाम विधि एवं विश्लेषण की अपूर्णता के कारण संतोषजनक नहीं रहे।

अर्सिकिन-मिलिस और स्कोनेल ने पेशीय तनावों के शिथिलीकरण, विधिपूर्वक असंवेदीकरण, बायोफीडबैक, सहायता प्राप्त विश्रान्ति एवं ध्यान से सम्बन्धित कई अध्ययनों की समीक्षा की है। मात्र सरल पेशीय विश्रान्ति से दमा-रोग की चिकित्सा में कोई लाभ प्राप्त होता नहीं प्रतीत हुआ। ध्यान एवं स्वजात प्रशिक्षण के द्वारा मानसिक विश्रान्ति और विधि पूर्वक असंवेदीकरण की क्रियाओं द्वारा दमा में स्पष्ट सुधार परिलक्षित हुआ। इन शोधकर्त्ताओं का कथन है कि ई. एम. जी. बायोफीडबैक विश्रान्ति प्रशिक्षण में उपयुक्त सहायता प्रदान करता है।

शोधकर्त्ता गोयकी के अनुसार दमा में अल्पकालिक राहत के लिए शिथिलीकरण एवं बायोफीडबैक प्रयोग के तौर पर लाभदायक सिद्ध हुए हैं, किन्तु दमा से छुटकारे के लिए चिरकालिक लाभ की आशा नहीं की जा सकती है।

इस प्रकार के शोध बड़े उपयोगी हैं। फिर भी, व्यावहारिक दृष्टि से इन शोधों की पारस्परिक उपयोगिता की तुलना करने से बेहतर होगा कि हम देखें कि प्रत्येक विधि का दमा के उपचार में समेकित प्रभाव कैसा होता है। उदाहरणार्थ, पेशीय तनाव जो हमारी मानसिक विश्रान्ति में बाधक होते हैं, उन्हें दूर करने के लिए हमें मानसिक शिथिलीकरण के पूर्व पेशीय शिथिलीकरण की क्रिया को पूरा करना चाहिए। योग की यही विशिष्टता है कि यह विविध क्रियाओं को समेकित कर हमें छूट देता है कि हम इनका प्रयोग विधिपूर्वक क्रमानुसार करें ताकि विभिन्न स्तरों पर इनका लाभ हमें प्राप्त हो सके।

यौगिक दृष्टि से सम्पूर्ण यौगिक प्रशिक्षण का एक प्रमुख घटक शिथिलीकरण क्रिया है, किन्तु दमा की चिकित्सा में इसकी पूरक भूमिका है। अत: अन्य यौगिक विधियों के साथ इसका उपयोग करना चाहिए। आसन, प्राणायाम और षट्कर्म तन्त्रिका-तन्त्र और अन्त:स्रावी ग्रन्थियों को प्रभावित करते हैं जिससे दैहिक, संवेगात्मक, मानसिक एवं अतिमानसिक स्तरों पर विश्रान्ति प्राप्त होती है। इन क्रियाओं के बीच-बीच में शिथिलीकरण किया

जाता है जिससे तनावों, संवेगों एवं दमित ऊर्जाओं की विमुक्ति होती है और फलस्वरूप हमारे ऊतकों, शारीरिक प्रणालियों और अन्य कार्यों में सक्रियता आती है। इन सबका समेकित प्रभाव हमारे बाह्य और आन्तरिक स्वास्थ्य पर पड़ता है और रोगी को नवजीवन प्राप्त होता है। शिथिलीकरण-क्रिया की अवधि में आसन, प्राणायाम एवं हठयोग के लाभों की अनुभूति प्राप्त होती है। शरीर और मन की विश्रान्ति के पश्चात् हम योग के दूसरे चरण की क्रियाओं की ओर अग्रसर होते हैं जो हमारे संवेगात्मक एवं अति मानसिक स्तरों की व्याधियों को निर्मूल करती हैं।

शिथिलीकरण की विधियों के अध्ययन के क्रम में हमें उसके सभी पहलुओं को ठीक से समझ लेना चाहिए। शिथिलीकरण द्वारा हम स्नायविक संतुलन को ठीक नहीं कर सकते हैं, क्योंकि दमा-रोग में परानुकम्पी नाड़ी संस्थान में गतिशीलता बढ़ जाती है। इसलिए योगियों द्वारा हठ योग, आसन और प्राणायाम की विधियों को उपयोग में लाया जाता है जिससे बाह्य पेशियों को विश्रान्ति प्राप्त होती है, बलगम का निष्कासन होता है और दमित संवेगों के निर्मूलन में मदद मिलती है। शिथिलीकरण एवं ध्यान की क्रियाओं के साथ आसन, प्राणायाम और षट्कर्म का अभ्यास करने से अनुकम्पी नाड़ियों की गतिविधि में वृद्धि होती है। इन विधियों के उपयोग से परानुकम्पी नाड़ी की गति प्रबल होती है, चयापचय में शिथिलता आती है और इस अवस्था में हम पूर्ण विश्रान्त होकर नियमित अवस्था में अपने संवेगात्मक और मानसिक तनावों के उत्थान को ध्यानपूर्वक अवलोकित कर उनका निदान कर सकते हैं। इस प्रकार हम विधि-विधानपूर्वक क्रमश: अपने केन्द्रीय तन्त्रिका-तन्त्र को सुरक्षात्मक ढंग से संतुलित कर अपनी श्वसन प्रणाली को स्वस्थ और समरस बना सकते हैं।

श्वसन विधि का पुनर्प्रशिक्षण

ओषधि द्वारा दमा की चिकित्सा-विधि में भौतिक-चिकित्सा (फिजियोथेरापी) को सम्मिलित किया गया है। इसका उद्देश्य है श्वास-निष्कासन की क्रिया को शिथिल और दीर्घ करना ताकि दूसरी साँस लेने के पूर्व फेफड़े पूरी तरह खाली हो जायें, वक्षीय श्वसन के स्थान पर उदरीय श्वसन को पुनर्स्थापित किया जाय, सामान्य पेशीय तनावों को कम किया जाय और पसलियों और वक्षीय प्रदेश को सुगठित किया जाय, साथ ही हमारे उठने-बैठने एवं चलने-

फिरने की भंगिमा में आयी विकृति को ठीक किया जाय। भौतिक चिकित्सा (फिजियोथेरापी) में गहरे श्वसन संबंधी अभ्यासों का उद्देश्य फेफड़े की शक्ति में वृद्धि, वायुमार्ग में विस्तार, श्लेष्मा-अवरोधों का निष्क्रमण और श्वसन-प्रणाली को पुनर्व्यवस्थित करना है।

भौतिक चिकित्सा के कार्यकलाप फेफड़ों के पुनर्प्रशिक्षण और शरीर की बाह्य पेशियों एवं शिराओं की देखभाल तक केन्द्रित है। इस शरीर-क्रियात्मक विज्ञान की मान्यता है कि दमा फेफड़ों का रोग है, जिसका सम्बन्ध एलर्जी एवं संवेगात्मक घटकों से भी है। यह संवेगात्मक उथल-पुथल को प्रमुख घटक के रूप में नहीं स्वीकार करता, जो फेफड़ों की अति संवेदनशीलता में वृद्धि करती है, साथ ही प्रतिरक्षण प्रणाली को भी प्रभावित करती है। मनो-स्नायविक प्रतिरक्षण विज्ञान के विकास के साथ ही, जो मन-संवेग-देह के बीच सम्पर्क-सूत्र की व्याख्या तलाश रहा है, यह मान्यता अधिक लोकप्रियता प्राप्त करती जा रही है। अभी तक मेडिकल चिकित्सा में इस मान्यता को स्वीकृति नहीं प्राप्त हो सकी है। मेडिकल चिकित्सा-व्यवसाय में निरत लोगों द्वारा भी फिजियोथेरापी को पूरी तरह स्वीकार नहीं किया गया है। वे ओषधि-चिकित्सा पर ही भरोसा करते हैं।

कई प्रयोगों एवं प्रदर्शनों से यह पता चलता है कि दमा की चिकित्सा में फिजियोथेरापी की अच्छी भूमिका रही है। लिविंग्स्टोन और गिलेस्पी ने श्वास लेने में कम समय और श्वास छोड़ने में अधिक समय लगने की विधियाँ बतायी हैं, जो योग के नाड़ी-शोधन प्राणायाम के समतुल्य है। उन्होंने गुंजन के साथ मुँह से साँस छोड़ने, सीटी बजाने अथवा फुफकार की आवाज के साथ साँस छोड़ने की तरकीबें भी बतायी हैं, जो योग के भ्रामरी प्राणायाम से मिलती-जुलती हैं। इन विधियों के प्रयोग से आधे-से-अधिक रोगी दमा के लक्षणों से मुक्त हो गये और 69% रोगियों पर इनका प्रभाव उत्साहजनक रहा। इन विधियों के उपयोग से रोगियों के आत्म-विश्वास में वृद्धि हुई और ओषधि पर उनकी निर्भरता समाप्त हो गई। दमा के संभावित प्रकोपों से निबटने के लिए वे इन विधियों की मदद लेने लग गये। इन अभ्यासों के निरपेक्ष मूल्यांकन से ज्ञात हुआ कि प्रयोगकर्त्ताओं के मध्यपट की गतिविधि में वृद्धि हुई और उनकी छाती के विस्तार में सुधार हुआ।

बराच के प्रयोगों के अनुसार गुंजन अथवा भिनभिनाहट की ध्वनि उत्पन्न करने से श्वास-नली का संकुचन घटता है। यह कोष्ठकों को दक्षतापूर्वक

खाली करता है और श्वास-त्याग के समय श्वसन-नलिका की विफलता को रोकता है। बराच ने शुद्ध उदर-श्वसन की क्रिया बतायी थी और उसने उदरीय पेशियों के शिथिलीकरण पर अधिक बल दिया था।

अलान ने तीव्र श्वास और प्रश्वास की क्रिया बतायी है जो योग के कपालभाति प्राणायाम से मेल खाती है। अपने प्रयोगों से उसे ज्ञात हुआ कि मध्य पटीय श्वसन से श्वसन एवं प्राणिक क्षमता में अधिकतम वृद्धि होती है और रक्त-गणना में परिवर्तन लक्षित होता है।

एरिक्सन ने प्रश्वास (साँस छोड़ने) के समय उदरीय पेशियों को मेरुदण्ड की ओर खींचने पर बल दिया है। यह क्रिया कपालभाति और भास्त्रिका प्राणायाम से मिलती-जुलती है।

फीन और उसके सहयोगियों ने भौतिक चिकित्सा (फिजियोथेरापी) के प्रयोगों से यह निष्कर्ष निकाला कि इससे छाती के विस्तार में सुधार होता है और मध्य पटीय श्वसन की क्षमता में वृद्धि होती है जिसके फलस्वरूप दमा के रोगी में सुरक्षा का भाव जाग्रत होता है और वह दमा के साधारण प्रकोपों को सहजता से झेल लेता है।

टोकियो के तोरामन अस्पताल में हाल में किये गये एक अध्ययन से पता चला है मध्य पटीय श्वसन से वात-स्फीति (एम्फिसीमा) में भी लाभ प्राप्त होता है, क्योंकि इससे रोगी अधिक-से-अधिक साँस खींच सकता है। इस प्रकार के श्वसन के लिए उदर एवं छाती के निम्न भाग का शिथिलीकरण आवश्यक है।

यह कौतूहल का विषय है कि भौतिक चिकित्सा से प्राप्त होने वाले लाभ से सम्बन्धित कई उत्साहवर्द्धक आँकड़े उपलब्ध होने के बावजूद चिकित्सक उनका लाभ नहीं उठा पा रहे हैं। संभवत: इस विधि का प्रचार-प्रसार कम होने अथवा भौतिक चिकित्सा हेतु उचित सुविधा के अभाव में इसकी लोकप्रियता में वृद्धि नहीं हो पायी है।

भौतिक चिकित्सा (फिजियोथेरेपी) बनाम योग

गोयकी के अनुसार "भौतिक चिकित्सा ने ओषधि आधारित उपचार के स्थान पर अच्छा प्रभाव पैदा किया है और दमा रोगियों को अपने बल पर रोग के प्रकोप से निबटने की संभावना बतायी है, किन्तु इस उपचार-विधि की अपनी सीमाएँ हैं, यह उपचार-पद्धति यन्त्रोन्मुख है।" उनका कथन है कि अपने से भौतिक चिकित्सा संवेगात्मक दमन, दुश्चिन्ता-निष्कासन अथवा पेशीय

शिथिलीकरण के सम्बन्ध में यथेष्ट उपाय नहीं करती है। जहाँ तक उठने-बैठने की भंगिमाओं को दुरुस्त करने, श्वास-शिथिलीकरण एवं श्लेष्मा-निष्कासन की बात है, इनके लिए बेहतर उपाय और प्रभावकारी वैकल्पिक विधियाँ उपलब्ध हैं। इस हेतु गोयकी ने योग की वैकल्पिक प्रणाली को उद्धृत किया है जो समग्र चिकित्सा-पद्धति की कसौटियों पर पूरी तरह खरी उतरती है। भौतिक चिकित्सा में योग से अधिक यान्त्रिक उपकरणों का प्रयोग किया जाता है, जिसमें बाट (भार), बेल्ट और हाथ की मालिश द्वारा श्वास-निष्कासन में सहायता पहुँचाई जाती है, छाती को थपथपा कर श्लेष्मा को ढीला किया जाता है, भंगिमा को ठीक कर श्लेष्मा का निष्कासन किया जाता है और उदरीय अंगों के भार एवं गुरुत्वाकर्षण का उपयोग कर श्वास लेते समय मध्यपट के उत्थान में मदद पहुँचाई जाती है।

यद्यपि सर्वांगासन, विपरीतकरणी मुद्रा, पादहस्तासन और प्रणामासन (व्रजासन में) भंगिमाजन्य बहाव में सहायता प्रदान करते हैं और प्राणायाम से फेफड़ों को शक्ति प्राप्त होती है, तथापि ये उन विधियों से प्राप्त उपलाभ हैं। यौगिक क्रियाएँ शरीर आधारित होते हुए भी अधिक मनोन्मुख हैं और उनका उद्देश्य आत्म-जागरण हेतु आंतरिक विकास का अवसर प्रदान करना है। इन यौगिक क्रियाओं के अभ्यास द्वारा हम अपने जीवन के उद्देश्यों के प्रति उन्मुख होते हैं। हम यह जानने में सक्षम होते हैं कि हमारे शरीर और मन के भीतर क्या घटित हो रहा है। इन क्रियाओं के गौण प्रभाव के रूप में ही हमें मस्तिष्क के केन्द्रीय संस्थान और उसकी यान्त्रिक प्रणाली को समझने की क्षमता प्राप्त होती है जो संवेगात्मक दमन एवं दुश्चिन्ता को अन्त:स्रावी, किमियायी, स्नायविक एवं पेशीय असंतुलन में रूपान्तरित कर देती है।

श्वास एवं योग

यौगिक श्वसन का उद्देश्य केन्द्रीय तन्त्रिका-तन्त्र को शिथिल, संतुलित एवं ऊर्जान्वित करना और अर्द्धचेतन स्तर के तनावों एवं दबावों से मन को स्वच्छ करना है। इसका प्रभाव सम्पूर्ण शारीरिक एवं मानसिक तन्त्र पर पड़ता है और साथ ही श्वसन-क्रिया के सुचारु रूप से संचालन के कारण फेफड़े मजबूत होते हैं।

कई अध्ययनों से प्रमाणित हुआ है कि एकमात्र प्राणायाम में इतनी क्षमता है कि वह फेफड़ों एवं सम्पूर्ण शरीर के कार्यकलाप में वांछित सुधार ला दे। कताकोव का प्रतिवेदन है कि प्रति मिनट एक श्वास के हिसाब से उज्जायी

प्राणायाम करने से श्वास रोकने की क्षमता में वृद्धि होती है और श्वास की मात्रा एवं ओषजन की खपत में कमी आती है तथा कार्बन डाइऑक्साइड के निष्कासन में सुधार होता है। यह चयापचय में ह्रास और प्राणायाम की क्षमता का सूचक है जिससे मस्तिष्क की संचालन प्रणाली का नियमन प्रभावित होता है।

तेंगशे के प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि उज्जायी, भस्त्रिका और कपालभाति प्राणायाम श्वसन, हृत सम्बन्धी गतिविधि, चयापचय एवं तन्त्रिकीय कार्यों को प्रभावित करते हैं, साथ ही मानसिक शान्ति, सतर्क विश्रान्ति और आंतरिक जागरूकता भी प्राप्त होती है। उसका कथन है कि इन क्रियाओं से विविध दैहिक गतिविधियाँ प्रभावित होती हैं। केन्द्रीय मस्तिष्क का नियन्त्रण कक्ष संभवत: इसमें सक्रिय भूमिका निभाता है। यह श्वसन-क्रिया के सुसंचालन, शारीरिक क्षमता और सामान्य रूप से स्वस्थ एवं प्रसन्नचित्त होने की भावना में वृद्धि का सूचक है।

प्राणायाम के पूर्व आसनों का अभ्यास किया जाता है, जिनके लिए मन्द एवं नियन्त्रित श्वसन-विधि का सहारा लिया जाता है। साथ ही जागरूकता का भी उपयोग आसनों के अभ्यास के क्रम में किया जाता है। शीर्षासन एवं सर्वांगासन जैसे उल्टे होने वाले आसनों और पश्चिमोत्तानासन एवं शशांकासन जैसे आगे की ओर झुककर किये जाने वाले आसनों से श्वास छोड़ने में सुविधा होती है, क्योंकि मध्यपट पर सम्पूर्ण उदर का भार पड़ता है और छाती का भी संकुचन होता है। पीछे की ओर झुककर किये जाने वाले आसनों से स्वाभाविक रूप से छाती का विस्तार होता है, जिसके फलस्वरूप श्वास खींचने में सुविधा होती है। कतिपय घुमावदार (वक्र) आसनों से छाती के एक भाग का एक पक्षीय विस्तार होता है और साथ ही दूसरे भाग का संकुचन होता है।

दमा की दशा में प्राणायाम के साथ आसनों के अभ्यास से मध्यपट की गतिविधि में वृद्धि, प्राणिक शक्ति में वृद्धि एवं श्वास लेने और छोड़ने तथा श्वास रोकने की अवधि में भी वृद्धि होती है। इतना ही नहीं, श्लेष्मा-निष्कासन में भी गति प्राप्त होती है। उलट कर किये जाने वाले आसनों से बलगम का निष्कासन और बढ़ जाता है। आसनों के अभ्यास से संभवत: रक्त में ऑक्सीजन की मात्रा में वृद्धि होती है और कोशिकीय श्वसन में उल्लेखनीय सुधार होता है।

स्मरणीय है कि आसन और प्राणायाम का उद्देश्य श्वसन-क्रिया में सुधार नहीं है, हालाँकि वह भी होता जाता है। इनका उद्देश्य मस्तिष्क की

यान्त्रिक प्रणाली को प्रभावित करना एवं अर्द्धचेतन स्वचालित प्रक्रियाओं पर नियन्त्रण प्राप्त करना है। इसी के साथ-साथ हम गहरी पेशीय एवं आन्तरिक विश्रान्ति, दैहिक स्वास्थ्य, शरीर और मन की स्थिरता, बलिष्ठता एवं ध्यान की उच्चतर अवस्था भी प्राप्त करते हैं। जैसे-जैसे हम इन आदिम परिपथों और प्रतिबिम्बों के बारे में अधिक जागरूक होते हैं और इन पर नियन्त्रण प्राप्त करते हैं, ऊर्जा को उच्चतर तन्त्रिकीय परिपथों की ओर उच्चतर जागरण और श्रेष्ठतर कार्यों हेतु प्रतिप्रेषित किया जा सकता है।

कुवलयानन्द और विनेकर के अनुसार योगासनों के द्वारा आन्तरिक भंगिमाओं को अर्द्धचेतन मस्तिष्क के कार्यकलाप में रूपान्तरण के माध्यम से प्रभावित किया जा सकता है।

ध्यान के पूर्व प्राणायाम का स्थान आता है, जिसमें जाग्रत आन्तरिक अवस्था प्राप्त होती है। यहाँ चयापचय एवं परानुकम्पी नाड़ी संस्थान की विशिष्ट भूमिका होती है। इसलिए प्राणायाम को श्वसन का व्यायाम और भौतिक चिकित्सा समझने की भूल नहीं करनी चाहिए। यह शरीर और मन के समन्वय, संतुलन और सामंजस्य का विज्ञान है जिससे शरीर और मन के तनाव और दुर्बलताओं का उन्मूलन होता है और सम्पूर्ण शरीर-संस्थान स्वच्छ और निर्मल बन जाता है। इन अभ्यासों से हमारी आन्तरिक जागरूकता में वृद्धि होती है।

मस्तिष्क का नियन्त्रण

यदि आप सोचते हैं कि योग और प्राणायाम से सिर्फ फेफड़ों को बल मिलता है और रक्त-शोधन होता है तो योग के प्रति आपकी संकीर्ण दृष्टि है। इतना तो होता ही है, योग वैसी विधियाँ प्रदान करता है जिनसे ऑक्सीजन की खपत में वृद्धि और ह्रास दोनों हो सकते हैं। यह साधक की आवश्यकता और संतुलन पर निर्भर रहता है।

मस्तिष्क के श्वसन-नियन्त्रण-केन्द्रों का एक प्रमुख घटक कार्बन-डाइ-ऑक्साइड का स्तर है। श्वास और प्रश्वास में निरन्तर समायोजन द्वारा शरीर के इस रासायनिक संतुलन को कायम रखा जाता है। रक्त कार्बन-डाइ-ऑक्साइड में थोड़ी वृद्धि होने पर भी मस्तिष्क उद्वेलित होकर प्रश्वास को बढ़ा देगा ताकि विषाक्त पदार्थ का निष्कासन हो जाय।

प्राणायाम, कुम्भक, बन्ध और ध्यान का उद्देश्य धीरे-धीरे लम्बे अन्तराल के बाद प्रश्वास की गति को मंद करना और श्वास रोकने की क्षमता

को बढ़ाना, साथ ही कार्बन डाइऑक्साइड को रोकना और उसके प्रतिधारण की क्षमता को स्थायीत्व प्रदान करना है। यदि हम इसमें सफल हो गये तो इससे मस्तिष्क के अन्य क्षेत्रों के नियन्त्रण की क्षमता में वृद्धि होती है, तन्त्रिका-तन्त्र की स्थिरता कायम होती है और उच्चतर ध्यान-साधना के समय हमारी जागरूकता बनी रहती है।

शुल्त और अभयंकर का कथन है कि यौगिक श्वसन से कार्बन-डाइ-ऑक्साइड का जमाव पैदा होता है जिससे प्रमस्तिष्कीय रक्त-संचालन में उत्तेजना पैदा होती है, मानसिक शान्ति उत्पन्न होती है और तन्त्रिका-तन्त्र की संवेदी क्रिया में ह्रास होता है।

स्टेनेस्कू और उसके सहयोगियों के प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि उज्जायी प्राणायाम (प्रति मिनट एक श्वास) से न केवल संवातन एवं श्वसन की दर में ह्रास हुआ, वरन् व्यक्ति के कार्बन-डाइ-ऑक्साइड के प्रति रुझान में भी कमी आई। इन लेखकों का कथन है कि मस्तिष्क में श्वास-नियंत्रण प्रणाली को प्रभावित करने की क्षमता योग में है और इसी कारण यह संभव हो पाता है। अपने निष्कर्ष के आधार पर उनकी धारणा है कि फेफड़ों के दीर्घकालीन अवरोध और श्वसन-नलीय दमा की चिकित्सा में प्राणायाम की कुम्भक-क्रिया सहायक हो सकती है।

माइल्स ने अपने प्रयोग से सिद्ध किया है कि 20 मिनट के उज्जायी प्राणायाम ने ऑक्सीजन की खपत को मूल आवश्यकता से मात्र 12-15% अधिक बढ़ाया, जबकि प्रति घण्टा दो मील की चाल से टहलने पर ऑक्सीजन की खपत 235% बढ़ जाती है। प्रताप का कथन है कि श्वसन सम्बन्धी प्रशिक्षण से व्यक्ति को आपातकाल में ऑक्सीजन की आपूर्ति में कमी का सामना करने की क्षमता प्राप्त होती है।

श्वसन-प्रणाली से सम्बन्धित अध्ययनों से स्पष्ट है कि आसन-प्राणायाम और ध्यान से मस्तिष्क के विभिन्न अंग-प्रत्यंग पर नियंत्रण प्राप्त होता है और उससे उच्चतर स्तर की अनुभूति होती है।

श्वास पर नियंत्रण प्राप्त कर हम संवेगों एवं दुश्चिन्ताओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया को भी नियंत्रित कर सकते हैं और ध्यान को सिद्ध करने के बाद हम मन को अपने वश में कर के सामान्य रूप से जीवन में आनेवाले तनावों और दबावों को झेल सकते हैं। दमा के मरीज के लिए यही सर्वोत्तम मनोचिकित्सा है।

शुल्त और अभयंकर ने एक 16 वर्षीय दमाग्रस्त बालक के सम्बन्ध में प्रतिवेदन दिया है जो 8 वर्ष की उम्र से ही एमिनोफिलीन और कॉर्टिसोन ले रहा था। उसने आसन और प्राणायाम के सहारे दवा पर निर्भरता छोड़ दी और कभी-कभार ही आवश्यकता पड़ने पर दवा लेने लगा। उनका कथन है कि इन अभ्यासों के कारण दमा के प्रकोप के पूर्व की दुश्चिन्ता से वह मुक्त हो गया, इसलिए उसका आत्मविश्वास दृढ़ हो गया।

अभी हाल के एक शोध से ज्ञात हुआ है कि नासिका-पथ में अवरोध और अनावरोध तथा मस्तिष्कीय कार्यकलाप में सीधा सम्बन्ध है। उन्होंने यह दर्शाया है कि जब एक नासिका पथ में वायु-प्रवाह उन्मुक्त चलता है तो मस्तिष्क का विपरीत भाग अधिक सक्रिय रहता है। अवरुद्ध नासिका पथ द्वारा तीव्र गति से श्वसन करने पर मस्तिष्क का कम क्रियाशील गोलार्द्ध जाग्रत हो जाता है।

इस शोध से स्पष्ट होता है कि योगी मस्तिष्क की गतिविधि को परिवर्तित करने के लिए नासिका और श्वास का उपयोग करते थे। प्राणायाम और स्वर-योग का सम्पूर्ण विज्ञान इसी पर आधारित है। इस शोध से घ्राण-क्रिया से आगे बढ़कर नासिका के कार्यकलाप को एक बड़ा आयाम प्राप्त होता है। इस शोध से यह भी प्रमाणित होता है कि यौगिक श्वसन और ध्यान की क्रियाओं से तन्त्रिका-तन्त्र, अन्त:स्रावी नाड़ियों और रोग प्रतिरक्षक प्रणाली का नियन्त्रण किया जा सकता है। इससे शरीर के चयापचय को भी नियन्त्रित किया जा सकता है।

निष्कर्ष

शोधों और हमारे अनुभवों के आधार पर कहा जा सकता है कि दमा की चिकित्सा में आरंभिक अवस्था में ओषधि की आवश्यकता नहीं है। यह इसलिए कहा जा रहा है कि दमा के उपचार के लिए योग और भौतिक चिकित्सा अथवा अन्य विधियाँ, जो रोगी को अनुकूल पड़ें, उपलब्ध हैं। इनका उपयोग कर वह पेशियों के ऐंठन और श्वास-नली के संकुचन को कम कर सकता है। ये उपचार-विधियाँ यदि कारगर न हों तभी दवा का सेवन करना चाहिए।

समय और सतत् अभ्यास तथा अनुभव के बाद दमा का आक्रमण कम हो जाता है। कष्ट में कमी होती है और धीरे-धीरे उस पर नियंत्रण पाना सरल होता जाता है। यह उतना सरल नहीं है, क्योंकि दमा का प्रकोप होते ही हम

झट से दवा लेकर दौरे को कम करने की चेष्टा करने में लग जाते हैं। रोगी और चिकित्सक दोनों पर यह बात लागू होती है, क्योंकि दौरा पड़ते ही मन को भय और घबराहट घेर लेती है और तुरन्त दवा का सहारा लेने के लिए विवश कर देती है।

इस स्वाभाविक प्रवृत्ति पर विजय प्राप्त करने हेतु उच्चस्तरीय परिपक्वता, आत्म-विश्वास और किसी ऐसी पद्धति का प्रशिक्षण आवश्यक है जिसमें विश्रान्ति एवं उन्नत श्वसन की विधि बतायी जाती हो। कुछ काल के योग-प्रशिक्षण के पश्चात्, जिसमें आसन, प्राणायाम और शिथिलीकरण की क्रियाएँ बतायी जाती है, शरीर और मन को संतुलन प्राप्त होने लगता है।

चिकित्सक द्वारा रोगी को बताया जाना चाहिए कि यदि वह ओषधि पर ही निर्भर रहने लगेगा तो उसे आजीवन दवाओं से छुटकारा नहीं मिलेगा। उन्हें यह समझना चाहिए कि कॉर्टिसोन जैसी दवाओं के निरन्तर सेवन से मधुमेह और अन्य रोगों का आक्रमण हो सकता है जो दमा से भी अधिक परेशानी पैदा कर सकता है। उदाहरण के लिए, हमने अनुभव किया कि एक व्यक्ति योग का अवलम्बन करके दमा से तो छुटकरा पा गया, किन्तु ओषधियों से मुक्त होने में उसे भारी कठिनाई हुई।

ज्योंही रोगी को ओषधियों के कुप्रभावों और खामियों की जानकारी प्राप्त होगी, वह अपने स्वास्थ्य में सुधार के लिए किसी रचनात्मक विधि की खोज के लिए उत्प्रेरित हो जाएगा। योग के लाभकारी प्रभावों और योगाभ्यास के आनन्द का अनुभव प्राप्त होते ही योग हमारे जीवन का एक अभिन्न अंग हो जाता है और तब सुघड़ स्वास्थ्य और प्रसन्नता उसकी स्वाभाविक परिणति के रूप में प्राप्त हो जाती है।

29

मधुमेह पर शोध

मधुमेह के सम्बन्ध में भोज-पत्र पर प्रथम अभिलिखित संलेख 1500 वर्ष ईसा पूर्व का मिस्र में उपलब्ध हुआ है, जिसमें अधिक मूत्र-त्याग (बहू-मूत्रता) का वर्णन है, जो मधुमेह का एक मुख्य लक्षण है। भारतीय वैद्यक ग्रन्थ सुश्रुत जो ईसा के कोई 400 वर्ष पूर्व लिखा गया, उसमें मधुमेह का उल्लेख है। पश्चिम में पहली बार 1675 में विलिस ने मूत्र में मिठास का जिक्र किया है।

आज विश्व में अनुमानत: मधुमेह के 30 करोड़ रोगी हैं और संभवत: उतनी ही संख्या वैसे रोगियों की भी होगी जिनकी अभी तक जाँच-पड़ताल नहीं हुई। अनुमानत: भारत में इसकी पूरी आबादी का 2% मधुमेह से प्रभावित है, जो 1.5 करोड़ से कम नहीं है। अमेरिका में लगभग 50 लाख लोगों की चिकित्सा मधुमेह के रोगी के रूप में की जा रही है। उतनी ही बड़ी संख्या की आबादी को आने वाले अपने जीवन-काल में मधुमेह ग्रस्त होने की संभावना है। अमेरिका में इस रोग की संख्या में 6% की वृद्धि प्रतिवर्ष हो रही है।

इस रोग में मात्र रक्त में शर्करा की मात्रा में वृद्धि नहीं होती, वरन् शरीर का प्रत्येक अंग प्रभावित हो जाता है। अनुमानत: 3,00,000 लोग प्रतिवर्ष मधुमेह और उससे उत्पन्न हृदयाघात, पक्षाघात एवं गुर्दे की बीमारी से मरते हैं।

अमेरिका में अन्धता का एक प्रमुख कारण मधुमेह है। इससे उच्च रक्त-चाप, पुंसत्वहीनता, गैंग्रीन (अंग विगलन) और संक्रामक अन्य रोग उत्पन्न होते हैं, जिसमें अंग-भंग की स्थिति संभावित रहती है। कैंसर और हृदय रोग के अतिरिक्त मधुमेह अमेरिका में सर्वाधिक जानलेवा रोग है। अमेरिका में मधुमेह पर बड़े पैमाने पर शोध चल रहा है।

कारण अज्ञात

1921 से इंसुलिन के अनुसंधान के बाद लाखों जानों की रक्षा हुई है। बड़े-बड़े अनुसंधानों के बावजूद मधुमेह के कारणों के बारे में अभी तक बहुत जानकारी नहीं मिल सकी है।

मिन्कोवस्की और बैंटिंग एवं बेष्ट के शोध और प्रारंभिक अध्ययनों से सिद्ध हो गया है कि अग्नाशय ग्रन्थि से स्रावित इंसुलिन और मधुमेह के बीच सम्बन्ध है। लेकिन इंसुलिन की कमी ही मधुमेह का आरंभिक कारण नहीं है। आज इस बात पर विवाद है कि मधुमेह सही मायने में किस विशेष कारण से उत्पन्न होता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि मधुमेह में इन दो स्थितियों में से एक स्थिति होती है–या तो रक्त में इंसुलिन की कमी हो जाती है या इंसुलिन-ग्लुकोज के चयापचय में कोई गड़बड़ी पैदा हो जाती है। पहले को इंसुलिन पर आधारित मधुमेह और दूसरे को इंसुलिन मुक्त मधुमेह कहते हैं। दूसरी कोटि में इंसुलिन रक्त में उपलब्ध होते हुए भी ठीक से काम नहीं करता है।

मधुमेह की स्थिति बड़ी जटिल होती है और उस पर शोध-कार्य कठिन होता है, क्योंकि शर्करा का चयापचय बड़ा मौलिक, परमावश्यक और जटिल होता है। हम इतना जानते हैं कि दुर्बल आहार, अभ्रमणशील जीवन-शैली (बैठकी धन्धा), मोटापा और मानसिक रूप से मधुमेह से जुड़े कारण हैं, परन्तु वास्तविक रूप से मधुमेह की स्थिति कैसे उत्पन्न होती है और इसका क्या निदान है, यह ज्ञात नहीं है।

ग्लुकोज का चयापचय

शरीर के लिए ऑक्सीजन के अतिरिक्त सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ऊर्जा-स्रोत इंसुलिन है जो जीवन-रक्षण और शरीर के सभी कोशों के सुसंचालन के लिए आवश्यक है। जब हम ग्लुकोज ग्रहण करते हैं, वह शरीर के विभिन्न कोषों में ईंधन के रूप में वितरित कर दिया जाता है और उसका कुछ अंश बाद में उपयोग के लिए भंडारित कर दिया जाता है। शर्करा चयापचय को नियमित करने में जिगर, अग्नाशय और एड्रिनल ग्रन्थियाँ मुख्य भूमिका निभाती हैं।

ग्लुकोज के भण्डारण और शरीर की कोशिकाओं में उसके प्रवेश के लिए इंसुलिन की आवश्यकता होती है। जब ग्लुकोज शरीर में प्रविष्ट होता है

तो वह अग्नाशय में अवस्थित लैंगरहंस के द्वीपकों (आइलेट) के बीटा सेल से इंसुलिन मुक्त करता है। इंसुलिन ग्लुकोज को जिगर, चर्बी और पेशीय कोशिकाओं में प्रवेश हेतु मार्ग प्रशस्त करता है, जहाँ ग्लुकोज का उपयोग और भण्डारण होता है। जिगर और चर्बी कोशिकाओं द्वारा भंडारित ग्लुकोज हमारा बहुमूल्य ईंधन है और यदि हमारा ईंधन समाप्त हो जाय तो हमारा मस्तिष्क और शरीर काम नहीं कर सकते और यदि शरीर में इंसुलिन की कमी हो जाय तो हमारी रक्त-धारा में चाहे जितनी भी शर्करा हो, वह व्यर्थ हो जाती है, क्योंकि कोशिकाओं में जहाँ उसकी आवश्यकता है, वहाँ वह इंसुलिन के अभाव में पहुँच नहीं पाती है।

ग्लूकागोन एक हार्मोन है जो लैंगरहंस के द्वीपकों (आइलेट) से निकलता है और इंसुलिन के विपरीत कार्य करता है। यह भुखमरी, कठोर परिश्रम और कार्बोहाइड्रेट की कमी के कारण स्रावित होता है और आपातिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु भण्डारित ग्लुकोज को मुक्त करता है।

जब हम चार घण्टे या अधिक काल तक उपवास करते हैं, हमारा इंसुलिन का स्तर गिर जाता है और स्वत: हमारा जिगर शरीर को पोषण देने हेतु ग्लुकोज को मुक्त कर देता है। दबाव, संवेदी तन्त्रिका-तन्त्र और एड्रीनल ग्रन्थि की वर्धित गतिविधि के कारण अधिक ग्लूकोज रक्त में प्रविष्ट हो जाता है। जब हम तनावग्रस्त, क्लान्त, किसी कल्पित या वास्तविक आशंका से ग्रस्त रहते हैं अथवा शारीरिक श्रम के कारण थके होते हैं तो संवेदी और एड्रीनल ग्रन्थियाँ वुभुक्षित कोशिकाओं के प्राण-रक्षण हेतु ग्लुकोज छोड़ती हैं।

ग्लुकोज-चयापचय का प्रश्न बड़ा पेचीदा, बहुआयामी और सम्पूर्ण शरीर की कार्यप्रणाली से अन्तर्सम्बन्धित है। यह अत्यन्त जटिल प्रक्रिया है जिसकी एक सामान्य और सरल रूपरेखा प्रस्तुत की गई है।

मनोवैज्ञानिक पक्ष

सतरहवीं सदी में ही विलिस ने 'लम्बी शोक-मग्नता' जैसे मनोवैज्ञानिक कारकों को मधुमेह का कारण बताया था, परन्तु आज तक समस्या के मनोवैज्ञानिक पक्ष को ठीक से नहीं समझा जा सका है। हम इतना जानते हैं कि इंसुलिन के कम मात्रा में उत्पादन या अनुत्पादन अथवा उसका अल्प मात्रा में स्राव या गलत समय पर स्राव के कारण मधुमेह पैदा होता है, परन्तु हो सकता है मधुमेह का कारण अग्नाशय में बिलकुल नहीं हो।

अग्नाशय से होने वाला स्राव स्वचालित तन्त्रिका द्वारा नियमित होता है। परिसंवेदी एवं संवेदी घटकों में संतुलन सम्पूर्ण शारीरिक स्वास्थ्य एवं रक्त-शर्करा-चयापचय के लिए आवश्यक है। हम इस तथ्य से अवगत हैं कि संवेगात्मक और मानसिक विक्षेप से स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र, अन्त-स्रावी ग्रन्थि और चयापचय विषयक असंतुलन मस्तिष्क की लिम्बिक प्रणाली के माध्यम से उत्पन्न होता है जो मधुमेह में एक महत्त्वपूर्ण घटक है। दबाव और तनाव से संवेदी तन्त्रिका-तन्त्र और एड्रीनल ग्रन्थियों की क्रियाशीलता बढ़ जाती है जिससे इंसुलिन का स्राव बाधित हो जाता है। इसलिए मधुमेह में दबाव और तनाव का निरन्तर बना रहना एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है।

यह सर्वविदित है कि किशोरों में भी किसी संक्रमण, मनोवैज्ञानिक आघात (परीक्षा आदि के कारण) अथवा किसी साथी के साथ विवाद के कारण उत्पन्न दबाव के कारण मधुमेह के लक्षण प्रकट हो जाते हैं। सिर्फ 11% ऐसे मधुमेह ग्रस्त बच्चे हैं जिनके माता-पिता को भी मधुमेह है। युवाकालीन मधुमेह में वंशानुगत कारक उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है। प्रौढ़ावस्था के मधुमेह के 85% रोगियों के माता-पिता भी मधुमेह ग्रस्त रहे हैं। आश्चर्य है कि प्रौढ़ावस्था के मधुमेह में योगाभ्यास का प्रभाव आसानी से परिलक्षित होने लगता है। इससे स्पष्ट है कि यद्यपि वंशानुगत कारण मधुमेह में निहित है और कुछ क्षेत्रों में इस कारण दुर्बलता भी महसूस होती है, पर मधुमेह का यह प्रमुख कारण नहीं है। वंशानुगत कारणों पर अधिकतर मामलों में सम्यक् जीवन-शैली को अपना कर विजय प्राप्त की जा सकती है। स्वच्छ चिन्तन और योगाभ्यास द्वारा इस वंशानुगत मधुमेह से छुटकारा पाया जा सकता है।

हैरिस ने मधुमेह में शिथिलीकरण से सम्बन्धित प्रशिक्षण के महत्त्व को प्रदर्शित किया है।*[1] मधुमेह के 12 रोगियों को शिथिलीकरण शिविर में भर्ती किया गया, जहाँ उन्होंने मधुमेह के विषय में पढ़ा। इनमें से 9 व्यक्तियों ने एक-एक घण्टे के तीन 'चिकित्सा सत्र' के कार्यक्रम को पूरा किया और साथ ही 7 दिनों के चार गृह-अभ्यास सत्र पूरे किये।

मनोवैज्ञानिक और शरीरक्रियागत शर्तों को प्रत्येक परीक्षण के समय ध्यान में रखा गया। चार सप्ताह तक फालोअप भी किया गया। देखा गया कि मरीजों में सामान्य से अधिक दुश्चिन्ता के लक्षण विद्यमान थे। निष्कर्षत: मधुमेह-नियन्त्रण और चिन्ता के बीच मजबूत रिश्ता बनता प्रतीत हुआ। शिथिलीकरण से चिन्ता का दबाव कम होता हुआ प्रतीत हुआ।

इस परीक्षण से संकेत प्राप्त होता है कि मधुमेह में चिन्ता एक प्रमुख घटक है। अभी यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता है कि चिन्ता की इसमें क्या भूमिका है। मधुमेह के यौगिक प्रबन्धन में शिथिलीकरण की प्रमुख भूमिका रही है। मधुमेह के जो रोगी यौगिक विधि से उपचार के लिए हमारे पास आये, उन्हें सहगामी चिन्ता अथवा अवसाद के साथ दबाव जनित कई समस्याएँ थीं। यौगिक प्रशिक्षण के प्रारंभिक क्रम में तनाव और संवेदी कार्यकलाप की वृद्धि में कमी लाना आवश्यक है। उसके बाद आसन, प्राणायाम और षट्कर्म के अभ्यास हमारे अनुभव के आधार पर रक्त-शर्करा के स्तर में ह्रास लाने के लिए प्रभावकारी हैं। यौगिक उपचार में एक संतुलन आवश्यक है, सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त करने के लिए हमारे कार्यकलाप और शिथिलीकरण के बीच समन्वय आवश्यक है। कार्यकलाप से तनाव घटता है और ऊर्जा में वृद्धि होती है और शिथिलीकरण से नव यौवन प्राप्त होता है।

व्यायाम

सेल्सस ने ईसा काल में ही मधुमेह से निबटने के लिए व्यायाम की वकालत की थी। 1970 के दशक में फ्रेड ह्वाइट हाउस ने कहा था, "वैज्ञानिकों द्वारा मधुमेह के उपचार के लिए व्यायाम को एक महत्त्वपूर्ण उपाय बताया गया है। उन्हें बताना है कि व्यायाम कैसे यह काम करता है।"[*2] फिलिप फेलिग का मानना है कि व्यायाम ग्लूकोज के अवशोषण को बढ़ाता है।

इस संदर्भ में यह स्मरणीय है कि आसनों से व्यायाम के लाभ तो प्राप्त हो ही जाते हैं, उनसे शारीरिक चुस्ती बनी रहती है, साथ ही विश्रान्ति भी प्राप्त होती है। आसनों से चयापचय, तन्त्रिका-तन्त्र और अन्त:स्रावी ग्रन्थियाँ प्रभावित होती हैं। व्यायाम द्वारा ये अतिरिक्त लाभ नहीं प्राप्त होते। पाकोर्डी एवं उनके सहयोगियों ने यह दर्शाया है कि व्यायाम के बाद रक्त में लेक्टिक अम्ल बढ़ जाता है और व्यायाम समाप्त होने के दस मिनट बाद इसके स्तर में गिरावट आ जाती है।[*3] किन्तु आसनों से लेक्टिक अम्ल का स्तर घटता है। शोध से यह भी देखा गया कि आसन और ध्यान करने वालों की अल्फा और बीटा मस्तिष्कीय तरंगों में प्रबलन हुआ जबकि साधारण व्यायाम करने से लोगों में ऐसा कोई परिवर्तन लक्षित नहीं हुआ। इससे स्पष्ट संकेत प्राप्त होता है कि योगाभ्यास से हमारे मन-मस्तिष्क के वे क्षेत्र प्रभावित होते हैं जहाँ भौतिक चिकित्सा और व्यायाम की पहुँच नहीं हो पाती है।

अभ्यासों का शुद्ध होना आवश्यक

ऐसे लोग भी हमारे पास आते हैं जो वर्षों से सिर्फ आसन करते रहे हैं और उसके बावजूद उन्हें मधुमेह हो गया। वे मधुमेह-नियन्त्रण के लिए हमसे योगाभ्यास सीखना चाहते हैं। कुछ ऐसे मधुमेह के रोगी भी हैं जो आसन के साथ प्राणायाम भी करते रहे हैं, पर मधुमेह से पीछा नहीं छुड़ा सके। ऐसे लोग सामान्यत: पूछ बैठते हैं, "यदि हम लोग योगाभ्यास करते आ रहे हैं तो हमलोग बीमार क्यों हैं?" कारण निम्नलिखित हैं–

1. आमतौर पर लोग नियमित रूप से अभ्यास नहीं करते। योग में सफलता की कुंजी नियमितता और अध्यवसाय है।
2. वे शुद्ध रूप से अभ्यास नहीं करते। वे योगासन शारीरिक व्यायाम के रूप में करते हैं और अपने ऊपर अधिक दबाव डाल देते हैं, जबकि उन्हें धीरे-धीरे श्वास की गति और जागरूकता के साथ तालमेल बिठा कर अभ्यास करना चाहिए। आसन में जल्दबाजी और दबाव लाने से शरीर कमजोर हो जाता है और कई प्रकार की समस्याएँ आ खड़ी होती हैं। इससे उच्च रक्तचाप और मधुमेह भी हो सकता है। इसलिए अभ्यासों को धीरे-धीरे और आरामपूर्वक करना चाहिए और बीच-बीच में शवासन करना चाहिए ताकि शरीर को स्थिरता और संतुलन प्राप्त हो।
3. उनका अभ्यास कार्यक्रम अधूरा है। उदाहरण के लिए उसमें षट्कर्म और ध्यान का सम्पुट नहीं है।

आभ्यन्तरिक गंभीर समस्याओं और तनावों के निर्मूलन के लिए, जो कई रोगों की जड़ हैं, कोई-न-कोई ध्यानाभ्यास अवश्य करना चाहिए। जब तक हम इन पुरानी आदतों, प्रतिक्रियात्मक चिन्तन-प्रणाली, संवेगों और व्यवहारों में सुधार नहीं लायेंगे, तब तक हम अपने जीवन से रुग्णता के कीटाणुओं को निर्मूल नहीं कर सकते। निश्चय ही मस्तिष्क और लिम्बिक प्रणाली तथा स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र एवं अन्त:स्रावी ग्रन्थियों के माध्यम से शरीर के सम्पूर्ण नियन्त्रण कक्ष पर ध्यान का क्रियात्मक प्रभाव पड़ता है। इस बात की भी संभावना है कि ध्यान शरीर की प्रतिरक्षण प्रणाली को भी लाभ पहुँचाता है।

शंखप्रक्षालन

मधुमेह की चिकित्सा में शंखप्रक्षालन की अहम् भूमिका है। हमने अपने परीक्षणों में देखा कि आसन और प्राणायाम-प्रशिक्षण की प्रारंभिक अवस्था में

रोगियों का रक्त-शर्करा स्तर बहुत कम घटा, किन्तु लघु शंखप्रक्षालन प्रारंभ करते ही उनके रक्त-शर्करास्तर में नाटकीय परिवर्तन दिखाई पड़ा। मधुमेह के रोगियों को योग-प्रशिक्षण देने के दौरान लघु शंखप्रक्षालन कराते समय या तो इंसुलिन की मात्रा घटा देनी चाहिए या बिलकुल बन्द कर देनी चाहिए। बाद में रक्त की जाँच के बाद यदि आवश्यक समझा जाय तो पुनः इंसुलिन चालू कर देना चाहिए।

लघु शंखप्रक्षालन से पूर्ण शंखप्रक्षालन अधिक शक्तिशाली है, क्योंकि यह आँतों में जमे खाद्य-पदार्थ, श्लेष्मा, अनुपयोगी पदार्थों और आँतों से निकलने वाले स्रावों को बाहर कर देता है। इसमें 20–30 गिलास ऊष्ण लवणयुक्त जल की आवश्यकता पड़ती है, जबकि लघु शंख प्रक्षालन में 4–8 गिलास ऊष्ण लवणयुक्त जल से ही काम हो जाता है। लघु शंखप्रक्षालन बड़ा ही प्रभावकारी है और प्रौढ़ावस्था के मधुमेह में इससे रक्त-शर्करा के स्तर में निश्चय ही गिरावट आती है।

दोनों प्रकार के शंख प्रक्षालनों से शारीरिक और मानसिक शुद्धिकरण के साथ शिथिलीकरण भी होता है। इस क्रिया के बाद आमतौर से अभ्यासी कहते पाये जाते हैं कि वे अपने को बड़ा हल्का और विश्रान्त महसूस करते हैं। यह कैसे घटित होता है यह अनुमान का विषय है। निम्न व्याख्या से स्थिति स्पष्ट होगा–

1. पाचन-नली की सफाई और शुद्धिकरण से पाचन-क्रिया में सुधार होता और हमारे सम्पूर्ण शरीर को बल प्राप्त होता है। डॉ. शुक्ल एवं उनके सहयोगियों ने शल्य-क्रिया के पूर्व आँतों की सफाई से, जिसमें भोजन सम्बन्धी संयम, मृदु विरेचक, एण्टीबॉडीज और एनीमा का उपयोग करते हैं, टी. जी. आई. (शंख प्रक्षालन का संशोधित रूप) की तुलना कर प्रतिवेदन दिया है कि टी. जी. आई. वाले रोगियों में शल्य-क्रिया के बाद कम संक्रमण हुआ, व्रण-भंग कम हुआ और अस्पताल में उन्हें कम दिन रहना पड़ा। टी. जी. आई. वाले समूह के किसी व्यक्ति की मृत्यु शल्यक्रिया के बाद नहीं हुई, जबकि अन्य विधि से आँतों की सफाई वाले समूह के एक व्यक्ति की मृत्यु शल्यक्रिया के बाद हो गई।
2. शंखप्रक्षालन के दौरान गर्म, नमकीन पानी जब पाचन-नली से गुजरता है तो उसके दबाव से अपशिष्ट द्रव्य अपशोषित कर लिये जाते हैं और विषाक्त पदार्थ बाहर कर दिये जाते हैं।

3. नमकीन जल से श्लेष्मा झिल्लियों का प्रक्षालन अपने में एक सुखद और स्वास्थ्यकर अनुभव है। ऊष्ण लवणयुक्त जल शोथ को आराम पहुँचाता और तन्त्रिका-तन्त्र को उत्तेजित करता है। इस प्रक्रिया से रक्त-शर्करा के स्तर में कमी आती है।
4. आँतों की श्लेष्मा झिल्लियों की बार-बार सफाई होने से अन्य कोशिकाओं पर भी प्रभाव प्रड़ता है, जिस कारण कोशिकाओं की झिल्लियों पर इंसुलिन का अच्छा असर पड़ता है।
5. योगी जानते हैं कि किस प्रकार आसनों के अभ्यास द्वारा आँतों की अवरोधिनी से ऊष्ण लवणयुक्त जल को बाहर निकाला जाय। इसके लिए उसे आंतरिक अंगों के नियन्त्रण की विधि सीखनी पड़ती है ताकि सूक्ष्म स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र के घटकों को वश में किया जा सके। इससे मस्तिष्कीय संरचना को संतुलित और सुगठित करने में मदद मिलती है।
6. आसन, प्राणायाम और ध्यान के साथ षट्कर्म को जोड़ देने से शरीर के अर्द्धचेतन क्षेत्र को चेतन-क्षेत्र में परिवर्तित करने में सहायता मिलती है। इन अभ्यासों से व्यक्तित्व की अन्तर्दशा के प्रति जागरूकता पैदा होती है। हम जान लेते हैं कि हमारे भीतर क्या घटित हो रहा है और तब सहज ही हमारी जीवनशैली, खाने-पीने की आदतों, अभ्यास-प्रणाली और मानसिक दशा में रूपान्तरण आता है, क्योंकि संवेदनशीलता में वृद्धि होने पर हम स्वत: अपने शरीर के साथ मनमानी करने लग जाते हैं। जागरूकता आने पर अज्ञानवश की जानेवाली भूलों को हम नहीं दुहराते।

जागरूकता के अपने लाभ होते हैं। अपनी आन्तरिक दशा, आवश्यकताओं और इच्छाओं की जानकारी, क्षमताओं एवं सीमाओं का ज्ञान हो जाने पर स्वायत्तता, आत्म-निर्भरता, स्वतन्त्रता और आत्मविश्वास की भावना का विकास होता है। निश्चय ही किसी भी रोग से जूझने में इन बातों का बड़ा महत्त्व होता है। योगियों का कथन भी है कि शरीर के किसी अंग विशेष के प्रति सजगता आने पर सहज रूप से उस अंग में ऊर्जा और पुनर्यौवन का प्रादुर्भाव होता है। जागरूकता के कारण विश्रान्ति एवं पुनर्सन्तुलन के प्रति स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है।

समन्वित साधना

सभी यौगिक क्रियाओं का सम्मिलित लाभप्रद प्रभाव तब उत्पन्न होता है जब उन्हें एक-दूसरे के साथ शुद्ध और संतुलित रूप से संयुक्त कर एक नियमित

साधना के रूप में संचालित किया जाय। अंतत: प्रत्येक अभ्यास दूसरे अभ्यास में सहायक सिद्ध होता है और व्यक्तित्व को सुघड़ एवं स्वस्थ बनाने में किसी की भूमिका नगण्य नहीं होती। यौगिक शब्दावली में षट्कर्म से शुद्धिकरण होता है, आसन से ऊर्जा-प्रवाह का अवरोध दूर होता है। प्राणायाम से ऊर्जा का प्रवाह नियमित होता है और ध्यान से मन शुद्ध, सुदृढ़ और सम्पुष्ट होता है। अन्तत: सबके समन्वित प्रभाव से उच्चतर चेतना का विकास होता है।

चाहे जिस शरीरजन्य प्रक्रिया से इस चमत्कारपूर्ण विश्रान्ति एवं सुकल्याण की प्राप्ति हो, हमें सदा योग-शास्त्र के वचनों पर ध्यान देना चाहिए, जहाँ इन यौगिक क्रियाओं को श्रद्धा और सम्मान के साथ जनसामान्य के लिए प्रस्तुत किया गया है। ये वे क्रियाएँ हैं जिनका अभ्यास करने से न केवल हमारा शरीर रोग मुक्त होता है, वरन् हमें नवजीवन और नव शक्ति प्राप्त होती है, जिनके बल पर हम जीवन का सच्चा आनन्द उपलब्ध करते हैं।

30

सफलता की कहानी

रोगी संख्या 1

श्री ए. के. श्रीवास्तव, उम्र 53 वर्ष, मुख्य वास्तुविद, बोकारो स्टील सिटी मुंगेर आश्रम अगस्त 1983 में पधारे। उन्हें 1972 से मधुमेह की शिकायत थी। उनके पिता भी मधुमेह के रोगी थे। उनका अपना ही मधुमेह इतना गम्भीर था कि उन्हें प्रतिदिन 40-50 युनिट इंसुलिन लेना पड़ता था। भोजन नियन्त्रण और ओषधि-सेवन व्यर्थ सिद्ध हो रहे थे। उनका कथन था कि उनकी समस्या का कारण भोजन और साथ ही बड़े पदभार जनित अन्य समस्याएँ थीं।

15 अगस्त, 1983 को बिहार योग विद्यालय, मुंगेर में उनके पदार्पण के बाद उन्हें दैनिक ओषधि सेवन बन्द कर कुछ सरल आसन और प्राणायाम सिखाये गये।

17 अगस्त को उनके खाली पेट का रक्त-शर्करा स्तर 182 और भोजन के बाद का 286 मि.ग्रा./100 आया। तब उन्होंने 40 यूनिट इंसुलिन लेना प्रारंभ किया। 19 अगस्त को उन्होंने लघु शंखप्रक्षालन, कुंजल और नेति का अभ्यास किया। उन्हें इंसुलिन की मात्रा आधी कर देने को कहा गया। इस घटी हुई मात्रा पर भी उन्हें रक्त-शर्करा में भारी कमी महसूस हुई और तब उन्हें ग्लूकोज लेना पड़ गया। बाद में उन्होंने इंसुलिन बंद कर दिया और 23 अगस्त को भोजन के बाद का उनका रक्त-शर्करा-स्तर 112 एम.जी./100 मि. लि. हो गया और वही स्तर जून, 1984 तक बना रहा।

यौगिक उपचार-प्रणाली में प्रौढ़ावस्था के मधुमेह में दवा लेने से रक्त-शर्करा के स्तर में त्वरित गिरावट आती है। इंसुलिन आधारित मधुमेह में ऐसा

बहुत कम देखा गया है। श्री श्रीवास्तव का कथन है, " मैं अपनी पत्नी के साथ नियमित रूप से प्रात:कालीन योगाभ्यास तो करता हूँ, किन्तु कार्याधिक्य के कारण सायंकाल कोई प्राणायाम या ध्यान नहीं कर पाता। प्रात:कालीन योग-साधना से मुझे शारीरिक एवं मानसिक लाभ प्राप्त होता है।"

इस प्रकार के वृत्तान्त और मधुमेह के रोगियों के बताये हुए अनुभवों से यह विश्वास करना कठिन होता है कि मधुमेह एक लाइलाज रोग है, जैसा चिकित्सकों का मत है।

रोगी संख्या 2

यह लघु शंखप्रक्षालन की उपादेयता का एक दूसरा उदाहरण है। एक 43 वर्षीय व्यक्ति मार्च, 1982 में आश्रम आया जो 8 वर्षों से मधुमेह रोग से पीड़ित था। खाली पेट का उनका रक्त-शर्करा स्तर 200 मि.ग्रा./100 मि. लि. था जो आहार-संयम एवं डायनिल की तीन गोलियाँ प्रतिदिन लेने पर घट कर 120 मि. ग्रा./100 मि. लि. पर पहुँच गया।

यह व्यक्ति विषादग्रस्त एवं परेशान था। यौगिक विधि की जाँच से उसमें मणिपुर चक्र की दुर्बलता परिलक्षित हुई। पवन मुक्तासन, सूर्य नमस्कार, यौगिक श्वसन, नाड़ीशोधन, शवासन, लघु शंखप्रक्षालन, कुंजल और नेति की सरल दैनिकचर्या उन्हें बताई गई।

कुछ दिनों के आसन, प्राणायाम के बाद लघु शंखप्रक्षालन सफलतापूर्वक कराया गया। इस अवस्था में उनके रोग में काफी सुधार हुआ। रोगी की आँखों में चमक दिखाई पड़ी, वे प्रसन्न दिखे और विमन्दता (रिटार्डेशन) के लक्षण कम दिखाई पड़े। लघु शंखप्रक्षालन उन्हें कठिन प्रतीत हुआ, फिर भी उसके लाभ को वे स्वीकार करते थे।

उन्हें आसन और प्राणायाम, लघु शंखप्रक्षालन और कुंजल एक महीने तक प्रतिदिन नियमित रूप से करने की सलाह दी गयी। दूसरे महीने एक दिन के अन्तर पर लघु शंखप्रक्षालन और कुंजल करने को कहा गया, तीसरे महीने सप्ताह में दो बार और उसके बाद प्रति सप्ताह एक बार का परामर्श दिया गया।

अभ्यास प्रारम्भ करने के एक महीने बाद उसने दवाएँ बंद कर दीं। धीरे-धीरे उसने दवा की खुराक घटायी थी। दवा बंद करने के एक सप्ताह बाद खाली पेट का रक्त-शर्करा गिर कर 92% पर आ गया। उनकी साधना चल रही है।

कुछ महीनों के बाद उनके भाई ने उनकी यौगिक चिकित्सा के सम्बन्ध में जानने के लिए पत्र भेजा। उसने बताया कि उसका भाई यौगिक चिकित्सा के बाद इतना बदल गया है कि कोई कल्पना ही नहीं कर सकता कि वह कभी बीमार था। स्वयं उसकी पत्नी को उसके ऊर्जा-स्तर और प्राण शक्ति के साथ अपने को समायोजित करने में कठिनाई हुई थी।

31

योगोपचार शिविर

बिहार योग विद्यालय द्वारा संचालित

सितम्बर 1982 और जून 1984 के बीच बिहार योग विद्यालय द्वारा दमा, मधुमेह और रक्त-चाप पर कई शिविर आयोजित किये गये। कानपुर, जमशेदपुर, भागलपुर, बेगूसराय आदि में चिकित्सकों के सहयोग से ये शिविर संचालित किये गये थे।

शिविरों का उद्‌देश्य

ये समस्त शिविर उपचार हेतु लगाये गये थे। ये प्रारंभिक परीक्षण के शिविर थे। शोधपरक और पूर्णत: नियन्त्रित शिविर लगाने के पूर्व परीक्षण द्वारा इसकी कठिनाइयों और दुर्बलताओं का पता लगाना आवश्यक समझा गया। चिकित्सकों तक यह संदेश भी पहुँचाना था कि योग का औपचारिक महत्त्व है।

दमा और मधुमेह शिविर, कानपुर

1982 में दमा और मधुमेह पर कानपुर में आयोजित शिविर चिकित्सा एवं शोध, दोनों दृष्टियों से काफी सफल रहा। शिविर में आयोजित योग-चर्चा में भाग लेने वाले सभी रोगियों का रक्त शर्करा-स्तर दवा छोड़ने के बाद भी घटा। मेडिकल कॉलेज, कानपुर ने दमा और मधुमेह, दोनों में सक्रिय सहयोग प्रदान किया।

मधुमेह अनुसंधान

मधुमेह के 30 रोगियों में जाँच के बाद 14 रोगियों का सकारात्मक इतिहास प्राप्त हुआ। इन 14 मधुमेहियों में से 3 ने कोर्स को पूरा नहीं किया।

उनकी उम्र 33-56 के बीच की थी। सभी प्रौढ़ावस्था के मधुमेही थे और उनमें से 9 रोगी शिविर आरंभ होने के समय दवा ले रहे थे। इसके बावजूद 4 रोगियों का रक्त-शर्करा-स्तर बढ़ा हुआ था।

शिविर प्रारंभ होने पर सभी ने दवा बंद कर दी और मधुमेह के लिए निर्धारित भोजन लेते रहे। उनके खाली पेट और भोजन के बाद वाले रक्त-शर्करा-स्तर की जाँच की गयी। फिर उनकी योगचर्या आरंभ हुई जो निम्न प्रकार थी–

आसन – पवन मुक्तासन 1 एवं 2, सूर्य नमस्कार, शशांकासन, उष्ट्रासन और वज्रासन।

प्राणायाम – नाड़ीशोधन, भ्रामरी और उज्जायी।

हठयोग – लघु शंखप्रक्षालन, कुंजल, नेति।

शिथिलीकरण – योगनिद्रा और सरल अजपा जप।

दो सप्ताह के कोर्स के बाद खाली पेट और भोजन के बाद का उनका रक्त-शर्करा-स्तर लिया गया। कोर्स की समाप्ति के बाद सभी प्रतिभागियों ने तनाव, सिर दर्द और पाचन सम्बन्धी लक्षणों से छुटकारे का अनुभव किया। उन्हें आन्तरिक प्रसन्नता की भी अनुभूति हुई।

परिणाम

परीक्षण का परिणाम नीचे की तालिक से स्पष्ट होगा। 'F' से खाली पेट और 'PP' से भोजन के बाद का संकेत है। खाली पेट में सामान्य 80 – 120 के बराबर है और भोजन के बाद वाले में सामान्य 140 (मि.ग्रा. %) से कम के बराबर है।

रोगी	11-9-82	20-9-82
1.	F 80 PP 155	F 80 PP120
2.	F 105 PP 175	F 80 PP140
3.	F 80 PP 100	F 85 PP135
4.	F 85 PP 140	F 75 PP 125
5.	F 95 PP 190	F 80 PP 135
6.	F 80 PP 190	F 90 PP 155

रोगी	11-9-82	20-9-82
7.	F 75 PP 120	F 85 PP 130
8.	F 150 PP 250	F 96 PP 130
9.	F 95 PP 180	F 90 PP 140
10.	F 124 PP 168	F PP 116
11.	F 80 PP150	F 78 PP 125

यह ध्यान देने की बात है कि 11.9.82 का रक्त-शर्करा-स्तर मधुमेह की दवा बंद करने के 2-3 दिनों के बाद का है। रोगी सं0 3, 4, 7 के प्रथम सामान्य रक्त-शर्करा-स्तर पर ध्यान देंगे। संभव है इन लोगों ने मना करने के बाद भी दवा ली हो। बाद में नियम को सख्ती से लागू करने के बाद सभी ने दवा बिलकुल ही बंद कर दी। इसलिए दूसरा रक्त-शर्करा-स्तर सही स्थिति का द्योतक है। इस पर दवा कोई प्रभाव नहीं है।

रोगी सं. 1, 2, 5, 6, 8, 9, 10, 11 में योगाभ्यास आरंभ करने के पूर्व मधुमेहग्रस्त होने या मधुमेह की प्रवृत्ति बढ़ने का संकेत है। रोगी सं. 1 पन्द्रह वर्षों से मधुमेहग्रस्त था और नियमित दवा ले रहा था। रोगी सं. 2 ने 23.8.79 को खाली पेट 270 रक्त-शर्करा दिखाया था और दवा के बल पर उस पर नियन्त्रण प्राप्त किया था। रोगी सं. 3 का खाली पेट का रक्त-शर्करा-स्तर 3.8.75 को 125 एवं भोजनोपरान्त का स्तर 180 था। रोगी सं. 4 को 17.9.78 को खाली पेट में 100 और भोजन के बाद 200 रक्त-शर्करा रेकार्ड हुआ था और दवा के द्वारा रोग नियन्त्रित था। रोगी सं. 5 ने 8.9.82 को खाली पेट में 172 और भोजनोपरान्त 231 रेकार्ड कराया था। रोगी सं. 6 ने 7.9.82 को भोजन के बाद 252 रक्त-शर्करा-स्तर रेकार्ड कराया था। रोगी सं. 11 को शिविर में आने से पहले भोजन के बाद 185 रक्त-शर्करा स्तर था।

मधुमेह पर चर्चा

इस शिविर से हम लोगों को भविष्य में आयोजित होने वाले शिविरों के लिए रोगियों के चयन और तैयारी में अधिक सावधानी बरतने की सीख मिली। शिविर में आने के एक सप्ताह पूर्व से ही दवा बन्द कराकर रोगी की ब्लड शुगर जाँच करा लेनी चाहिए। इस शोध से रोगी और चिकित्सक दोनों के

लिए दो महत्त्वपूर्ण बिन्दु उभर कर आये। पहली बात यह कि योगाभ्यास से बड़े प्रभावकारी ढंग से तुरंत ब्लड शुगर लेवल नीचे चला जाता है। यह बिना दवा के संभव होता है, जिसमें किसी प्रकार का खतरा नहीं है। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि सभी रोगियों ने अपने अन्दर बहुत अच्छा अनुभव किया।

दमा अनुसंधान

कानपुर शिविर में 18 व्यक्तियों को बहुत पूर्व से दमा था और इनमें से 14 व्यक्तियों ने कोर्स पूरा किया। उनकी उम्र 14 – 70 के बीच थी। कुछ को मौसम के अनुसार दमा का प्रकोप होता था और कुछ को तीव्र एवं प्रचण्ड दौरे पड़ते थे जिसमें श्वास-नली का वायुमार्ग अवरुद्ध हो जाता था।

14 रोगियों में से 10 का चयन मेडिकल कॉलेज द्वारा विभिन्न जाँच के लिए किया गया।

परिणाम

जिन 8 रोगियों ने पूरे परीक्षण में भाग लिया, उन्हें 2 समूहों में बाँटा गया था; एक समूह में ऐसे रोगी थे जो नियमित रूप से स्टेरॉयड का सेवन कर रहे थे या जिन्हें दमा के तीव्र दौरे के समय स्टेरॉयड की आवश्यकता पड़ती थी और दूसरे समूह में ऐसे रोगी थे जिन्हें स्टेरॉयड की आवश्यकता नहीं पड़ती थी।

समूह 1, जिसमें स्टेरॉयड पर निर्भर रहने वाले 6 रोगी थे, उनके FEV में गिरावट आयी या कोई सुधार नहीं हुआ। केवल एक के VC में सुधार परिलक्षित हुआ। इस समय के रोगी लम्बे समय से, लगभग 1 – 27 वर्ष से स्टेरॉयड ले रहे थे। जिस रोगी के VC में सुधार परिलक्षित हुआ, वह केवल दमा के तीव्र दौरे के समय स्टेरॉयड लिया करता था। समूह दो में दो रोगी थे, जिन्होंने स्टेरॉयड नहीं ली थी, उनके FEV में बहुत अधिक सुधार परिलक्षित हुआ, किन्तु VC में नहीं, बल्कि एक रोगी में इसमें गिरावट ही आयी।

दमा पर चर्चा

दमा की यौगिक उपचार विधि में सामान्यत: दो सप्ताह के बाद से ही रोगी को अपनी दशा में सुधार परिलक्षित होता है। पूर्ण सुधार में छ: मास का समय

लग सकता है जो रोग की तीव्रता पर निर्भर करेगा। जिनके प्रकोप की तीव्रता कम थी और स्टेरायड नहीं लेते थे उनमें दो सप्ताह के बाद ही सुधार दिखाई पड़ा, जबकि स्टेरायड लेने वालों में रोग की अवस्था में घटाव और उद्दीपन, दोनों होते रहे। जो रोगी स्टेरायड नहीं ले रहे थे, उन्हें FEV में तीव्र सुधार के साथ-साथ अनेक महत्त्वपूर्ण लाभों का भी अनुभव हुआ।

दमा के मूल्यांकन के लिए FEV एक महत्त्वपूर्ण परीक्षण है, क्योंकि यह नापता है कि नि:श्वसन कितनी आसानी से होता है और दमा एक ऐसी बीमारी है जिसमें नि:श्वसन कष्टप्रद हो जाता है।

स्टेरायड लेने वाले रोगियों को सलाह दी गयी कि दवा की मात्रा आधी कर दें। कुछ दिनों के बाद उन्हें श्वसन में कठिनाई का अनुभव हुआ। विशेषकर रात में। यह संभवत: इसलिए हुआ कि स्टेरायड ने एड्रीनल ग्रन्थियों के कार्यकलाप को दमित कर दिया था और उसकी खुराक घटाने पर शरीर के तन्त्र में असंतुलन पैदा हो गया। स्टेयरायड या अन्य दवाओं की पूरी मात्रा नहीं लेने के कारण उन्हें श्वसन में कठिनाई हो रही थी, फिर भी यौगिक विधि से ही उन्होंने इस कठिनाई का मुकाबला किया, दवायें नहीं लीं।

इससे यह निष्कर्ष निकला कि रोगी स्टेरायड के चंगुल से छुटकारा पाना चाहते थे। रोगमुक्त होने की दिशा में यह एक कठोर कदम है।

यह जानना भी जरूरी है कि कई रोगी बाल्यकाल से ही स्टेरायड ले रहे थे। दमा की चिकित्सा में स्टेरायड अन्तिम अस्त्र है जो रसायन-चिकित्सा में प्रयोग में लाया जाता है। जब तक नितान्त आवश्यक न हो, उसका उपयोग नहीं करना चाहिए। एक बार इसका नियमित सेवन शुरू कर देने पर इसे छोड़ना कठिन हो जाता है। बाहर से स्टेरायड लेने पर शरीर से इसका उत्पादन बढ़ जाने पर मधुमेह होने की संभावना बढ़ जाती है।

योग थेरेपी में इस विश्वास के साथ हठ-योग (षट् कर्म), आसन, प्राणायाम और शिथिलीकरण आदि का अभ्यास कराते हैं कि शरीर के भीतर स्टेरायड और अन्य हार्मोन्स का संतुलित उत्पादन इनके द्वारा आरंभ हो सकता है और मस्तिष्क के केन्द्रीय नियन्त्रण-कक्ष के द्वारा स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र पुनर्संतुलित हो सकता है। शक्तिशाली और कुप्रभाव पैदा करने वाली दवाओं से तो यह श्रेष्ठतर है। दवाओं के उपयोग के पूर्व चिकित्सकों को चाहिए कि रोगी को यौगिक विधियों का परीक्षण करने के लिए अभिप्रेरित करें।

शिविर के प्रतिभागियों ने बताया कि स्टेरायड से अल्पकालीन लाभ ही प्राप्त होता है और धीरे-धीरे उसकी मात्रा बढ़ानी पड़ती है। योग से उन्हें तत्कालिक लाभ प्राप्त होता दिखाई पड़ा। प्रात: योग-सत्र पूरा करते ही उन्हें दिन में दवा लेने की आवश्यकता नहीं महसूस होती थी। अधिकतर प्रतिभागियों का मत था कि छ: महीने तक योगोपचार को चला कर उसके परिणाम को देख कर ही आवश्यकता होने पर दवा का सहारा लेंगे।

दमा, मधुमेह और उच्च रक्तचाप शिविर, जमशेदपुर

जमशेदपुर में 30.1.1983 से 8.2.1983 तक दमा, मधुमेह और उच्च रक्तचाप के लिए शिविर संचालित किया गया। 100 से अधिक मरीजों ने इसमें हिस्सा लिया। कोर्स 10 दिनों से अधिक तक चला। प्रतिभागियों को आसन, प्राणायाम, ध्यान, शिथिलीकरण और हठ-योग-षट्कर्म बताये गये। इसमें टिस्को, टाटा मेन हॉस्पिटल और मेडिकल कॉलेज एवं रक्त-कोष ने सक्रिय सहयोग प्रदान किया।

मधुमेह अनुसंधान

छ: रोगियों को योग शिविर के पूर्व और पश्चात् जाँचा गया। खाली पेट और भोजन के बाद की रक्त-शर्करा एवं मूत्र का परीक्षण किया गया। शिविर के कुछ दिन पूर्व दवाएँ बन्द कर दी गयी थीं, भले ही उनका प्रभाव कुछ दिनों तक बना रहा हो। दस दिन के शिविर के बाद तो दवाओं का प्रभाव बिलकुल समाप्त हो गया होगा। मधुमेह और दमा के परिणाम निम्नांकित तालिका से ज्ञात होंगे–

परिणाम

F=उपवास, PP=भोजनोपरान्त, U=मूत्र-शर्करा; रक्त शर्करा (mg%)

रोगी	31-1-83	8-2-83
1.	F75 PP 102 U nil	F70 PP 90 U nil

रोगी	31-1-83	8-2-83
2.	F 120	F 102
	PP 162	PP 132
	U nil	U nil
3.	F 140	F 110
	PP 195	PP 142
	U 3+	U nil
4.	F 182	F 152
	PP 195	PP174
	U 3+	U +
5.	F 304	F 305
	PP 450	PP 387
	U 3+	U 3+
6.	F 168	F 146
	PP 210	PP 168
	U 3+	U nil

मधुमेह पर चर्चा

सभी रोगियों को कुछ-न-कुछ सुधार का अनुभव हुआ। रो. सं. 5 इंसुलिन पर था और उसके बावजूद रोग नियन्त्रण में नहीं था। इस प्रकार के मामलों में लम्बी योग चिकित्सा की आवश्यकता होती है।

दमा

15 रोगियों के फेफड़ों के कार्य का परीक्षण मेडिकल कॉलेज द्वारा शिविर के पूर्व और पश्चात् किया गया। उससे साधारण, मौसमी और गंभीर प्रकार के परिणाम प्राप्त हुए।

परिणाम

(PFR=फुप्फुसीय प्रवाह दर लीटर/मिनट; FEV=बलपूर्वक नि:श्वसन की माप प्रतिशत में)

	PFR		FEV	
रोगी	पूर्व	पश्चात्	पूर्व	पश्चात्
1.	200	240	59	59
2.	200	220	58	62
3.	275	420	84	76
4.	340	360	64	64
5.	450	510	200	100
6.	450	500	81	81
7.	300	320	53	53
8.	220	220	69	68
9.	200	270	92	92
10.	550	580	86	90
11.	150	220	53	54
12.	340	550	75	73
13.	410	460	63	72
14.	550	550	72	65
15.	150	250	67	67

चर्चा

डॉ. व्यंकटेश का कथन है कि शिविर के आरंभ में हॉल रोगियों के खाँसने, घरघराने और छींकने से गनगना रहा था, किन्तु चौथे या पाँचवें दिन हॉल में नीरवता और शान्ति का वातावरण छा गया। न कोई खाँसता था, न घरघराता था और न किसी की छींक सुनाई पड़ती थी।

फेफड़ों के कार्य की जाँच से पता चला कि प्राय: सभी प्रतिभागियों में सुधार हुआ था। जो रोगी जितना ही जवान था उसमें सुधार उतना ही अधिक दिखाई पड़ा।

मधुमेह के रोगियों के रक्त-शर्करा-स्तर की जाँच शिविर के पूर्व और कोर्स के बाद में की गई। अधिसंख्य व्यक्तियों में स्पष्ट सुधार दिखाई पड़ा।

रक्तचाप की भी जाँच कोर्स के पूर्व और बाद में की गई। इसमें भी स्पष्ट गिरावट नजर आयी। कुछ मामलों में कोई अन्तर नहीं दिखाई पड़ा।

इन परिणामों को देखकर तो यही निष्कर्ष निकलता है कि योगाभ्यास से दमा, मधुमेह और रक्तचाप में निश्चित लाभ प्राप्त होता है।

दमा, मधुमेह और उच्च रक्तचाप शिविर, बेगूसराय

योग संस्थान, बेगूसराय में 1.6.84 से 21.6.84 तक दमा, मधुमेह और उच्च रक्तचाप पर शिविर आयोजित किया गया। इसमें आई० एम० ए० बेगूसराय के चिकित्सकों का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ। इस शिविर से उस क्षेत्र में योग के प्रति लोगों की रुचि बढ़ी। यह शिविर आश्रम के वातावरण में आयोजित किया गया था, इसलिए इसके परिणाम काफी उत्साहवर्द्धक रहे।

मधुमेह अनुसंधान

चार रोगियों के जाँच-परिणाम नीचे की तालिका में दिये गये हैं।
F=उपवास, PP=भोजनोपरान्त; सभी परिणाम मि.ग्रा. में हैं।

रोगी	पूर्व		पश्चात्	
1.	F208	PP247	F90	PP94
2.	F128	PP213	F -	PP171
3.	F112	PP143	F108	PP134
4.	F216	PP412	F124	PP241

इन चारों मामलों में निश्चित सुधार दिखाई पड़ता है। रोगी सं. 1 और 4 में नाटकीय सुधार है।

दमा अनुसंधान

दमा के रोगियों के भी कई परीक्षण किये गये। अधिकतर लोगों ने अपने अन्दर अच्छा महसूस किया। ग्रीष्म ॠतु से अचानक वर्षा ॠतु आ जाने के कारण कुछ को ज्वर हो गया। कठिनाइयों के बावजूद 4 रोगी शिविर में टिके रह गये, जिनके परिणाम काफी अच्छे रहे।

परिणाम

रोगी		पूर्व	पश्चात्
1.	WCC	14,600	6,600
	E	56	42
2.	WCC	10,300	7,800
	E	6.4	2
3.	WCC	10,000	6,500
	E	7	1
4.	WCC		
	E	23	15

सभी रोगियों के ब्लड सेल काउन्ट और इस्नोफिल में गिरावट रेकार्ड की गई। इससे संकेत मिलता है कि योग में प्रतिरक्षण-प्रणाली को प्रभावित करने की क्षमता है।

सामान्य निष्कर्ष

सभी शिविरों की सफलता से समुदाय और चिकित्सक वर्ग में योग के प्रति अभिरुचि और उत्साह बढ़ा। इन शिविरों के अनुभव के आधार पर कई कठिनाइयों और नये बिन्दुओं की जानकारी मिली। कई प्रतिभागियों की अपेक्षा थी कि शिविर समाप्त होने तक उनका रोग समाप्त हो जायेगा और आगे उन्हें कुछ करने की आवश्यकता नहीं रह जायेगी। उन्हें समझाना पड़ा कि उनके यौगिक जीवन का वह प्रारंभिक काल था और अभ्यास, शुद्धिकरण, सुदृढ़ता और स्वास्थ्य में निपुणता प्राप्त करने में समय लगेगा।

इन शिविरों में लोगों को बार-बार याद दिलाया गया कि स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिए नियमित रूप से कुछ अभ्यास करने होंगे। ऐसा नहीं कि कुछ अच्छे नुस्खे सीख लिये और बाद में उन्हें भूल गये। यह अनुभव में आना आवश्यक है कि परिवर्तन स्वाभाविक रूप से आता है और हमें अपनी जीवनशैली, अपनी आदतों और वृत्तियों के उन अंशों में परिवर्तन लाना होगा जिनके कारण रोग पैदा हुए थे। यह भी कि योगाभ्यासों को नियमित रूप से और सुसंगत ढंग से करते रहना होगा।

इन परीक्षणों में एक बड़ी कठिनाई इन्हें लम्बे समय तक चलाते रहने के बारे में पैदा हुई। यह कार्य असंभव-सा प्रतीत हुआ, क्योंकि शिविर के बाद प्रतिभागियों से निरन्तर सम्पर्क बनाये रखना बड़ा कठिन था। इसके बावजूद कुछ रोगी हमारे संपर्क में बने रहे और अपनी प्रगति और कठिनाइयों से हमें अवगत कराते रहे।

एक दूसरा महत्त्वपूर्ण बिन्दु उभरा कि शिविर के प्रयोगों को मानक-स्तर प्रदान करने के लिए आश्रम जैसा वातावरण आवश्यक है। आश्रम-जीवन में आहार, विहार, जीवनशैली और गृह-कार्यगत समस्याओं एवं चिन्ताओं से दूर रहकर नये प्रकार के अनुभवों से गुजरने का अवसर प्राप्त होता है।

जिन शिविरों में आवासीय व्यवस्था की गयी थी वहाँ बेहतर परिणाम प्राप्त हुए। यह इस बात का द्योतक है कि आश्रम-परिवेश की विश्रान्त जीवनचर्या के साथ कुछ आसन, प्राणायाम के अभ्यास से कई प्रकार के रोगों पर नियन्त्रण पाया जा सकता है।

इन शिविरों में प्राप्त अनुभवों के आधार पर गंगा दर्शन परिसर में शोध-सुविधाओं के बीच हम विज्ञान सम्मत स्पष्ट और निश्चित परिणाम की आशा करते हैं।

दमा, मधुमेह और उच्च रक्तचाप पर आयोजित शिविरों से यह निष्कर्ष निकला कि योग द्वारा निश्चय ही लोगों को शारीरिक एवं मानसिक कल्याण के लिए बहुत कुछ दिया जा सकता है। शिविर से लौटने वाले प्रतिभागियों को जीवन के प्रति एक नयी आशा जगी और उन्हें लगा कि इन रोगों से मुक्ति मिल सकती है। अन्य लोग भी इन अनुभवों से लाभ उठा सकते हैं और योग तथा आधुनिक चिकित्सा-विधियों को साथ लेकर जीर्ण और असाध्य मनोशारीरिक रोगों से छुटकारा पा सकते हैं।

32

निदान-गृह-परीक्षण

संस्थागत परिवेश में दमा और मधुमेह की यौगिक चिकित्सा भारत, जापान और ऑस्ट्रेलिया में की गयी, जिससे सम्बन्धित प्रतिवेदन निम्नलिखित हैं–

ऑस्ट्रेलिया

एम. के. टंडन ने प्रतिवेदित किया है कि तीव्र, दीर्घकालिक श्वास रोधक दमा के 11 रोगियों को, जिनकी उम्र 53–65 के बीच थी, अस्पताल में यौगिक प्रशिक्षण दिया गया। उन्हें यौगिक श्वसन और आसन सिखाये गये।*[1] 11 अन्य उसी उम्र के रोगियों को भौतिक चिकित्सा की श्वसन-क्रिया सिखायी गयी। नौ महीने तक उनके कई वैज्ञानिक परीक्षण किये गये।

टण्डन का कथन है कि योग शिक्षण वाले समूह के श्वसन में बेहतर सुधार हुआ और उनकी भार-क्षमता में वृद्धि हुई। वे सरलता से थकान पर काबू पा लेते थे और श्वास की कमी के आघात को श्वसन सम्बन्धी अभ्यासों द्वारा बिना दवा की सहायता के सम्भाल लेते थे। उनका दावा था कि उनकी छाती की दशा में निश्चित सुधार हुआ है। दमा की चिकित्सा की दृष्टि से ये परिणाम बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। यदि इस प्रकार के परिणाम दमा के पुराने मरीजों और बुजुर्गों को प्राप्त हो जायें तो योग-चिकित्सा दमा-रोग के लिए अत्यन्त उपयोगी हो जायेगी।

मुम्बई

डॉ. एम. वी. दिवेकर द्वारा मुम्बई के एक मेडिकल कॉलेज में 52 जीर्ण और दीर्घकालीन मधुमेह के रोगियों पर प्रयोग किया गया। वे सभी 3 वर्षों से अधिक

से मधुमेहग्रस्त थे।*[2] वे सभी 55 वर्ष से कम के लोग थे। योग में आने के पूर्व वे आहार-संयम और ओषधि-सेवन पर थे। चार मास तक उन्हें योगासन का प्रशिक्षण दिया गया। उसके बाद उनके वजन और रक्त-शर्करा की जाँच की गई। 18 व्यक्तियों का रक्त-शर्करा-स्तर सामान्य हो गया जो इंसुलिन ले रहे थे और बीस व्यक्ति जो मुख-मार्ग से ओषधि ले रहे थे उनका रक्त-शर्करा स्तर भी सामान्य हो गया। तब उनकी दवा और इंसुलिन की खुराक कम करनी पड़ी। दो मरीजों को दवा बिल्कुल बन्द कर दी गयी।

डॉ. दिवेकर ने 38 मोटे व्यक्तियों पर भी योगासनों का प्रयोग किया। उनमें से 18 व्यक्तियों का 2 – 4 कि० ग्रा०, 2 व्यक्तियों का 4 – 6 कि० ग्रा० और एक व्यक्ति का 8 कि० ग्रा० वजन घट गया। सभी रोगियों ने अपने भीतर सुकून महसूस किया और तनाव, सिर दर्द एवं अपच से राहत मिली।

यह दिलचस्प बात है कि सिर्फ आसन और हल्के प्राणायाम का उपयोग कर इतने अच्छे परिणाम प्राप्त किये गये। हमें बताया गया कि सिर्फ आसन से मधुमेह ठीक नहीं होता और दवा पर निर्भरता बनी रहती है। किन्तु हमारा अनुभव है कि यौगिक साधना में लघु शंखप्रक्षालन, प्राणायाम और योगनिद्रा जोड़ देने से सभी स्तरों पर सुधार परिलक्षित होता है। डॉ. दिवेकर के अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि नियमित रूप से दीर्घ काल तक आसनों का अभ्यास करने से ही उनका प्रभाव दिखाई पड़ता है।

मधुमेह और कुछ अन्य रोगों के उपचार में व्यायाम का महत्त्व है और इससे लाभ पहुँचता है। योग पारम्परिक व्यायाम नहीं है, इसमें आसन हैं जो व्यायाम से बढ़कर हैं। डॉ. दिवेकर का कथन है, "कुछ लोग आलोचना करते हैं कि योग-थेरेपी शारीरिक व्यायाम के सिवा और कुछ नहीं है। पर बात यह नहीं है। योगासन का उद्देश्य शारीरिक लोच और मानसिक विश्रान्ति प्रदान करना है। हमारे प्रतिभागी 30 मिनट के योगोपचार के बाद थके और क्लान्त नहीं दिखायी पड़े। इसके विपरीत सही तरीके से योगासन करने के बाद उन्हें विश्रान्ति और प्रसन्नता की अनूभूति हुई।"

डॉ. दिवेकर ने दमा पर भी परीक्षण किया। 170 रोगी 7 – 72 आयु वर्ग के थे और दवा नहीं ले रहे थे। उन्हें प्राणायाम (हस्त मुद्रा, मुख भस्त्रिका और छाती थपथपाकर आरोग्यकर श्वसन) छः पाठ्य-क्रमों में सिखाया गया। कक्षा के पूर्व और पश्चात् और फिर 3 – 6 सप्ताह के बाद फेफड़ों के कार्य की जाँच की गयी। नियमित अभ्यास करने वाले 64 व्यक्तियों में अद्भुत

सुधार (43.3%) और 59 व्यक्तियों में सामान्य सुधार (39.9%) हुआ। "योगोपचार से इस उल्लेखनीय सफलता के कारण दमा की चिकित्सा में योग का अधिकाधिक उपयोग होना चाहिए।"

सान्ताक्रूज, मुम्बई के योग संस्थान ने 23 दमा रोगियों पर 4 महीने का अध्ययन किया और उनमें 87% सुधार पाया। 1976 में इस संस्थान में उन रोगियों ने नियमित योगाभ्यास किया था और उन्हें निश्चित लाभ प्राप्त हुआ था।*[3] अधिकतर लोगों ने अपने दैनिक जीवन-क्रम, आहार और प्रवृत्तियों में परिवर्तन लाया था।

जयपुर

योगोपचार-सह शोध केन्द्र, जयपुर स्वामी आनन्दानन्द द्वारा संचालित है। 1961 से 1980 तक उन्होंने दमा और मधुमेह की चिकित्सा यौगिक विधि से की। मधुमेह के 532 व्यक्तियों की चिकित्सा की गयी, जिनमें से 407 ने पूर्ण उपचार प्राप्त किया। इनमें से 267 (65.4%) रोग-मुक्त हो गये अथवा उन्हें यथेष्ट लाभ हुआ। 140 (34.4%) को लाभ नहीं हुआ।

दमा के 472 रोगी केन्द्र पर आये, जिनमें 348 ने पूरी चिकित्सा करायी और इनमें 219 (62.9%) या तो बिल्कुल ठीक हो गये अथवा काफी सुधार हुआ। 97 (27.9%) रोगियों को लाभ नहीं हुआ और 32 (9.2%) लाभ के बारे में संशयग्रस्त थे।

दूसरे शिविर में स्वामी आनन्दानन्द एवं धर्मवीर ने 283 मधुमेह के रोगियों की यौगिक विधि से चिकित्सा की, जिनकी उम्र 14–68 वर्ष थी और वे 1 से 10 वर्ष से अधिक से रोगग्रस्त थे। 23% रोगियों ने उपचार पूरा कराये बिना ही कोर्स छोड़ दिया। रोगियों को तीन समूहों में विभक्त कर दिया गया–

1. हल्का (30%), खाली पेट का रक्त-शर्करा स्तर 120 मि.ग्रा. % तक
2. मध्य– 180 मि.ग्रा. % तक
3. तीव्र– 180 मि.ग्रा. % से ऊपर

यह जानना दिलचस्प होगा कि रोगियों में सिर्फ 32% का आनुवंशिक रोग का इतिहास था, जबकि 5.8% रोगियों को संवेगात्मक अथवा आभ्यन्तरिक कारणों से रोग हुआ था। इनमें एक अत्यन्त तेजस्वी, संवेदनशील और गंभीर प्रकृति का था। परिवेश के साथ असामंजस्य के कारण भी कुछ को परेशानी थी।

कुंजल, वस्त्र धौति, शंखप्रक्षालन, आसन और नौलि क्रियाओं के बाद और पूर्व रोगियों का रक्त परीक्षण किया गया। परीक्षण से पता चला कि 283 रोगियों में 25% रोगियों को योगोपचार से लाभ हुआ और उनका रक्त-शर्करा स्तर सामान्य हो गया। मूत्र-शर्करा भी शून्य पाया गया। 19 रोगियों ने परीक्षण हेतु कार्बोहाइड्रेट युक्त भोजन किया, पर उनके रक्त-शर्करा स्तर में वृद्धि नहीं हुई।

27% रोगियों में रक्त-शर्करा स्तर में काफी सुधार हुआ, हालाँकि सामान्य स्तर से वह थोड़ा ऊपर ही रहा। उन्होंने दवा बन्द कर दी, फिर भी स्थिति ठीक रही। 25% रोगियों को लाभ नहीं हुआ। वे या तो किशोरावस्था में थे या वृद्धावस्था में पहुँच चुके थे और लम्बे समय से इंसुलिन पर थे। कुछ ने अभ्यास ठीक से नहीं किया।

यह परीक्षण आश्रम परिवेश में सम्पन्न हुआ और इससे प्रतिभागियों के मन से दबाव और तनाव को कम करने में मदद मिली। आश्रम वातावरण में परिवर्तन, दैनिक जीवन-क्रम में नियमितता, यौगिक माहौल और स्वामी एवं चिकित्सक के परामर्श एवं मार्गदर्शन के कारण यह सफलता प्राप्त हुई।

जापान

डॉ. जॉन गोयके ने प्रतिवेदित किया है कि अस्पताल में दाखिल 10 दमा रोगियों में से 7 में उल्लेखनीय सुधार हुआ और कुछ मामलों में तो दमा के सारे लक्षण विलुप्त हो गये। इन रोगियों को तीन वर्षों की चिकित्सा की अवधि में योग एवं अन्य विधियों से उपचारित किया गया। शेष तीन रोगियों को भी कुछ लाभ प्राप्त हुआ। रोगियों और चिकित्सकों ने योग की महत्ता को स्वीकार किया। डॉ. गोयकी का कथन है कि रोगियों में सर्वप्रथम क्रोध और रुदन की अभिव्यक्ति हुई, उसके बाद एकाग्रता का विकास हुआ, जिससे दमा के लक्षण मिटने लगे। अधिकतर रोगियों ने दावा किया कि वे दमा के प्रकोप को यौगिक विधियों से झेल लेते हैं। यौगिक श्वसन से दौरे के समय उत्पन्न दुश्चिन्ता में कमी आती है।

कन्याकुमारी

आर. भागरत्न और एच. आर. नागेन्द्र, विवेकानंद केन्द्र योग थेरेपी एण्ड रिसर्च सेन्टर, कन्याकुमारी का प्रतिवेदन है कि 15 मधुमेह के रोगियों पर योग का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। रोगियों को 1 – 28 वर्षों से मधुमेह था।

एक इंसुलिन पर निर्भर करने वाली महिला के पैर में बहुत पुराना घाव था, जो षट्कर्म, आसन और प्राणायाम के अभ्यास से ठीक हो गया। तीन महीने के अभ्यास के बाद वजन में भारी कमी आई। लेखकों का कथन है, "ये उल्लेखनीय सुधार मुख्य रूप से वजन में कमी और गहरी शिथिलीकरण क्रियाओं से आयी दबाव में कमी के कारण हुए।"

दमा के 46 रोगियों में दौरे की गंभीरता, दौरे की अवधि, दौरे की संख्या प्रति सप्ताह, नाक की एलर्जी और दवा की खुराक में कमी आई। लेखकों का मत है कि ये सुधार गहरे शिथिलीकरण, भय के तत्त्व के निष्कासन और योगाभ्यास से प्राप्त आन्तरिक जागरूकता और शक्ति के कारण परिलक्षित हुए।

पुणे

कैवल्यधाम, पुणे के एम. वी. भोले का प्रतिवेदन है कि एक वर्ष तक सिर्फ योगोपचार के कारण 114 दमा रोगियों में 76% लोग रोग मुक्त हुए या उनमें काफी सुधार हुआ। जो लोग योगाभ्यास को जारी रख सके उनमें निरन्तर सुधार हुआ और वे दमा के प्रकोप को यौगिक उपचार से ही सम्भालते रहे।

योग विद्याधाम, पुणे के संचालक आर. वी. रानाडे का प्रतिवेदन है कि 22 दमा के रोगियों में से 7 में अच्छा सुधार हुआ। 12 में साधारण सुधार हुआ और 3 में मामूली सुधार हुआ। 6 से 12 महीने के फालोअप से रोगियों में निरन्तर सुधार होता गया। इस केन्द्र पर मधुमेह के 16 रोगियों को भी अच्छा लाभ प्राप्त हुआ।

तिरुपति

राज्य लक्ष्मी का प्रतिवेदन है इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ रिसर्च इन योग एण्ड एलायड सान्सेस में 20 मधुमेह रोगियों की चिकित्सा हुई, जिनमें से 15 को अच्छा लाभ प्राप्त हुआ, 3 को साधारण लाभ हुआ और 2 को मामूली लाभ हुआ।

टी. एम. श्रीनिवास और बी. एल. मेटी ने तिरुपति स्थित योग अस्पताल में 30 से 60 दिन तक दैनिक योगाभ्यास करने वाले 12 दमा रोगियों की जाँच की। आधे रोगियों में प्राणशक्ति और बलपूर्वक श्वास छोड़ने में काफी सुधार हुआ। तीन रोगियों पर योगोपचार का प्रभाव परिलक्षित नहीं हुआ।

वाराणसी

बी. एच. यू. के डॉ. आर. सिंह, आर. एम. शेहिवार और के. एन. उदूपा का प्रतिवेदन है कि उन्होंने अपने योग केन्द्र पर 85 मधुमेह रोगियों का उपचार किया। ये सभी नये रोगी थे जिनमें कोई जटिलता नहीं थी। 30% में पूर्ण लाभ, 31.6% में काफी लाभ, 28.3% में आंशिक लाभ और 11.6% रोगियों को कोई लाभ प्राप्त नहीं हुआ। सिर्फ दो रोगियों की हालत में गिरावट आयी।

दमा के 115 रोगियों में से 22.6% को पूर्ण लाभ, 28.3% को काफी लाभ, 35.7% को आंशिक लाभ, 13.9% को कोई लाभ नहीं और एक रोगी की हालत में गिरावट दर्ज की गई।

लेखकों का कथन है कि सभी रोगियों की लम्बी मेडिकल चिकित्सा हो चुकी थी जिससे उन्हें लाभ नहीं प्राप्त हुआ था। योगाभ्यास के बाद कई रोगियों को दवा की आवश्यकता कम हो गई। कुछ रोगियों ने दवा छोड़ दी, फिर भी ठीक रहे।

अन्य

मन:चिकित्सक एन. एस. वाहिया ने दावा किया है कि अस्पताल परिसर में योग-विधि से उपचारित 15 रोगियों में 93% सुधार दर्ज हुआ। यह उपचार छ: सप्ताह चला। रोगियों की एकाग्रता में वृद्धि हुई। ध्यान के अभ्यास ने आसन-प्राणायाम के प्रभाव में वृद्धि की। उपचार का उद्देश्य आत्मानुभूति और आत्मजागरण था, जिससे दवा से अधिक कारगर तरीके से रोगियों की दुश्चिन्ता में कमी आयी।

पटना के ए. के. चौधरी का प्रतिवेदन है कि मधुमेह के 11 रोगियों में से 9 बिलकुल चंगे हो गये और एक किशोर रोगी में भी सुधार हुआ। 7 दमा के रोगियों पर अध्ययन किया गया जो सबके सब चंगे हो गये। रुक्मिणी और सिन्हा ने भी मधुमेह में योग के प्रभाव पर प्रतिवेदन दिया है।

निष्कर्ष

ऊपर जितने परीक्षणों की चर्चा की गयी है उससे स्पष्ट है कि दमा और मधुमेह की चिकित्सा में योगोपचार से वास्तविक लाभ होता है। सिर्फ एक अध्ययन से पता चला कि 200 रोगियों में से 3 रोगियों पर योगोपचार का हानिकारक

प्रभाव पड़ा। योगोपचार में हानिकारक या घातक प्रभाव का पैदा होना आश्चर्य का विषय है, विशेषकर जब योगाभ्यास विशेषज्ञों के निर्देशन में संचालित होता है। ऐसा तब होता है जब व्यक्ति योगाचार्य के निर्देशों का ठीक से अनुपालन नहीं कर पाता है।

लेखकों का मत है कि योगाभ्यास से यदि दमा और मधुमेह में लाभ नहीं भी हुआ, फिर भी रोगियों ने आन्तरिक सुधार और सुकून का अनुभव किया।

इस अध्याय में चर्चित प्रतिवेदनों से ज्ञात होता है कि परीक्षणों में जिन रोगियों ने भाग लिया उनमें परीक्षण की अवधि में दवा की सहायता लिए बिना ही सुधार दिखाई दिया। इनमें से अधिसंख्य रोगी पारम्परिक विधि से बिना किसी लाभ के चिकित्सा करा चुके थे। इससे योग-चिकित्सा में कुछ अधिक शोध करने की आवश्यकता प्रतीत होती है ताकि चिकित्सक अपने रोगियों को अधिक संख्या में योग चिकित्सा के लिए भेजे सकें।

आशा की जाती है कि इस प्रकार के और कई परीक्षण और अध्ययन कर दीर्घ-कालीन मनोदैहिक और जीर्ण रोगों में योगोपचार की सच्ची भूमिका का निर्धारण हो सके।

33

योग की कार्यविधि

हाल के इस अनुसंधान से कि उच्च रक्तचाप, मधुमेह और दमा जैसे रोगों की चिकित्सा में योग का महत्त्व है, चिकित्सकों और शोध-कर्त्ताओं को, जो इन रोगों से लोहा ले रहे हैं, योग पर नियन्त्रित परीक्षण कर योग के रहस्यों का उद्‌घाटन करने और शरीर एवं मन पर प्रभाव पैदा करने की उसकी क्षमता को वैज्ञानिक शब्दावली में व्याख्यायित करने के लिए प्रेरित किया। कार्य आरम्भ हो चुका है, फिर भी, कुछ करना शेष है।

मन और शरीर को प्रभावित करने की योग की क्षमता पर दो दृष्टियों से शोध हुआ है। प्रथम है व्यक्तियों को प्रभावित करने की योग की क्षमता और दूसरी है रोग से निबटने की उसकी क्षमता। इस अध्याय में सामान्य जनों पर योग के प्रभाव पर चर्चा करेंगे और कुछ अध्ययन प्रस्तुत करेंगे जिसमें दर्शाया गया है कि योग किस प्रकार रक्त-शर्करा को घटाता है और सामान्य स्थिति में वह कैसे हमारे चयापचय को प्रभावित करता है। इनके परिणामों को रोग की स्थिति में योग को समझाने में प्रयोग में लाया जा सकता है।

वाराणसी में शोध

डॉ. उदुपा, सिंह और सत्तिवार ने 20-26 आयु-वर्ग सामान्य स्वस्थ पुरुषों का अध्ययन किया।*[1] उन लोगों ने छः महीनों तक प्रतिदिन एक घण्टा योगासन, प्राणायाम और हठ योग सीखा। प्रारम्भ में 3 महीने और छः महीने के बाद उनका शारीरिक परीक्षण किया गया। परिणाम निम्नांकित हैं–

1. शरीर का वजन और पेट का आकार-प्रकार घटा। मधुमेह और सामान्य स्वास्थ्य के लिए यह बड़ा आवश्यक है।

2. श्वसन-दर में कमी आई, फेफड़ों की क्षमता, श्वास रोकने की अवधि और छाती के विस्तार में वृद्धि हुई। यह फेफड़ों की कार्य-क्षमता में सुधार का द्योतक है। सामान्य जीवनीशक्ति और दमा की स्थिति में सुधार की दृष्टि से इसका बड़ा महत्त्व है।
3. नब्ज की दर में और रक्तचाप की दर में साधारण कमी दिखाई पड़ी। शारीरिक दबाव की स्थिति में नब्ज की दर के कम बढ़ने की प्रवृत्ति दिखी। जीवनीशक्ति और मानसिक थकान की वृद्धि दर में गिरावट इस बात का संकेतक है कि शारीरिक बल-वीर्य और दबाव को झेलने की शक्ति में वृद्धि हुई।
4. एड्रीनल हार्मोन्स के स्राव में वृद्धि हुई।
5. रक्त-शर्करा स्तर में उल्लेखनीय गिरावट आयी।
6. ब्लड कोलेस्ट्रोल के स्तर में भी भारी गिरावट दर्ज की गई।
7. सीरम प्रोटीन के स्तर में भारी वृद्धि हुई।

डॉ. उदुपा और उनके सहयोगियों ने इन निष्कर्षों की सम्पुष्टि कई परीक्षणों के आधार पर की है। उन्होंने परीक्षणों के आधार पर निम्नलिखित परिणामों का भी उल्लेख किया है –

1. मस्तिष्क की अल्फा-तरंगों में वृद्धि हुई जो शिथिलीकरण का द्योतक है।
2. स्मरण-शक्ति में वृद्धि और तन्त्रिका-ह्रास में सुधार।
3. मानसिक थकान में कमी।
4. थाइराइड (अवटु-ग्रन्थि) में सुधार।
5. मूत्र में टेस्टोस्टेरोन की वृद्धि हुई जो जनन-ग्रन्थि पर प्रभाव का द्योतक है।

डॉ. उदुपा ने उज्जायी प्रणायाम (7 मिनट) और उसके बाद भस्त्रिका प्राणायाम (दस मिनट) पर भी अध्ययन किया। इन शक्तिवर्द्धक अभ्यासों से एड्रीनल-ग्रन्थि के स्राव में वृद्धि हुई और रक्त-शर्करा में ह्रास हुआ।[*2]

डॉ. उदुपा और जेवनिंग के निष्कर्षों का मनोवैज्ञानिक महत्त्व है। उनसे स्पष्ट है कि हम लोग योगाभ्यास से अपनी पीयूष-ग्रन्थि, एड्रीनल ग्रन्थि, थाइराइड और जनन-ग्रन्थि को प्रभावित कर सकते हैं। उनसे यह विदित है कि हम योग के द्वारा अन्त:स्रावी ग्रन्थियों को भी प्रभावित कर उनसे अच्छे कार्य करा सकते हैं और अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व में परिवर्तन ला सकते हैं।

दिल्ली में अनुसंधान

एच. एस. नायर और उनके सहयोगियों ने डॉ. उदुपा के निष्कर्षों की सम्पुष्टि की है।*[3] 30 पुरुषों का नियन्त्रित अध्ययन किया गया और छः महीने के आसन, प्राणायाम एवं ध्यान के बाद योग-समूह के सम्बन्ध में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए–

1. हृदय-गति तथा रक्तचाप की दर में कमी और फेफड़ों के संवातन (वेंटिलेशन) एवं ऑक्सीजन की खपत में कमी, विश्रान्त अवस्था और चयापचय की दशा में कमी की द्योतक है।
2. मस्तिष्क की अल्फा तरंगों की दर में वृद्धि भी विश्रान्त अवस्था की सूचक है।
3. यान्त्रिक कुशलता में वृद्धि और व्यायाम की दशा में ऑक्सीजन की खपत में कमी, साथ ही रक्त के लेक्टिक एसिड के स्तर में अपरिवर्तन अच्छे स्वास्थ्य का सूचक है।

लेखकों का कथन है कि छः महीने तक नियमित योगाभ्यास से दैहिक और जैव रासायनिक कार्यकलाप में सुधार होता है। हठ-योग, प्राणायाम और बन्धों के अभ्यास से स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र और अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ प्रभावित होती हैं। इससे पूर्ण शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त होता है।

पाण्डिचेरी में अनुसंधान

के. एस. गोपाल और उनके सहयोगियों ने 22 छात्रों द्वारा आसन, प्राणायाम, मुद्रा, बन्ध और क्रिया छः महीने तक करने के बाद उनका अध्ययन कर निम्नलिखित निष्कर्ष प्रतिवेदित किये हैं–

1. ग्यारह छात्रों की रक्त-शर्करा में कमी
2. बारह छात्रों के ब्लड कोलेस्ट्रोल में कमी
3. सात छात्रों की कुल प्रोटीन में वृद्धि, दस छात्रों के अल्बूमीन में वृद्धि और छः छात्रों के ग्लोबुलीन में कमी।*[4]

लेखकों का मत है कि छः महीने के अभ्यास के बाद जो भी परिवर्तन हुए है; सभी लाभदायक हैं। इन लाभकारी जैव रासायनिक प्रभावों से संकेत मिलता है कि मधुमेह, सन्धि-शोथ और मोटापे एवं अन्य समस्याओं के सन्दर्भ में योग और हठ योग का अभ्यास कारगर होगा।

सारांश

योगासन, प्राणायाम, हठ-योग, शिथिलीकरण एवं ध्यान पर किये गये इन परीक्षणों से योग-विधियों की कार्य-प्रणाली पर प्रकाश पड़ता है। एक बात स्पष्ट रूप से उभर कर आती है कि योग से हमें उन्नत शारीरिक स्वास्थ्य, बलवर्द्धन, सहिष्णुता और आमतौर से पूर्ण शारीरिक और मानसिक कल्याण की प्राप्ति होती है।

योग के शारीरिक प्रभाव के सम्बन्ध में अभी निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है। अभी और कई परीक्षण होंगे और पूर्व के परीक्षणों में प्राप्त विविधताओं को एकरूपता प्रदान कर उनका मानक रूप निर्धारित किया जायेगा।

इन परीक्षणों में विविध तकनीकों का उपयोग किया गया है और जहाँ एक ही प्रकार की तकनीकें व्यवहार में लायी गयी हैं उनके बारे में भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि एक ही विधि एवं एक ही प्रकार की कुशलता से उनका उपयोग किया गया। फलत: कहीं-कहीं परिणाम में भिन्नता आयी है।

दूसरा विचारणीय बिन्दु यह है कि कुछ विधियाँ सामान्य तौर पर शरीर को संतुलित करती हैं। जैसे, सर्वांगासन थाइराइड के बढ़े हुए कार्य को घटाता है और जहाँ थाइराइड का कार्य शिथिल है वहाँ उसको गतिशील बनाता है।

नाड़ी शोधन प्राणायाम दूसरा संतुलन उत्पन्न करने वाला अभ्यास है। भस्त्रिका प्राणायाम या जोर लगाकर किये जाने वाले अन्य अभ्यास चयापचय को तीव्र करते हैं, रक्तचाप में वृद्धि करते हैं और कुछ दूसरे अभ्यास हैं जो चयापचय और रक्तचाप को घटाते हैं।

हम लोगों को किसी एक परिणाम पर ही अपने को सीमित नहीं रखना है, बल्कि व्यक्ति के सम्पूर्ण मनोदैहिक परिप्रेक्ष्य में इनका मूल्यांकन करना चाहिए और विषयगत एवं वस्तुगत दोनों बिन्दुओं को एक साथ देखना चाहिए। अभ्यास में कई परिवर्तनीय बिन्दु हैं जिनको ध्यान में रखना चाहिए। जैसे, यदि आसन स्थिर या गतिशील है तो श्वसन, मुद्रा अथवा बन्ध का उपयोग करना चाहिए या नहीं। अभ्यासों की अवधि अभ्यास कौशल आदि कई अन्य बातें हैं।

आसन और प्राणायाम के अभ्यास के मूलत: निम्नलिखित प्रभाव अंकित किये गये जो शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक विश्रान्ति के सूचक हैं–

1. शारीरिक वजन में कमी।
2. श्वसन-दर में कमी और श्वसन-क्षमता में वृद्धि।
3. हृदय गति और ब्लड-प्रेशर में कमी।

4. ब्लड-शुगर और कोलेस्टरॉल स्तरों में कमी और सीरम प्रोटीन स्तर में वृद्धि।
5. रक्त-जमाव में कमी की प्रवृत्ति
6. व्यायाम-क्षमता/सहिष्णुता में सुधार।
7. ठण्ढ लगने पर हल्की प्रतिक्रिया।
8. एड्रीनल, गोनाडल और थाइराइड ग्रन्थियों के स्त्रवण में वृद्धि।
9. मस्तिष्क की अल्फा तरंगों में वृद्धि।
10. स्मरण-शक्ति में सुधार।
11. मानसिक क्लान्ति और तन्त्रिकीय रोगों में कमी।

ध्यान और शिथिलीकरण की कतिपय विधियों से एड्रीनल कॉर्टेक्स का स्राव कम गया और पूर्व के परीक्षणों में चयापचय-कार्य में शिथिलता देखी गयी थी।

इन विधियों को मधुमेह की स्थिति में कैसे काम में लाया जाय? निम्नलिखित प्रकार से इनसे मदद ली जा सकती है–

1. वजन की कमी करने में,
2. रक्त-शर्करा घटाने में–इंसुलिन को चालू करके और अथवा संवेदी कार्यकलाप को कम करके और/अथवा ऊतकों का बेहतर उपयोग करके, संभवत: तीनों के सम्मिलित कार्य से यह पूरा होगा।
3. मानसिक तनाव कम करके।

मधुमेह में उक्त तीनों कारकों का महत्त्व है। दमा में योग निम्नलिखित प्रकार से सहायक होगा–

1. फेफड़ों को मजबूत और कार्यशील बनाकर,
2. मानसिक तनाव को विश्रान्त कर, जिस कारण दौरे पड़ते हैं,
3. रक्त कॉर्टिसोन स्तर को यौगिक विधि से बढ़ाकर

इन सिद्धान्तों के सत्यापन के लिए अभी और शोध की आवश्यकता है।

चक्र को जाग्रत करना

आज तक के शोधों से संकेत प्राप्त होता है कि आसन, प्राणायाम और शिथिलीकरण एवं ध्यान के संतुलित कार्यक्रम से तन्त्रिका-तन्त्र, अन्त:स्रावी ग्रन्थियों और चयापचय के कार्यों को उत्प्रेरित और संतुलित किया जा सकता है। आसनों द्वारा चक्रों को जाग्रत करने की बात कर योगीजन भी इसी ओर

इशारा करते थे। उदाहरणार्थ, अन्त:स्रावी ग्रन्थि के कार्य में तीव्रता आने से मणिपुर चक्र की गतिविधि में तीव्रता बढ़ती है। एड्रीनल ग्रन्थि के कार्यकलाप में वृद्धि के बावजूद रक्त-शर्करा और मानसिक या शारीरिक दबाव में वृद्धि नहीं हुई। आशंका के विरुद्ध मानसिक विश्रान्ति और शारीरिक स्वास्थ्य में सुधार के लक्षण दिख पड़े। यह इस बात का द्योतक है कि शरीर की दबाव वहन क्षमता में विकास हुआ है और नियमित योगाभ्यास से शरीर की रोग निरोधक शक्ति में बढ़ोत्तरी हुई है। योगियों का मत है कि योग द्वारा मणिपुर चक्र को क्रियाशील करने से शरीर स्वस्थ होकर प्राणों की चमक से दमकने लगता है; फिर रोग निरोधक क्षमता उसमें आ जाती है।

इन अध्ययनों से स्पष्ट है कि न केवल मणिपुर, बल्कि स्वाधिठान, विशुद्धि और आज्ञा चक्रों को भी योगाभ्यास द्वारा जाग्रत किया जा सकता है।

आत्म-नियमन का महत्त्व

योग के सम्बन्ध में एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हम बिना ओषधि की मदद लिए आन्तरिक दैहिक और मानसिक वातावरण को परिशुद्ध कर सकते हैं और अपनी आन्तरिक दैहिक प्रक्रियाओं को कार्यशील बना सकते हैं। इससे हमें आत्म-स्वतन्त्रता, आत्म-विश्वास और आत्म-जागरण का आश्वासन मिलता है। विशेष विधियों से विशेष प्रभाव उत्पन्न करना ही वैज्ञानिक पद्धति का आधार है। योग में निपुणता प्राप्त होने पर हम जान जाते हैं कि अपने शरीर में संतुलन प्राप्त करने हेतु हम कौन-कौन से अभ्यास करें? उदाहरणार्थ, किसी तन्त्र-विशेष को गतिशील बनाने के लिए थोड़ा अधिक आसन और प्राणायाम और किसी तन्त्र विशेष की गतिशीलता को शिथिल करने के लिए थोड़ा अधिक शिथिलीकरण और ध्यान। अपने अभ्यासों के अनुपात, लय, अवधि और समय में सामंजस्य लाकर हम अपनी आन्तरिक प्रणाली को स्वयं विनियमित कर पूर्ण स्वास्थ्य और मानसिक शान्ति प्राप्त कर सकते हैं।

34

श्वसनी दमा पर अनुसंधान

रायपुर मेडिकल कॉलेज द्वारा अध्ययन

योग के अभ्यास अत्यन्त प्राचीन हैं, जिनके द्वारा योगाभ्यासी शरीर की कुछ क्रियाओं के साथ ही स्वचालित तन्त्रिका-तन्त्र पर नियन्त्रण प्राप्त कर सकता है। योग का यह भी दावा है अभ्यासी चयापचय एवं अन्त:स्रावी ग्रन्थियों की कार्यप्रणाली को नियन्त्रित कर ऊर्ध्व चेतनता को प्राप्त कर सकता है। यानी योग मूलत: रोगों की चिकित्सा की प्रणाली नहीं है, फिर भी चिकित्सा-साहित्य में उच्च रक्त-चाप, मधुमेह, दमा, पेप्टिक अल्सर आदि में योगोपचार की चर्चा है। इसका उपयोग रोग-नाश एवं रोग-निरोध दोनों के लिए किया जाता है।

सामान्यत: बाह्य दृश्यों के अवलोकन से भावनात्मक और मानसिक प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न होती हैं। जिसके परिणामस्वरूप हाइपोथैलेमिक-पिट्यूटरी-ऑटोनामिक-एडरनल अक्ष प्रतिक्रियाएँ होती हैं, जो प्राय: शारीरिक परिवर्तनों के रूप में दृष्टिगोचर होती हैं, जैसे पसीना आना, हृद्-क्षिप्रता, धड़कन बढ़ना, रक्त चाप बढ़ना आदि, और कुछ रोगियों में श्वसनी-संकुचन (संभवत: केवल दमा के रोगियों में)। यौगिक तकनीकों का उपयोग शिथिलीकरण के लिए किया जा सकता है। शिथिलीकरण का अर्थ हुआ बाह्य इन्द्रियों से प्राप्त उत्तेजनाओं के प्रति असंवेदनता एवं प्रतिक्रियाहीनता। यौगिक अभ्यासों से उपलब्ध शिथिलीकरण द्वारा भौतिक शरीर में व्यक्त परिवर्तनों, जैसे पसीना आना, हृदय की धड़कन में वृद्धि, धड़कन, उच्च रक्तचाप आदि और कुछ रोगियों (दमा) की श्वासनली में संकुचन को रोका जा सकता है। इस प्रकार योग संवेगात्मक एवं मानसिक प्रतिक्रियाओं में परिवर्तन ला सकता है।

1978 में श्वसनी दमा के रोगियों की श्वास-निष्कासन-प्रणाली पर योग के प्रभाव के अध्ययन हेतु योजना बनायी गयी।

सामग्री एवं विधियाँ

27 रोगियों (स्त्री-पुरुष) को तीन समूहों में विभाजित किया गया–
समूह 1 में 12 रोगी थे, जो दौरे के समय दवा लेते थे।
समूह 2 में 11 रोगी थे, जो ब्रोन्कोडाइलेटर के द्वारा रोग पर नियन्त्रण रखते थे।
समूह 3 में 4 रोगी थे, जिनका दौरा काफी मात्रा में ब्रोन्कोडाइलेटर लेने पर भी नियंत्रण में नहीं आता था।

सभी रोगियों को योग विद्यालय, रायपुर में छः सप्ताह का यौगिक प्रशिक्षण दिया गया। उसके बाद वे अपने घरों पर योगाभ्यास करने लगे। योगाभ्यास के अन्तर्गत जल नेति, कुंजल, वस्त्रधौति और प्राणायाम सम्मिलित किये गये थे। योगाभ्यास की अवधि में वे दवा नहीं ले रहे थे। तीव्र दौरा पड़ने पर ही ब्रोन्कोडाइलेटर दिया जाता था।

बलकृत प्राणिक क्षमता (FVC), एक सैकण्ड में बलपूर्वक नि:श्वसन की मात्रा (FEV), FEV/FVC अनुपात, और अधिकतम श्वसन क्षमता (MBC) का अध्ययन अभ्यास आरम्भ होने के पूर्व प्रति सप्ताह (योगाभ्यास अवधि में) और छः सप्ताह बाद कोर्स के अन्त में किया गया। सुधार की चिकित्सकीय जाँच योगाभ्यास के पूर्व एवं पश्चात् लक्षणों में हुए आराम के आधार पर की गयी।

अध्ययन एवं चर्चा

तीन रोगियों ने एक सप्ताह के अन्दर ही अभ्यास छोड़ दिया। प्रोग्राम के दौरान समूह 1 के 9 और समूह 2 के 6 रोगियों को दमा का दौरा नहीं पड़ा। उनमें लक्षणगत और श्वास-निष्कासन सम्बन्धी सुधार दिखाई पड़ा। इन 15 रोगियों को नजला के साथ दमा का इतिहास जुड़ा हुआ था। बाद में दमा के दौरे की बारम्बारता और अवधि में कमी आयी। कोर्स की समाप्ति के समय दौरा पड़ने पर दी जाने वाली दवा में 30–40% की कमी की गयी। रोगियों की शक्ति, एकाग्रता, कार्य में रुचि आदि में वृद्धि हुई।

साथ ही निकोलस एवं उनके साथियों ने अन्य लाभ भी देखे, जैसे स्वास्थ्य का अनुभव, आत्मविश्वास एवं ऐसे कार्यों को करने की क्षमता जिन्हें रोगी

पहले नहीं कर पाते थे। फिच एवं उनके सहयोगियों ने दमा के रोगियों के लिए तैराकी के प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान उनमें महत्त्वपूर्ण शारीरिक एवं भावनात्मक परिवर्तन देखे हैं।

उनतीस प्रतिशत रोगियों में अभ्यास की अवधि में श्वसनी के अतिसंकुचन के बने रहने के कारण उन्हें ब्रोन्कोडाइलेटर्स देने पड़े। समूह 3 के दो रोगियों में कोई सुधार दिखायी नहीं दिया और वे स्टेटस दमा की अवस्था में चले गये, जिसके कारण उन्हें अस्पताल ले जाने की आवश्यकता पड़ी।

सत्रह रोगियों को बाह्य या गौण दमा और सात रोगियों को अन्तरस्थ प्रकार का दमा था। इन दो प्रकार के दमा के रोगियों में हुए सुधार में कोई अन्तर नहीं पाया गया।

परीक्षण की अवधि की समाप्ति पर समूह 1 के FEV एवं FVC मूल्यों में क्रमश: 34–23% और 15% सुधार देखा गया। FEV/FVC अनुपात 64.33 से 67.33 हो गया। छ: सप्ताह के प्रशिक्षण की समाप्ति पर समूह 2 के रोगियों के FVC में 20% और FEV में 9% सुधार हुआ। समूह 3 के VFT (वायु-संचार क्रिया परीक्षण) में परीक्षण की अवधि या उसके बाद कोई महत्त्वपूर्ण सुधार नहीं हुआ। निकोलस एवं उसके सहयोगियों ने इसी समूह के फुफ्फुसीय कार्य परीक्षण में अमहत्त्वपूर्ण परिवर्तन अंकित किये।

समूह 1 के रोगियों का रोग प्रारम्भिक अवस्था में था और समूह 2 में दमा के गम्भीर रोगी थे। योगाभ्यास से इनके रोगसूचक लक्षणों एवं वायु संचार में कुछ सुधार हुआ। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि सामान्य रूप से योगाभ्यास दमा की आरम्भिक अवस्था में अपेक्षाकृत अधिक लाभकारी होता है। इन अभ्यासों से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए यह परामर्श दिया जाता है कि रोग की आरंभिक स्थिति में ही इनका अभ्यास शुरू कर दें।

ये योगाभ्यास किस प्रकार अपना प्रभाव डालते हैं, यह अभी ठीक-ठीक ज्ञात नहीं हो सका है। इनमें से कुछ अभ्यास संभवत: वेगस नाड़ी की प्रतिवर्त प्रतिक्रिया को बदलकर अपना कार्य करते हैं। चार क्रियाओं में से कुंजल क्रिया और वस्त्र धौति का श्वसन तन्त्र पर अधिक प्रभाव देखा गया है। प्राणायाम में श्वास को रोका जाता है, इस अवधि में pCo_2 एवं pH में परिवर्तन होता है। यह भी संभवत: किसी-न-किसी प्रकार अपना प्रभाव डालता है। ये योगाभ्यास संभवत: हाइपोथैलेमस पर कुछ प्रभाव डालते हैं (जो कि अब तक समझा नहीं जा सका है)।

योग के अभ्यासों में मांसपेशियों का व्यायाम नहीं होता, न ही उनके कारण ऑक्सीजन की खपत में वृद्धि होती है, बल्कि यह पाया गया है कि इस दौरान शरीर का तापमान गिरता है। पसीने के द्वारा इसे बढ़ाया जा सकता है, जो कुंजल क्रिया के बाद सामान्य रूप से आता ही है। यह सर्वज्ञात तथ्य है कि मांसपेशियों की क्रियाशीलता में कमी, हाइपोथर्मिया और ऑक्सीजन की खपत में कमी से चयापचय की प्रक्रियाओं में कमी आती है। दमा के उपचार में यह लाभकारी है या नहीं, यह केवल प्रयोगों से जाना जा सकता है। इन चार अभ्यासों में से कौन सा अभ्यास सबसे उत्तम है, यह तभी कहा जा सकता है जब प्रत्येक अभ्यास पर अलग-अलग अध्ययन किया जाता है। इस पर हमारे विभाग में कार्य चल रहा है।

इन रोगियों के सम्बन्ध में दो बातें ध्यान देने योग्य हैं। जिन लोगों ने समूहों में योगाभ्यास किया उन्हें वैसे लोगों से अधिक लाभ प्राप्त हुआ जो अकेले में अभ्यास कर रहे थे। ऐसा लगता है कि समूह में अभ्यास करते समय व्यक्ति अपनी मनोवैज्ञानिक समस्याओं को भूलकर समूह की प्रवृत्ति से परिचालित होता है, यह महत्त्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक तथ्य है। रोगी को एक प्रकार की संतुष्टि मिलती है जब वे देखता है कि वही अकेला रोग से पीड़ित नहीं है, या पारस्परिक सहानुभूति से स्वास्थ्य की भावना आती है।

दूसरी बात यह है कि जिन लोगों ने योग को अभिरुचि एवं ललक के साथ स्वीकार किया, वे उन लोगों से अधिक लाभान्वित हुए जिन्होंने प्रारम्भ में इसके प्रति विरोध प्रकट किया और बाद में जैसे-तैसे अभ्यास में भाग लिया। एक बात और देखने में आयी कि वरिष्ठ चिकित्सकों द्वारा योगाभ्यास की सलाह देने पर रोगियों का विश्वास अधिक बढ़ता है और योग के प्रति उनका रुझान भी बढ़ता है। अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक लाभ स्थान के प्रभाव, आसानी से स्वीकार कर लेने, समूह चिकित्सा तथा धार्मिक विश्वासों पर निर्भर रहते हैं, इसका भी ख्याल रखना चाहिए।

दमा एक वृत्तान्तिक लक्षण है। अत: 6 से 12 सप्ताह के अध्ययन से निश्चित निष्कर्ष निकालना सम्भव नहीं है, विशेषकर रोग की प्रारम्भिक या नियन्त्रित अवस्था में, जबकि सहज या प्राकृतिक रूप से ही रोग के उपशमन की सम्भावना बनी रहती है। फिर भी किसी रोगी को आश्चर्यजनक लाभ नहीं हुआ, जिससे यह स्पष्ट होता है कि योग के अभ्यास रोग की प्रारम्भिक अवस्था में उपयोगी होते हैं, जब रोग का प्रकोप कम रहता है। योगाभ्यास

के लिए चुने गये व्यक्ति में इसके प्रति अत्यधिक रुझान, सरलता से स्वीकार करने का भाव हो तथा उसे अन्य सम्बद्ध बीमारियाँ न हों। जहाँ तक सम्भव हो योगाभ्यास समूह में करना चाहिए। इसके लिए दमा के रोगियों का एक समूह बना लें।

श्वसन तन्त्र की क्रियाकलाप तथा अतिरिक्त लाक्षणिक लाभ, जैसे, स्वस्थ होने की भावना, समूह ऊर्जा का साहचर्य और अभ्यास के प्रति सहनशीलता का प्रशिक्षण इस विचार का समर्थन करता है कि यदि ये अभ्यास आरम्भ में ही दृढ़ निश्चय के साथ किये जायें तो लाभ मिल सकता है। दीर्घकालिक असमर्थ बना देने वाली अवस्था को रोका जा सकता है या नहीं, यह अभी नहीं कहा जा सकता, किन्तु इसकी संभावना अवश्य है।

सारांश

योगाभ्यास के 6 सप्ताह के सत्र की अवधि में सत्र के दौरान तथा सत्र की समाप्ति पर श्वसनी दमा के 27 रोगियों के वायुसंचार क्रिया परीक्षण (VFT) का अध्ययन पहले किया गया। तीन रोगियों ने बीच में ही सत्र छोड़ दिया। 62.5% रोगियों के VFT एवं चिकित्सकीय लक्षणों में कुछ सुधार दृष्टिगोचर हुआ। ये सभी दमा के आरंभिक रोगी थे, या ऐसे रोगी जिन पर दमा का अधिक प्रकोप नहीं था। जिन रोगियों पर दमा का अधिक प्रकोप था और रोग गम्भीर अवस्था में था, उनमें कोई सुधार नहीं हुआ। बाह्य और अन्तरस्थ दमा के रोगियों के सुधार में कोई अन्तर परिलक्षित नहीं हुआ।

35

कलकत्ता आश्रम में मधुमेह शिविर

डॉ.एन.सी.पण्डा., बुर्ला मेडिकल कॉलेज (उड़ीसा)

1976 में पहली बार भारत में इंटरनेशनल डायबिटीज फेडरेशन की बैठक हुई जिसमें स्पष्ट हुआ कि मधुमेह और योग के क्षेत्र में व्यवस्थित ढंग से अभी तक शोध नहीं हुआ है। मैंने महसूस किया कि योग चिकित्सा-विज्ञान को बहुत कुछ दे सकता है और इसी उद्देश्य से मैंने मधुमेह का कार्यक्रम बनाया जिसमें यौगिक पद्धति की पूरी जाँच-पड़ताल हो सके।

1978 में योग विद्यालय, कलकत्ता में मधुमेह के 15 रोगियों के लिए एक महीने के कोर्स का आयोजन किया। उन्हें दो समूहों में विभक्त किया, एक दवा लेने वाला और दूसरा दवा न लेने वाला। कुछ रोगी आसन करते थे, किन्तु नियन्त्रित समूह आसन नहीं करता था। इस बीच कुछ-कुछ अन्तराल पर चार बार परिणामों का परीक्षण लिया गया। परिणाम इस प्रकार प्राप्त हुए–

रोगी सं० 1 रक्त-शर्करा-स्तर कोर्स आरम्भ के पूर्व खाली पेट 185 और भोजनोपरान्त 211 था। एक महीने के आसन के बाद नियन्त्रित भोजन पर खाली पेट 140 और भोजन के बाद 151 रक्त-शर्करा-स्तर निकला। इसके बाद उन्हें आसन, संयत भोजन और दो दालमोल गोली दिन में दो बार पर रखा गया। परिणाम निकला खाली पेट 111, भोजन के बाद 185। फिर एक दालमोल गोली दिन में दो बार लेने पर खाली पेट 104, भोजन के बाद 106 रक्त-शर्करा-स्तर निकला। योग और दवा के मेल से रक्त-शर्करा के उच्च स्तर को ठीक करने में बड़ी मदद मिली।

रोगी सं० 2 को सिर्फ योगासन और संयत भोजन पर रखा गया। आश्रम आगमन पर उनका रक्त शर्करा-स्तर 211/251 था। पचीस दिन के बाद उनका रक्त-शर्करा 120/135 हो गया, जो कि सामान्य स्तर है।

रोगी सं० 3 आश्रम-आगमन पर न सीढ़ी चढ़ सकता था और न चल सकता था। उसमें उल्लेखनीय सुधार हुआ और एक महीने के अभ्यास के बाद वह सीढ़ियों पर चढ़कर बिना थकान महसूस किये उतर सकता था।

मधुमेह का मुख्य कारण त्रुटिपूर्ण नियमन अथवा इंसुलिन की कमी है। इंसुलिन का स्तर घटने पर मधुमेह हो जाता है। कुछ रोगियों में इंसुलिन यथेष्ट मात्रा में उपलब्ध रहने पर भी कोशिकायें उसे अवशोषित नहीं कर पातीं। मधुमेह के अन्य कारण भी हो सकते हैं, किन्तु मुख्यत: व्यायाम की कमी और त्रुटिपूर्ण भोजन, जिसमें अधिक मात्रा में भोजन लेना सम्मिलित है, मधुमेह के लिए जिम्मेवार हैं। वंशानुगत कारक की भी इसमें भूमिका है, परन्तु योग के साथ संतुलित जीवनशैली को अंगीकार कर लेने पर इसे नियन्त्रण में लाया जा सकता है।

आदि मानव की जीवन प्रणाली हमसे बिलकुल भिन्न थी। आज हम शारीरिक श्रम कम करते हैं और दिन भर खाते रहते हैं। आधुनिक वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण सुविधाएँ बढ़ गयी हैं और मानव आरामतलब हो गया है। व्यायाम और शारीरिक परिश्रम बहुत कम हो गया है। यह शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए परम आवश्यक है।

इस सम्बन्ध में हाल में हुए शोध की चर्चा करना चाहूँगा। रेगिस्तानी चूहों पर एक प्रयोग किया गया। रेगिस्तान में उन्हें भोजन के लिए कड़ी मेहनत करनी पड़ती थी। जब इन्हें पिंजड़े में रखकर नियमित भोजन दिया जाने लगा तो वे छ: महीनों में मधुमेह ग्रस्त हो गये। फिर जब उन्हें सामान्य वातावरण में छोड़ दिया गया तो उनका मधुमेह जाता रहा। यह इस तथ्य का सूचक है कि यदि भोजन और व्यायाम को संतुलित कर दिया जाय तो मधुमेह प्रकट नहीं होना चाहिए।

अब यदि मधुमेह का कोई रोगी हमारे पास आता है तो सीधे उसे दवा नहीं देते, जैसा कि पाँच वर्ष पूर्व हम लोग किया करते थे। हम लोग उसे उचित आहार और यौगिक अभ्यास पर रखते हैं। अभी तक हम लोग यह नहीं समझ पाये हैं कि योग का कौन-सा घटक, आसन, प्राणायाम या ध्यान सबसे अधिक प्रभावी होता है। इसलिए हम लोग इस ओर कुछ और प्रयोग करेंगे और निश्चित निष्कर्ष प्राप्त करना चाहेंगे। योग थेरेपी का यह एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण घटक है।

योग और मधुमेह पर किये गये प्रयोगों से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि मधुमेह के रोगी अपने को असामान्य और असमर्थ नहीं समझें। मधुमेह के रोगी को सामान्य जीवन जीने के लिए योग के पास निश्चित साधन है।

36

योग की अद्भुत देन

डॉ. अब्राहम पी. कोट्टयम, केरल

1977 में जब मैं एम. डी. परीक्षा में बैठने वाला था मेरी टाँसिल (गलांकुर) का ऑपरेशन हुआ। शल्यक्रिया के बाद भी मैं कई शारीरिक और मानसिक कष्टों से परेशान था। मेरे शरीर में कई स्थलों पर दर्द और पीड़ा का अनुभव होता था। जब भी मैं कुछ पढ़ने के लिए बैठता था तो मेरुदण्ड के ऊपरी भाग (ग्रीवा) और निम्न भाग (कटि-प्रदेश) में दर्द होता था। इसके साथ पूरे शरीर में दर्द हो जाता था। मैं अध्ययन में एकाग्र नहीं हो पाता था। शल्य-चिकित्सा के तीन महीने बाद भी मेरे गले में परेशानी बनी रहती थी। प्रातःकाल बिस्तर से उठते ही न्यूनतम 20 से 30 छींकें होती थीं और नाक से पानी गिरता रहता था। इसके लिए मैं एण्टिबायोटिक्स और अन्य दवाएँ लिया करता था, किन्तु मेरा कष्ट दूर नहीं हुआ।

इसी साल एम. डी. का कोर्स पूरा कर मैंने एक संक्षिप्त कोर्स के लिए वल्लभ भाई चेस्ट इन्स्टीट्यूट में दाखिला लिया। मैंने श्वसनी-दमा के क्षेत्र में ही अपना अध्ययन गहन रूप से किया। तब से मैं इस तथ्य से अवगत हुआ कि एलोपैथिक मेडिसिन में दमा का इलाज नहीं है। मेडिकल चिकित्सा से मात्र लक्षणों को दूर किया जा सकता है।

इसी समय मुझे बिहार योग विद्यालय की एक पत्रिका हाथ लग गई जिसमें जल नेति के बारे में जानकारी मिली। मैंने नाक को स्वच्छ करने की इस सरल विधि का प्रयोग एक सप्ताह तक किया और मेरे शरीर पर इसका प्रभाव दिखाई पड़ने लग गया। तब से नियमित रूप से मैं जल नेति करता आ रहा हूँ।

उसके बाद मेरी आँखों का रोहा भी नेति से ही समाप्त हो गया। उसके कारण आँखों में जलन और भारीपन रहा करता था। विगत दस वर्षों से मैं रोग को मिटाने के लिए मरहम लगाया करता था। नेति के बाद मैंने कोई विलेप आँखों में नहीं डाला। अब मेरे नेत्रों में जलन और भारीपन नहीं है। नेत्र-विशेषज्ञ ने जाँच कर कह दिया है कि अब रोहा का नामोनिशान नहीं है।

प्रयोगात्मक साक्ष्य

अपने ऊपर किये गये प्रयोग से उत्साहित होकर मैंने अपने कुछ रोगियों पर भी नेति का प्रयोग किया। मैंने श्वसनी दमा पर ही इस प्रयोग को मुख्य रूप से आजमाया है और गत 8–9 महीनों की अवधि में 7–60 आयु-वर्ग के 116 स्त्री-पुरुष रोगियों का परीक्षण किया है। मैं निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि इनमें से 80–90 रोगियों में 80% सुधार परिलक्षित हुआ है। दमा की तीव्रता 'व्यायाम दमा' से आरम्भ होकर अन्तिम अवस्था स्टेटस दमा तक पहुँचती है। 'व्यायाम दमा' सबसे कम तीव्र दमा है। इसमें व्यायाम करते समय श्वास-नली में संकुचन के कारण फेफड़ों को ऑक्सीजन की आपूर्ति न्यून हो जाती है। आराम के समय इन्हें कोई कठिनाई नहीं होती। 'स्टेटस दमा' सर्वाधिक तीव्र और अन्तिम अवस्था का दमा है जिसमें विश्राम की अवस्था में भी फेफड़ों को आवश्यकतानुसार ऑक्सीजन नहीं प्राप्त होती।

दमा के रोगी को अपने रोग की स्थिति का आकलन इसी आधार पर करना चाहिए। योगोपचार क्रमशः कम तीव्रता से अधिक तीव्रता की ओर बढ़ता है और सामान्य स्थिति को प्राप्त करता है।

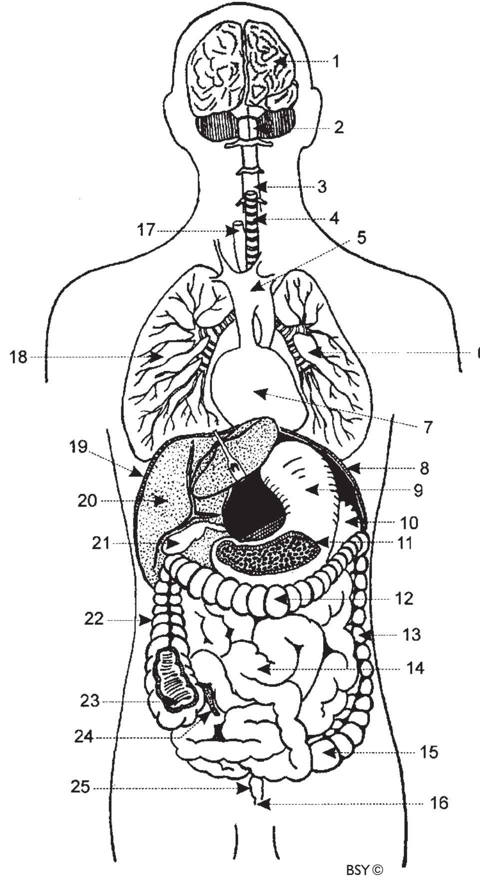
छाती फुलाकर और छाती को संकुचित कर सीने का मान लिया गया और सीने के विस्तार का अन्तर पता किया गया। 30–40 आयु-वर्ग के रोगी, जिनके सीने 1.5–2 से. मी. चौड़े थे, उनका विस्तार 4 या 5 से. मी. हो गया। यह परिणाम नियमित योग एवं प्राणायाम के अभ्यास से प्राप्त हुआ। यह बिलकुल सामान्य अवस्था का सूचक है।

जिन रोगियों को मैंने जल नेति पर रखा और प्राणायाम कराया उनमें से 70–80% रोगियों में 70% सुधार हुआ। उनके फेफड़ों की क्षमता बढ़ गयी। 70 वर्ष की आयु वालों के फेफड़ों की शक्ति में कम सुधार हुआ। कम आयु वाले रोगियों पर नेति और प्राणायाम का काफी अच्छा प्रभाव पड़ा और उनके फेफड़ों की माप लगभग सामान्य हो गयी।

मेरा शोध बड़ा सफल रहा और अपने अनुभव के आधार पर मैं साहसपूर्वक कह सकता हूँ कि दमा को निर्मूल करने का सर्वश्रेष्ठ साधन योग ही है। आधुनिक ओषधि श्वसनी के संकुचन को राहत पहुँचाती है अथवा श्वसनली के संकुचन को दूर करती है, जबकि यौगिक विधि रोगी को स्वास्थ्य की पूर्व अवस्था में ला देती है।

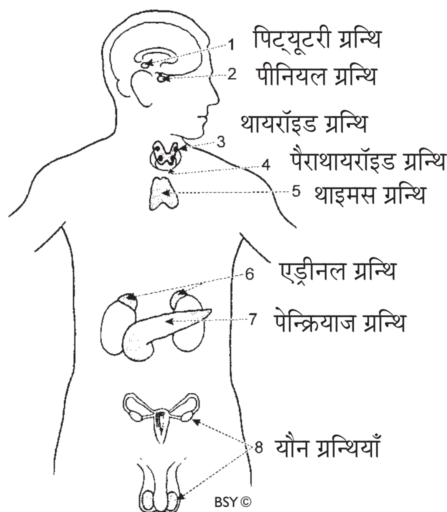
परिशिष्ट

आंतरिक अंगों के नाम



1. मस्तिष्क
2. रीढ़ की हड्डी
3. कशेरुका दण्ड
4. श्वास-प्रणाल
5. महाधमनी
6. बायाँ फेफड़ा
7. हृदय
8. मध्य-पटल
9. आमाशय
10. प्लीहा
11. अग्न्याशय
12. अनुप्रस्थ स्तम्भ (बड़ी आँत)
13. अवरोही स्तम्भ
14. छोटी आँत
15. अवग्रह स्तम्भ
16. गुदा
17. ग्रासनली
18. दायाँ फेफड़ा
19. मध्य पटल
20. यकृत
21. पित्ताशय
22. आरोही स्तम्भ
23. सीकम
24. पुच्छ
25. मलाशय

शरीर में अंत:स्त्रावी ग्रन्थियों की स्थिति

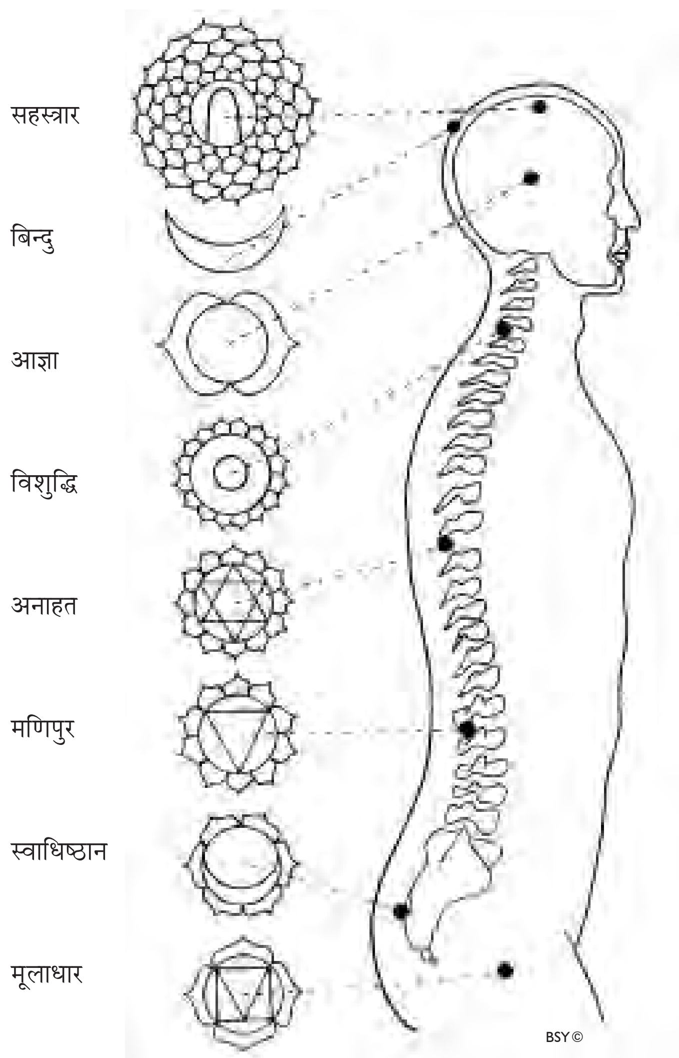


अंत:स्त्रावी प्रणाली स्नायु-प्रणाली की सहायक प्रणाली है। इस प्रणाली के प्रमुख घटक हैं विभिन्न रसायन, जिन्हें हार्मोन कहते हैं। ये हार्मोन विशेष नलिका-विहीन अंत:स्त्रावी ग्रंथियों द्वारा स्त्रावित होते हैं और सीधे रक्त प्रवाह में पहुँच जाते हैं। इन हार्मोनों का वितरण शरीर के समस्त अंगों में होता है तथा ये न केवल शारीरिक चयापचय के विभिन्न पक्षों को नियंत्रित करते हैं, वरन् शक्ति स्तर, मनोदशा, व्यवहार तथा मानसिक शक्ति को भी नियंत्रित करते हैं।

ये नलिका-विहीन ग्रंथियाँ हैं– सिर में पाई जाने वाली पिट्यूटरी तथा पीनियल, गले में पाई जाने वाली थायरॉयड तथा पैराथायरॉयड, गुरदों के ऊपर स्थित एड्रिनल तथा जनन ग्रंथियाँ। पैंक्रियाज वैसे तो अंत:स्त्रावी ग्रंथि नहीं है, परन्तु यह विभिन्न प्रकार के हार्मोन स्त्राव करने वाले कोशाओं से बनी होती है। इन कोशाओं को 'मधुवशि ग्रंथियाँ' कहते हैं जो कि मधुमेह में विशेष महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। यह गुर्दों के ठीक सामने स्थित होती हैं। ये सभी ग्रंथियाँ एक-दूसरे को प्रभावित करती हैं तथा विभिन्न हार्मोन में अंतर्प्रतिक्रिया भी होती है। यह इस प्रणाली का महत्त्वपूर्ण पक्ष है। यही कारण है कि किसी एक ग्रंथि में उत्पन्न असंतुलन का गहरा प्रभाव सारे शरीर में परिलक्षित होता है।

अत: अच्छे स्वास्थ्य हेतु आपस में संबद्ध इन ग्रंथियों की कार्य-प्रणाली सामान्य रखना तथा सम्पूर्ण प्रणाली के बीच संतुलन बनाये रखना आवश्यक है और इस उद्देश्य की पूर्ति ही इस पुस्तक का प्रमुख विषय है।

चक्रों का चित्र



भेषजीय शब्दावली

ऑक्सीटोसिन – एक पदार्थ के दूसरे में बदलने की प्रक्रिया, जिसमें ऑक्सीजन का उपयोग होता है तथा ऊर्जा मुक्त होती है। यह शरीर को चलाने वाली एक अति आवश्यक रासायनिक प्रक्रिया है।

ऑलफेक्टरी बल्ब – मध्य मस्तिष्क का एक भाग जो साइनस के ऊपर दोनों भौंहों के मध्य स्थित होता है। इसका सम्बन्ध घ्राणेन्द्रिय से है। यह भावनाओं एवं विभिन्न शारीरिक अंगों के कार्यों को स्थायित्व प्रदान करने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

अनुकम्पी तन्त्रिका-तन्त्र – ऑटोनॉमिक नर्वस सिस्टम का एक भाग। अनुकम्पी तन्त्रिकायें शरीर के विभिन्न अंगों को संचालित करने हेतु संवेग ले जाती हैं। जब ये उत्तेजित होती हैं तो ग्लाईकोजेनोलिसिस एवं एड्रिनलाइन के स्राव को उत्तेजित कर रक्त में शर्करा के स्तर को बढ़ा देती हैं।

इन्जेस्ट – कोई भी चीज शरीर के अंदर ले जाना, ग्रहण करना, जैसे, भोजन ग्रहण करना।

इन्टरकॉस्टल मसल्स – पसलियों के मध्य स्थिर मांसपेशियाँ।

इन्सोम्निया – अनिद्रा रोग।

इन्सुलिन – पैंक्रियाज की मधुवशि ग्रंथियों में स्थित बीटा कोशाओं द्वारा स्रावित हार्मोन। यह रक्त में शर्करा के स्तर को निम्न रखकर कार्बोहाइड्रेट के चयापचय को नियमित बनाए रखती है। इसके बिना भोजन द्वारा ग्रहण की गई शर्करा का उपयोग शरीर नहीं कर सकता है।

ऊतक (टिशु) – कोशाओं का समूह जिससे शरीर के विभिन्न अंग बनते हैं।

ये साधारणत: आन्तरिक अंगों को भिन्नित करने हेतु सबक्यूटेनियस तथा प्लेन टिशु के नाम से जाने जाते हैं।

उत्सर्जन – शरीर से अनावश्यक पदार्थों को निष्कासित करने की प्रक्रिया।

एड्रिनल ग्लैण्ड – गुर्दे के ऊपर स्थित दो अंत:स्रावी ग्रन्थियाँ जो दो भागों में विभक्त होती हैं। प्रथम भाग को कार्टेक्स कहा जाता है तथा यह ग्लुकोकार्टिकॉयड, मिनरलोकार्टिकॉयड तथा कुछ सेक्स स्टेरॉयड का स्राव करता है। दूसरे भाग को मेड्यूला कहा जाता है तथा यह एड्रिनलिन नामक हार्मोन का स्राव करता है।

एड्रिनलिन – स्नायविक उत्तेजना या रक्त में शर्करा की मात्रा में कमी के प्रतिक्रियास्वरूप एड्रिनल मेड्यूला के द्वारा स्रावित होने वाला हार्मोन। यह रक्त-पात्रों को संकुचित करता है, रक्त दाब को बढ़ाता है, हृदय को उत्तेजित करता है तथा शरीर को तीव्र मांसपेशीय क्रियाकलाप हेतु तैयार करता है। इसके अलावा यकृत से प्राप्त उद्दीपन के फलस्वरूप यह रक्त में शर्करा की मात्रा को बढ़ा देता है।

एड्रिनोकॉटिकोट्रोफिक हार्मोन (ए. टी. एच.) – हाइपोथेलेमस से निर्देश प्राप्त होने पर पिट्यूटरी ग्रंथि के दूरस्थ भाग से यह हार्मोन स्रावित होता है। यह एड्रिनल कार्टेक्स को उत्तेजित कर रक्त में शर्करा की मात्रा को बढ़ा देता है।

एनीमिया – रक्त दुर्बलता की अवस्था। यह रक्त में ऑक्सीजन-वाहक लाल रक्त-कणों की कमी या लाल रक्त-कणों में ऑक्सीजन-धारक पदार्थ (हिमोग्लोबिन) की अल्पता का द्योतक है।

एलर्जी – सामान्य उत्तेजक के प्रति व्यक्ति विशेष के शरीर द्वारा व्यक्त विचित्र रासायनिक प्रतिक्रिया, जबकि उत्तेजक की इतनी ही मात्रा से अन्य व्यक्ति पूर्णत: अप्रभावित रहते हैं।

एलर्जेन – वह पदार्थ है जो एलर्जी की प्रतिक्रिया के लिए उत्तरदायी है।

एलीमेन्ट्री (पोषक) – जो पचाने में उपयुक्त हो।

एलीमेन्ट्री ट्रैक (पाचन नलिका) – मुँह से प्रारंभ होकर ग्रासनली, आमाशय तथा आँतों से होते हुए मलद्वार पर समाप्त होने वाली नलिका के सदृश अंग, जिससे होकर ग्रहण किया गया अन्न यात्रा करता है।

ओवर एक्टिविटी (अति क्रियाशीलता) – पाचन सम्बन्धी गड़बड़ी। इसका लक्षण है आमाशय एवं आँतों की पाचन ग्रंथियों द्वारा अम्ल का अति स्राव।

अंत:स्त्रावी ग्रंथियाँ (इण्डोक्राइन ग्लैण्ड) – ग्रंथियों का एक समूह, जिनसे सीधे रक्त-प्रवाह में हार्मोन स्त्रावित होते हैं। ये ग्रंथियाँ शरीर के आंतरिक रासायनिक वातावरण की प्रमुख नियंत्रक हैं।

क्रॉनिक (दीर्घकालीन) – लम्बे समय तक निरन्तर चलने वाला।

कोलेस्टरॉल – शरीर द्वारा उत्पादित एक कार्बनिक पदार्थ जिसे हम वसायुक्त भोजन के माध्यम से ग्रहण करते हैं। साधारणत: यह पित्त, मस्तिष्क, रक्त तथा जन्तु-ऊतकों में पाया जाता है।

कोशा (सेल) – समस्त पेड़-पौधों तथा जीव-जन्तुओं की सक्रिय जीवित इकाई का आधार। यह एक नाजुक झिल्ली से बना होता है जिसके भीतर प्रोटोप्लाज्म तथा न्यूक्लियस उपस्थित होते हैं।

ग्लाइकोजेनेसिस – शरीर में उपस्थित ग्लुकोज तथा अन्य शर्कराओं को ग्लाइकोजन में परिवर्तित करने की प्रक्रिया।

ग्लाइकोजेनोलिसिस – ग्लाइकोजन को ग्लुकोज तथा अन्य पदार्थों में बदलना (जैसे लेक्टिक एसिड)।

ग्लुकोकॉर्टिकॉयड हार्मोन – एड्रिनल कार्टेक्स द्वारा स्त्रावित हार्मोन का एक समूह जो रक्त में शर्करा के स्तर को बढ़ा देता है।

ग्लुकोज – कार्बोहाइड्रेट का मुख्य प्रकार है। शरीर में इसका संग्रह यकृत एवं ऊतकों द्वारा ग्लाइकोजन के रूप में किया जाता है।

गुरदे (किडनी) – आमाशय के पीछे स्थित अंग जो रक्त से अशुद्धियों को दूर करके मूत्र का स्त्राव करते हैं।

ग्लूकोनियोजेनेसिस – शरीर में प्रोटीन एवं वसा से ग्लुकोज का रासायनिक संश्लेषण।

ग्लैक्टोज – प्राकृतिक शर्करा जो मुख्य रूप से दूध में पाई जाती है। बचपन में इसका उपयोग विभिन्न प्रकार के स्नायु कोशाओं के निर्माण में होता है।

गैस्ट्रिक (जठर) – आमाशय से सम्बन्धित।

चयापचय (मेटाबॉलिज्म) – शरीर में विभिन्न पदार्थों के निर्माण एवं क्षय की संयुक्त प्रक्रिया।

ट्रापजियस मसल्स – गर्दन की मांसपेशियाँ।

टिशु फ्लुइड – शरीर के समस्त ऊतकों में प्रवाहित होने वाला द्रव। यह कोशाओं को आवश्यक पोषण प्रदान करता है तथा उनमें निहित अनावश्यक पदार्थों को निकालने में सहायता करता है। आपूर्ति और निष्कासन हेतु

शिराओं, धमनियों तथा लिम्फेटिक्स के अंतिम महीन छोर कैपेलरी साधन के रूप में प्रयुक्त किये जाते हैं।

डायफ्रॉम – छाती एवं पेट के मध्य मांसपेशियों से निर्मित अर्द्धचंद्राकार दीवार सदृश संरचना।

डायबिटीज मेलिटस – चयापचयी रोग है, रोग से ग्रस्त व्यक्ति आहार में उपस्थित शर्करा को इन्सुलिन की कमी के कारण पचा नहीं पाता।

डायस्प्नोइया – श्वसन प्रक्रिया में व्यक्तिगत कठिनाई। इसका सम्बन्ध हृदय तथा फेफड़ों के रोगों से होता है।

डिबिलिटी (दुर्बलता) – शारीरिक कमजोरी।

थायरॉयड ग्लैण्ड – गले में स्थित एक महत्त्वपूर्ण अंत:स्रावी ग्रन्थि। यह थायरॉक्सीन का स्राव करती है।

थायरोट्रोफिक हार्मोन - पिट्यूटरी ग्लैण्ड के अग्र भाग से स्रवित होने वाला हार्मोन है जो थायरॉयड ग्लैण्ड को उत्तेजित कर थायरॉक्सीन के स्राव हेतु बाध्य करता है।

थ्रेशोल्ड – न्यूनतम सीमा बिन्दु जिसका अतिक्रमण होने पर प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है।

तन्त्रिका-तन्त्र – नियंत्रक प्रणाली। इसके अन्तर्गत मस्तिष्क, मेरुदण्ड तथा अन्तरंग और बहिरंग स्नायु आते हैं। यह शरीर में मन का प्रतिनिधि है तथा जीवन के समस्त क्रियाकलापों को नियंत्रित करता है।

प्लमोनरी सरकुलेशन – यह रक्त-प्रवाह का सुनिश्चित मार्ग है। इसमें हृदय के दाहिने वेन्ट्रकल से रक्त प्रवाहित होता है और फेफड़ों में पहुँचता है। वहाँ रक्त में ऑक्सीजन का शोषण होता है तथा कार्बन-डाइ-ऑक्साइड उत्सर्जित की जाती है। तत्पश्चात् रक्त पुन: हृदय के बायें ऑट्रियम में वापस आ जाता है।

पिट्यूटरी ग्लैण्ड (पीयूष-ग्रन्थि) – मध्य मस्तिष्क में स्थित छोटी सी अंत:स्रावी ग्रंथि है। यह कुछ ऐसे हार्मोन का स्राव करती है जो अन्य ग्रंथियों की कार्य-प्रणाली का निर्धारण करते हैं। इसे अंत:स्रावी ग्रंथियों में सबसे महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

पैक्टोरल ब्रीदिंग – छाती के संकुचन एवं प्रसारण द्वारा श्वसन।

परानुकम्पी तन्त्रिका-तन्त्र – ऑटोनॉमिक नर्वस सिस्टम का एक भाग जो शारीरिक क्रियाकलापों को मंद करता है।

पैंक्रियाज (अग्न्याशय) – दीर्घ ग्रंथि सदृश रचना जो पाचक (एन्जाइम्स) स्त्रावित कर आँतों में भेजती है तथा इन्सुलिन को रक्त-प्रवाह में भेजती है।
प्रोटीन – जटिल कार्बनिक यौगिकों का समूह जिसमें एमिनो अम्ल पाया जाता है। यह शरीर निर्माण के लिए आधारभूत आवश्यकता है। शरीर में इन्हें या तो विघटित कर कार्बोहाइड्रेट में बदल दिया जाता है या कार्बोहाइड्रेट को संश्लेषित कर इसका निर्माण किया जाता है।
फ्रक्टोज – फलों में पाई जाने वाली शर्करा। यह सभी प्राकृतिक मीठे भोज्य-पदार्थों में पाई जाती है।
फाइब्रिलाशन (तन्त्रु-विकम्पन) – अनियमित पेशीय मरोड़। प्राय: हृदय में उत्पन्न होता है।
फेफड़े – छाती के आंतरिक हिस्से में उपस्थित दो प्रमुख श्वसन अंग। इनमें असंख्य वायुकोश होते हैं।
फेस्टर – संक्रमित होना।
मेड्यूला – किसी अंग का मध्य भाग।
मेड्यूला ऑब्लॉन्गटा (मेरु रज्जू-शीर्ष) – मस्तिष्क में मेरुदण्ड का परिवर्द्धित अंश। यह करीब एक इंच लम्बा बेलनाकार तथा ऊपरी छोर पर परिवर्द्धित होता है।
मधुवशि ग्रंथियाँ (आइसलेट ऑफ लंगरहेन्स) – कोशाओं का एक समूह जो पैंक्रियाज के पुच्छ में पाया जाता है। इनके द्वारा ही इन्सुलिन स्त्रावित करके रक्त में भेजा जाता है।
रेटिकुलर फॉर्मेशन – मस्तिष्क में स्थित महत्त्वपूर्ण स्नायु संगम केन्द्र। यह प्रमुख रूप से जागृति, सतर्कता, निद्रा, भावनात्मक अभिव्यक्ति, शारीरिक स्थिति का नियमन, मांसपेशीय स्वरूप तथा अनैच्छिक अंतरंग प्रक्रियाओं से संबंधित है।
लिम्फ – रंगहीन क्षारीय द्रव। इसका कार्य उन अनावश्यक पदार्थों को संगृहीत करना है जिनका संग्रह रक्त-प्रवाह नहीं कर पाता।
लिम्फेटिक – लिम्फ से भरा पात्र।
लिवर (यकृत) – पेट के ऊपरी दाहिने भाग में स्थित आंतरिक अंग है। यह पित्त का निर्माण करता है तथा ग्लुकोज एवं लेक्टिक एसिड को ग्लाइकोजन में बदलता है। यह ग्लाइकोजन का संग्रह भी करता है तथा आवश्यकता पड़ने पर पुन: इसको ग्लुकोज व लेक्टिक एसिड में बदल देता है।

वसा (फैट) – ग्लिसरॉल तथा वसीय अम्लों से युक्त एक कार्बनिक पदार्थ। यह पशुओं से प्राप्त भोज्य पदार्थ, वनस्पति तेल या मनुष्यों और पशुओं में उपस्थित एक अति नरम ऊतक में स्थित प्रमुख पदार्थ है। मानव शरीर में वसा को कार्बोहाइड्रेट में और कार्बोहाइड्रेट को वसा में परिवर्तित करने की क्षमता होती है। (ग्लुकोनियोजेनेसिस देखिये)।

वेगस नर्व – सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नाड़ी। यह मानव शरीर के सभी अंतरंग अंगों तक मस्तिष्क के निर्देशों को पहुँचाने का कार्य करती है। जब यह उत्तेजित होती है तो शरीर में इन्सुलिन के उत्पादन को बढ़ाकर रक्त में शर्करा की मात्रा को कम कर देती है।

श्लेष्म (म्यूकस) – शरीर में निहित कुछ विशिष्ट झिल्लियों द्वारा स्रावित चिकना पदार्थ। यह उन झिल्लियों को आर्द्र बनाए रखता है तथा आंतरिक अंगों को विभिन्न संक्रमणों से बचाता है।

शर्करा (शुगर) – कार्बोहाइड्रेट का वृहद् समूह जो कोशाओं के निर्माण एवं रख-रखाव में मदद करता है तथा शरीर द्वारा मांसपेशीय क्रियाकलापों हेतु शक्ति-प्रवाहित हेतु उपयोग में लाया जाता है।

अधस्त्वक (सबक्यूटेनियस) – त्वचा के ठीक नीचे स्थित होते हैं।

सलाइन – नमकीन।

स्फिक्टर मसल्स – पाचन नली में विभिन्न स्थानों पर स्थित वाल्व जो कि पाचन संस्थान में पाचन क्रिया के दौरान भोज्य पदार्थों को एक भाग से दूसरे भाग में आने-जाने को नियंत्रित करते हैं।

सिक्रिशन्स – किसी ग्रंथि द्वारा शरीर में स्रावित कोई भी पदार्थ।

सिरोअस ग्लैण्ड – विश्रामावस्था में म्यूकस ग्रंथियाँ। इससे पतले तरल द्रव का उत्पादन होता है।

सोमेट्रोफिक हार्मोन (ग्रोथ हार्मोन) – यह पिट्यूटरी ग्लैण्ड के अग्र भाग से स्रावित होता है। यह हड्डियों तथा शरीर की साधारण वृद्धि की गति को बढ़ाने का कार्य करता है। इससे प्रोटीन संश्लेषण में वृद्धि होती है तथा शरीर में निहित वसा टूटती है। यह रक्त में शर्करा के स्तर को बढ़ाता है। इस हेतु यह ग्लुकोज की संश्लेषण दर को बढ़ाता है तथा मांसपेशियों की ग्लुकोज उपभोग दर को घटाता है।

सेप्टम – पतली पेशीय दीवार जो दो कोशों को विभाजित करती है।

हाइपरट्रॉफी – अति वृद्धि। साधारणतः किसी अंग विशेष का अति विकसित हो जाना।

अधश्चेतक (हाइपोथेलेमस) – मध्य मस्तिष्क का अति महत्त्वपूर्ण अंग जो महत्त्वपूर्ण आंतरिक अंगों पर नियंत्रण रखने का कार्य करता है। ऐसा माना जाता है कि यह मानव शरीर और मन के बीच सक्रिय सम्बन्ध बनाए रखने वाला अंग है।

हार्मोन – विभिन्न ग्रंथियों द्वारा निर्मित रसायनों का समूह। ये रसायन अनेक शारीरिक अंगों के क्रियाकलापों तथा शारीरिक चयापचय को नियन्त्रित करते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

दमा-एक समग्र उपचार विधि

1. फोर्ड, एम., "एन एलर्जिस्ट लुक एट अस्थमा", मॉर्डन मेडिसिन ऑस्ट्रेलिया, अक्टू. 1979, 22 (10) : 23-25
2. लोवेन, ए. द बेट्रेयल ऑफ द बॉडी, कोलियर, एन.वाई., 1967.
3. कोहेन, एस.आई., "साइकोलॉजिकल फैक्टर्स" इन क्लर्क, टी.जी.एच. एण्ड गॉडफ्रे, एस., अस्थमा, शेम्पेन एण्ड हॉल, लन्दन, 1977.
4. ग्रोएन, जे.जे., "द साइकोसोमेटिक थ्योरी ऑफ ब्रोंकिएल अस्थर्मा", चौथी अन्तर्राष्ट्रीय काँग्रेस ऑफ इन्ट. कोल. ऑफ साइकोसोम. मेडि., क्योटो, जापान, सितम्बर 1977 में प्रस्तुत प्रतिवेदन।
5. गोयेके, जे.आर.एम., "अस्थमा : द यौगिक पर्सपेक्टिव, पार्ट 1 : द सोमेटोसाइकिक इम्बेलेन्स इन अस्थमा : टूवर्ड्स ए होलिस्टिक थेरेर्पी", एफ. अस्थमा रेस., अप्रैल 1980, 17 (3):111-121, पेज 111.
6. गोयेके, जे.आर.एम., "अस्थमा : द यौगिक पर्सपेक्टिव, पार्ट 11 : यौगिक थेरेपी इन द ट्रीटमेन्ट ऑफ अस्थर्मा", इ. अस्थमा., 1982, 19 (3):189-201, पेज 193.

मधुमेह पर शोध

1. हेरिस, जे.ए., "रलेक्सेशन ट्रेनिंग एज ए स्ट्रेस रिड्यूसिंग टेक्नीक फॉर परसन्स विथ डाइबिटीर्ज", डिसर्टेशन्स एब्स्ट. इन्ट., 1981, 41(9):3573.
2. "एक्सरसाइज थेरेपी 'रिडिस्कवर्ड' फॉर डाइबिटीज, बट वाट डस इट डू?", जे ए एम ए, अक्टू. 12, 1979, 242 (15):1591-1592.

3. पाकोर्डी, के., एट एल, "कम्परेटिव स्टडीज ऑन योग, मेडिटेशन एण्ड एक्सरसाइर्ज", वालन्टरी हेल्थ सर्विसेज मेडिकल सेन्टर, अदयार, मद्रास से अप्रकाशित पत्र।

निदान गृह परीक्षण

4. टण्डन, एम.के., "एडजंक्ट ट्रीटमेन्ट विथ योगा इन क्रोनिक, सीवर एयरवेस ऑबस्ट्रक्शर्न", थोरेक्स, 1978, 33:514-517.
5. दिवेकर, एम.वी., योगा अवेयरनेस, जुलाई 1971, 1(1).
6. मेहता, जे.एम., एण्ड कुरुलकर, एल.एन., "योगा : द की टू साइकोसोमेटिक्र्स", क्योतो, जापान में सितम्बर 5-9, 1977 को इन्टरनेशनल कॉलेज ऑफ साइकोसोमेटिक मेडिसिन की चौथी कांग्रेस में पढ़ा गया पत्र, जो बाद में प्रकाशित हुआ, पेज 141.

योग की कार्यविधि

1. उदुपा, के.एन., सिंग, आर.एच., शेट्टिवार, आर.एम., "स्टडीज ऑन साइकोलॉजिकल, इन्डोक्राइन एण्ड मेटाबोलिक रिस्पॉन्सेस टू प्रैक्टिस ऑफ योगा इन यंग नार्मल वालन्टीयर्स", जे.रेस.इन्ट.मेडि., 1971, 6(3):345-353.
2. उदुपा, के.एन., सिंग, आर.एच., शेट्टिवार, आर.एम., "स्टडीज ऑन द इफैक्ट ऑफ सम यौगिक ब्रीदिंग एक्सरसाइसेस (प्राणायाम) इन नार्मल परसन्स'", इन्ड.जे.मेडि.रेस., 1975, 63(8):1062-1065.
3. नायर, एच.एस., सेवामूर्ति, डब्लू. जोसेफ, एन.टी. जोसेफ, एस.चौहान, आई.एस., "इफैक्ट ऑफ यौगिक प्रैक्टिसेस ऑन साइकोलॉजिकल एण्ड बायोकेमिकल प्रोफाइल इन मैन", डिफेन्स इन्स्टीट्यूट ऑफ फिजिकल एण्ड एलायड साइन्सेज, दिल्ली केन्ट।
4. गोपाल, के.एस., नटराजन, ए. रामकृष्णन, एस., "बायोकेमिकल स्टडीज इन फॉरेन वालन्टीयर्स प्रैक्टिसिंग हठ योग", जे.रेस.इन्ड.मेडि., 1974, 9(3):1-8.

वर्ण क्रमानुसार अभ्यास सूची

नोट

नोट



स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का जन्म उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा ग्राम (उत्तरांचल) में सन् 1923 की मार्गशीर्ष पूर्णिमा को हुआ। उनमें बाल्यावस्था से ही आध्यात्मिक जीवन के प्रति झुकाव था और विलक्षण प्रतिभाएँ परिलक्षित होती थीं। 18 वर्ष की अवस्था में उन्होंने गुरु की खोज में घर छोड़ दिया। 1943 में उन्हें ऋषिकेश में अपने गुरु स्वामी शिवानन्द के दर्शन हुए। 12 सितम्बर 1947 को गुरु ने उन्हें परमहंस संन्यास में दीक्षित किया। वे 12 वर्ष गुरु की सेवा में रहे और आध्यात्मिक जीवन के हर आयाम में दक्षता प्राप्त की। तत्पश्चात् उन्होंने परिव्राजक संन्यासी के रूप में आठ वर्षों तक सम्पूर्ण भारत, अफगानिस्तान, बर्मा, नेपाल एवं श्रीलंका का भ्रमण किया। इस अवधि का उपयोग उन्होंने यौगिक तकनीकों को प्रतिपादित एवं परिष्कृत करने में किया, ताकि मानवता को कष्टों से त्राण मिल सके।

योग की प्राचीन पद्धति को आधुनिक विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने की आवश्यकता का अनुभव होने पर उन्होंने 1956 में अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल एवं 1963 में बिहार योग विद्यालय की स्थापना की। अगले 20 वर्षों तक विश्व भ्रमण करते हुए उन्होंने योग की पताका विश्व के कोने-कोने में फहरा दी और बिहार योग विद्यालय को योग की एक अग्रगण्य संस्था के रूप में ख्याति दिलायी। उन्होंने योग, तंत्र एवं आध्यात्मिक जीवन पर अस्सी से अधिक ग्रन्थों का प्रणयन किया।

'सत्यानन्द योग' एक ऐसी परम्परा बन गयी, जिसमें शास्त्रीय और अनुभवात्मक ज्ञान तथा आधुनिक दृष्टिकोण का सुन्दर समन्वय है। ग्राम्य-विकास की भावना से 1984 में उन्होंने दातव्य संस्था 'शिवानन्द मठ' की एवं योग पर वैज्ञानिक शोध की दृष्टि से 'योग शोध संस्थान' की स्थापना की। सन् 1988 में उपलब्धियों के शिखर पर पहुँचकर उन्होंने सबकुछ त्याग दिया और क्षेत्र संन्यास लेकर परमहंस संन्यासी की जीवन पद्धति अपना ली। सन् 1989 में उन्हें रिखिया आने का दैवी आदेश हुआ, यहाँ उन्होंने एकान्तवास करते हुए उच्च वैदिक साधनाएँ कीं। सन् 1991 में अपने पड़ोसियों को सुविधाएँ उपलब्ध कराने का आदेश मिलने पर उन्होंने आश्रम को उस क्षेत्र के अभावग्रस्त ग्रामीणों की सहायता करने की अनुमति दी। सन् 1995 में उन्होंने वैश्विक सुख, शान्ति एवं समृद्धि का संकल्प लेकर बारह वर्षीय राजसूय यज्ञ आरम्भ किया और सन् 2007 में 'सेवा, प्रेम और दान' को अपनी मुख्य गतिविधि बनाने का आदेश देकर रिखियापीठ की स्थापना की घोषणा की।

स्वामी सत्यानन्द 5 दिसम्बर 2009 की मध्यरात्रि में अपने शिष्यों की उपस्थिति में महासमाधि में लीन हो गये।



योग चिकित्सा-पद्धति की विशेषता यह है कि इसमें रोग के बाद पुनः स्वास्थ्य-लाभ के साथ ही जीवन को एक नयी दिशा के रूप में आध्यात्मिक मोड़ भी मिलता है। व्यक्ति को आनन्दमय जीवन जीने के लिए अपनी जीवनशैली में परिवर्तन कर एक नियमित कार्यक्रम अपनाना होता है। दमा और मधुमेह के योग द्वारा उपचार के लिए स्वामी सत्यानन्द सरस्वती द्वारा प्रयोग सिद्ध योग पद्धति का विस्तृत विवेचन एवं व्यावहारिक प्रशिक्षण हम इस पुस्तक में प्रस्तुत कर रहे हैं।



[bar code here]

ISBN :978-81-85787-48-0